महाकवि दण्डिकृत

दशकुमारचरितम्

(पूर्वपीठिका)

सम्पादकः—

डॉ० बाबूराम पाण्डेय
अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग
डी. ए. वी. कॉलेज—कानपुर

प्रकाशक—
तीय-प्रकाशन, चौक, कानपुर

दशकुमारचरितम्

(पूर्वपीठिका)

सम्पादक

डॉ० बाबूराम पाण्डेयः

अध्यक्ष, संस्कृत-विभाग

डी० ए० वी० कालेज, कानपुर ।

व्याख्याकार

डॉ० रामभरोसे शास्त्री

प्रवक्ता संस्कृत-विभाग,

कर्मक्षेत्र महाविद्यालय, इटावा ।

भूमिका लेखक

प्रो० राधाकान्त पाण्डेय

एम० ए०, साहित्याचार्य,

रिसर्चस्कॉलर ।

प्रकाशक—

भारतीय प्रकाशन, चौक, कानपुर

प्रकाशकः—

भारतीय प्रकाशन

चौक—कानपुर

प्रथम : संस्करण १९७५

मूल्य : ४·००

मुद्रकः—

नर्मदा प्रेस,

ए० २/७९ त्रिलोचनघाट,

वाराणसी।

निवेदन
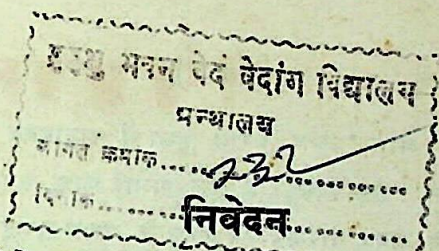
सुरभारती के सुपुत्र, वाणी के विलास, गद्य-काव्य-कलाधर, यशःपूत महाकवि दण्डी से प्रायः सभी सुविज्ञ संस्कृत साहित्यानुरागी जन सुपरिचित हैं। गद्य-काव्यसम्राट् महाकवि बाण के अतिरिक्त अन्य कोई गद्यकाव्य-प्रणेता इनकी समता में नहीं आता। दण्डी का 'काव्यादर्श' काव्यशास्त्र के ग्रन्थों में अत्यन्त लोकप्रिय रहा है और इनका 'दशकुमारचरितम्' संस्कृत गद्यकाव्य का समुज्ज्वल हीरक है। दण्डी के काव्य के सम्बन्ध में 'दण्डिनः पदलालित्यम्' सूक्ति सुप्रसिद्ध ही है। अतः विश्वविद्यालयीय संस्कृत-विद्यार्थियों को दण्डी के रचनाकौशल से सुपरिचित कराने के उद्देश्य से 'दशकुमारचरितम्' की पूर्वपीठिका को कानपुर वि० वि० की बी० ए० की परीक्षा के पाठ्यक्रम में रखा गया है। किन्तु 'दशकुमारचरित' की अद्यावधि कोई छात्रोपयोगिनी सुबोध टीका उपलब्ध नहीं थी, जिससे छात्र परीक्षार्थ निश्चिन्तता का अनुभव कर सकें। इस अभाव को लक्षित करके मैंने अपने मेधावी सुयोग्य शिष्य श्री रामभरोसे शास्त्री, संस्कृत प्राध्यापक कर्मक्षेत्रमहाविद्यालय, इटावा से इसकी सुबोध संस्कृत-हिन्दी व्याख्या प्रस्तुत करने को कहा और उन्होंने मेरे निर्देशन एवं पर्यवेक्षण में बड़े परिश्रम से इस कार्य को पूर्ण किया। ग्रन्थ की भूमिका-प्रणयन में मेरे प्रेष्ठ एवं सुयोग्य शिष्य श्री राधाकान्त पाण्डेय, संस्कृत प्राध्यापक व्यास इण्टरकालेज कालपी का महनीय सहयोग सराहनीय रहा है। वरिष्ठ शिष्य श्री भानुदत्त त्रिपाठी (मधुरेश) से भी सहयोग प्राप्त हुआ है। मैं इन सुयोग्य एवं विनीत शिष्यों के उज्ज्वल भविष्य की हार्दिक कामना करता हूँ। इसके अतिरिक्त जिन-जिन प्राचीन आचार्यों एवं टीकाकारों की कृतियों का ग्रन्थ में उपयोग किया है, उन सबके प्रति

कृ...ता के साथ आभार व्यक्त करता हुआ मैं श्रद्धावनत हूँ। अन्त में भारतीय प्रकाशन, चौक-कानपुर के प्रति आभार व्यक्त करना मेरा पावन कर्तव्य है जिनके अथक परिश्रम एवं लगन से उत्तम छपाई के साथ ग्रन्थ शीघ्रता से छात्रों के समक्ष आ सका है। प्रकाशन की शीघ्रता के कारण यत्र-तत्र रही हुई अशुद्धियों और त्रुटियों के लिए हम विद्वज्जनों से क्षमा प्रार्थी हैं और अनुरोध करते हैं कि वे पुस्तक की त्रुटियों, अशुद्धियों एवं न्यूनताओं के सम्बन्ध में कृपापूर्वक हमें सूचित करते रहें, ताकि अगले संस्करण में पुस्तक को और अधिक उपयोगी बनाया जा सके।

विदुषां विधेयः

बाबूराम पाण्डेय

रीडर एवं अध्यक्ष संस्कृत-विभाग

डी० ए० वी० कालेज, कानपुर।

गुरुपूर्णिमा सं० २०३२

(जुलाई १९७५)

भूमिका

काव्य का स्वरूप और उसके भेद-प्रभेद

मानव संवेदनशील प्राणी है। उसके आस-पास का वातावरण एवं परिस्थितियां उसके मन को प्रभावित करके भावों तथा विचारों को जन्म देती हैं, जिन्हें वह शब्दों के माध्यम से अभिव्यक्त करता है। सामान्य व्यक्ति किसी बात को साधारण ढंग से कह देता है, पर कवि निजवैशिष्ट्य और प्रतिभा के कारण उस कथन को इस रूप में प्रस्तुत करता है कि उसका प्रभाव श्रोता या दर्शक पर तत्काल होता है। उसके शब्दचयन में चमत्कार तथा अद्भुत विलक्षणता होती है। कवि प्रजापति है, संसार को ढालने वाला है, कवि की रुचि के अनुकूल ही उसकी सृष्टि बन जाती है।

असारे काव्यसंसारे कविरेव प्रजापतिः।
यथास्मै रोचते विश्वं तथेदं परिवर्त्तते ।। अग्निपुराण ३३९।१०

काव्य शब्द का सम्बन्ध कवि शब्द से है और व्याकरण की दृष्टि से कवि का भाव या कर्म ही काव्य कहलाने का अधिकारी है। कवेरिदं (कर्म भावो वा) काव्यम्। कोष ग्रन्थों में कवि शब्द की व्युत्पत्ति इस प्रकार मिलती है—कवते सर्वं जानाति सर्वं वर्णयति सर्वं सर्वतो गच्छति वा। यों तो कवि शब्द भारतीय साहित्य में बड़े ही व्यापक अर्थ में प्रयुक्त किया गया है। निरुक्तकार महर्षि यास्क ने "कवयः क्रान्तदर्शिनः" कहकर स्पष्ट क्रान्तदर्शी के रूप में स्मरण किया है। गीता में इसे एक विशेषवेत्ता के रूप में स्मरण किया गया है। 'कवयोऽप्यत्र मोहिताः' गीता ४।१६ 'संन्यासं कवयो विदुः' गीता १६।२। अमरकोषकार ने 'संख्यावान् पण्डितः कविः' कहकर पण्डित के अर्थ में रखा है। वैदिकवाङ्मय में इसे 'स्वयम्भू' के रूप में स्मरण किया है।

आचार्यों ने शब्द और अर्थ को काव्य का शरीर कहा है। वे दोनों अभिन्न से हैं। पण्डितराज जगन्नाथ को छोड़कर प्रायः सभी आचार्य शब्द और अर्थ दोनों को काव्य मानते हैं।

शब्दार्थौ सहितौ काव्यं गद्यं पद्यं च तद् द्विधा —काव्यालङ्कार १।१६
अदोषौ सगुणौ सालङ्कारौ च शब्दार्थौ काव्यम् —काव्यानुशासन
तददोषौशब्दार्थौ सगुणावनलङ्कृती पुनः क्वापि —काव्यप्रकाश

अग्निपुराण में काव्य की परिभाषा इस प्रकार मिलती है—

संक्षेपाद् वाक्यमिष्टार्थव्यवच्छिन्ना पदावली ।
काव्यं स्फुरदलङ्कारं गुणवद्दोषवर्जितम् ।।अग्निपुराण ३३७।६०७

संक्षेप में इष्ट को प्रकट करने वाली पदावली से युक्त ऐसा वाक्य काव्य है जिसमें अलङ्कार प्रकट हो और जो दोषरहित और गुणयुक्त हो। इस परिभाषा से काव्य की वाह्य रूप-रेखा स्पष्ट हो जाती है।

भामह ने काव्य का लक्षण इस प्रकार दिया है - "शब्दार्थौ सहितौ काव्यम्। गद्यं पद्यं च तद् द्विधा।" इस लक्षण में शब्द और अर्थ के सहभाव को काव्य माना गया है। भामह का सहितौ का क्या अर्थ है, इसको उन्होंने स्पष्ट नहीं किया।[1] अतः इस काव्य लक्षण से काव्य के वास्तविक स्वरूप का ज्ञान नहीं होता। यही कारण है कि परवर्ती आचार्यों ने वाह्य-स्वरूप निरूपक काव्य लक्षणों को न अपनाकर काव्य की आत्मा पर विचार किया। जयदेव और भोज का काव्य लक्षण भी वाह्य स्वरूप निरूपक हीा है।

निर्दोष लक्षणवती सरीतिर्गुणगुम्फिता (भूषिता)।
सालङ्कार रसानेक वृत्तिर्वाक् काव्यनामभाक् ।। चन्द्रालोक १।७
निर्दोषं गुणवत्काव्यमलङ्कारैरलङ्कृतम्।
रसात्मकं कविः कुर्वन् कीर्तिं प्रीतिं च विन्दति ।। सरस्वती क० १।२

भामह के जिस सहितौ पद की व्याख्या नहीं थी, उस कमी को पूरा करने का प्रयत्न दण्डी ने किया।

शरीरं तावदिष्टार्थव्यवच्छिन्नापदावली ।। काव्यादर्श १।१०

इष्टार्थ को प्रकट करने वाली पदावली तो शरीरमात्र है। आनन्दवर्धन का भी यही मत है—शब्दार्थ शरीरं तावत्काव्यम्।

---

१. 'सहितौ से तात्पर्य संभवतः परस्पर उपकारी 'परस्परोपकारिणौ चमत्कारकारिणौ इति भावः होने से है। कुछ लोग 'लोक का मङ्गल करने वाले' ऐसा अर्थ भी करते हैं 'हितेन सह इति सहितौ'।

काव्य के भेद—इन्द्रियों को प्रभावित करने के आधार पर काव्य के दो भेद किये गये हैं—दृश्य और श्रव्य। दृश्य काव्य में श्रवणपथ से शब्दों के द्वारा तथा नेत्रपथ से देखे जाने वाले दृश्यों द्वारा दर्शकों के हृदय में रस का सञ्चार किया जाता है। श्रव्य का प्रयोग सम्भवतः उस काल से किया जाता है। जब छापे के अभाव में लोगों के समक्ष काव्य-ग्रन्थ सुनाये जाते थे। दृश्य काव्य में रूपक तथा उपरूपक का ग्रहण होता है। ये अभिनेय होते हैं। अभिनेता अभिनय की अवस्था में अपने ऊपर नाटकीय पात्र के स्वरूप का आरोप कर लेता है। अतः नाटक को रूपक कहा जाता है।

श्रव्यकाव्य में शब्दों द्वारा चाहे वे स्वयं पढ़े जायें अथवा अन्य के मुख से श्रवण किये जायें, पाठकों तथा श्रोताओं के हृदय में रसका सञ्चार होता है। श्रवण योग्य रसात्मक वाक्य श्रव्यकाव्य है। इस श्रव्यकाव्य के पद्य और गद्य दो भेद हैं। पद्यात्मक काव्य वह है जिसके पद छन्दोबद्ध हुआ करते हैं। वह पद्यात्मक काव्य तीन प्रकार का होता है।

(१) महाकाव्य (२) खण्डकाव्य (३) उपकाव्य।

महाकाव्य—सर्गबन्धो महाकाव्यं तत्रैको नायकः सुरः ॥
सद्वंशः क्षत्रियो वापि धीरोदात्तगुणान्वितः।
एकवंशभवा भूपाः कुलजा बहवोऽपि वा ॥
शृङ्गारवीरशान्तानामेकोऽङ्गी रस इष्यते।
अङ्गानि सर्वेऽपि रसाः सर्वे नाटकसन्धयः ॥ इत्यादि

यथा—रघुवंश, कुमारसम्भव, शिशुपालवधादि—

खण्डकाव्य—खण्डकाव्यं भवेत्काव्यस्यैकदेशानुसारि च।

यथा—मेघदूत, ऋतुसंहार आदि।

उपकाव्य—गीततालानुविद्धं यदुपकाव्यमितीष्यते।

यथा—गीतगोविन्द आदि उपकाव्य है।

पद्य के छः भेद होते हैं—मुक्तक, युगलक, गुणवती, प्रभद्रक, बाणावली और करहाटक। इनके लक्षण इस प्रकार हैं।

एकः श्लोको मुक्तकं स्याद् द्वाभ्यां युगलकं स्मृतम् ।
त्रिभिर्गुणवती प्रोक्ता चतुर्भिस्तु प्रभद्रकम् ।
बाणावली पञ्चभिः स्यात् षड्भिस्तु करहाटकः ।

आचार्य विश्वनाथ इसके पांच ही भेद मानते हैं—मुक्तक, युग्मक, सान्दानितक (विशेषक या तिलक), कपालक (चक्कलक) और कुलक ।

छन्दोबद्धपदं पद्यं तेन मुक्तेन मुक्तकम् ।
द्वाभ्यां तु युग्मकं सान्दानितकं त्रिभिरिष्यते ।
कपालक चतुर्भिश्च पञ्चभिः कुलकं मतम् ।।

गद्य वह शब्दार्थ योजना है जो छन्दोबद्ध न हो । गद्य चार प्रकार का होता है । (१) मुक्तक (२) वृत्तगन्धि (३) उत्कलिकाप्राय और (४) चूर्णक ।

वृत्तगन्धोज्झितं गद्यं मुक्तकं वृत्तगन्धि च ।
भवेदुत्कलिकाप्रायं चूर्णकं च चतुर्विधम् ।।

(१) मुक्तक वह गद्य बन्ध है जो असमस्त पदों में रचा जाता है ।

(२) वृत्तगन्धि वह गद्य प्रकार है जिसमें वृत्तों के अंश यत्र-तत्र प्रतीत हुआ करते हैं ।

(३) उत्कलिकाप्राय वह गद्य भेद है जो लम्बे-लम्बे समस्त पदों में रचा गया होता है । और

(४)चूर्णक वह गद्यरचना है जिसमें छोटे-छोटे समस्त पदों का उपनिबन्ध हुआ करता है ।

गद्य काव्य के पांच भेद होते हैं—आख्यायिका, कथा, खण्डकथा, परिकथा और कथालिका—

आख्यायिका कथा खण्डकथा परिकथा तथा ।
कथालिकेति मन्यन्ते गद्यकाव्यं च पञ्चधा ।। अग्निपुराण ३३६।१२

दण्डी आदि आचार्यों ने गद्यकाव्य के दो ही भेद किए है कथा और आख्यायिका—अत्रैवान्तर्भविष्यन्ति शेषाश्चाख्यानजातयः । काव्यादर्श १।२८

कथा और आख्यायिका

अग्निपुराणकार ने आख्यायिका, कथा, खण्डकथा, परिकथा एवं कथानिका नामक पांच भेदों का उल्लेख किया है—

आख्यायिका कथा खण्डकथा परिकथा तथा।

कथानिकेति मन्यन्ते गद्यकाव्यं पञ्चधा ॥ अग्निपुराण ३३६।१२

इनको देखने से ऐसा प्रतीत होता है कि इसके पूर्व इस प्रकार की रचनाएं समाज में हो रही होंगी, किन्तु आज समाज में कथा और आख्यायिका नामक दो ही विधाएं प्राप्त होतीं हैं। इनका पुष्ट प्रमाण पाणिनि की अष्टाध्यायी ४।२।६० सूत्र के ऊपर लिखित "आख्यानाख्यायिकेतिहास पुराणेभ्यश्च" कात्यायन (३०० ई० पू०) के इस वार्तिक से ज्ञात होता है। इसके अतिरिक्त महाभाष्य में भी इनकी चर्चा उपलब्ध होती है। वहाँ पर वासवदत्ता, सुमनोत्तरा एवं भैमरथी नामक आख्यायिकाओं का उल्लेख है। किन्तु आज ये उपलब्ध नहीं है। प्रियङ्गव और यवक्रीत आख्यानों का भी उल्लेख मिलता है।

रामिल और सोमिल की शूद्रक कथा भी समाज में प्रचलित रही होगी

तौ शूद्रककथाकारौ रम्यौ रामिलसौमिलो।

काव्यं ययोर्द्वयोरासीदर्धनारीश्वरोपमौ ॥ जल्हण।

वररुचि की चारुमती एवं श्री पालित की तरङ्गवती कथाएँ भी प्रचलित थीं। महाराज भोज ने स्वयं मनोवती और सातकर्णी हरण नामक कथाओं का उल्लेख किया है। महाकवि बाण ने बृहत्कथा और भट्टार हरिश्चन्द्र के गद्य की प्रशंसा की है।

पदबन्धोज्ज्वलो हारी कृतवर्णक्रमस्थितिः।

भट्टार हरिचन्द्रस्य गद्यबन्धो नृपायते ॥ हर्षचरित १२।

समुद्दीपितकन्दर्पा कृतगौरीप्रसाधना।

हरिलीलेव नो कस्य विस्मयाय बृहत्कथा ॥ हर्षचरित १७।

यद्यपि आज ये कथाएं उपलब्ध नहीं हैं किन्तु इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि इनकी एक अविच्छिन्न परम्परा अति पुरातनकाल से समाज में चली आ रही थी। भामह एवं दण्डी के पूर्व ही इनकी सत्ता थी, जिनको आधार मानकर इन लोगों ने अपने लक्षण निर्धारित किए थे।

समाज में कथा और आख्यायिका का ही स्पष्ट रूप था। अतः इन्हीं के लक्षणों पर विचार-विमर्श हुआ। प्रथमतः अग्निपुराण के अनुसार आख्यायिका में कर्त्ता के वंश की प्रशंसा, कन्याहरण, संग्राम, नायक एवं नायिका की वियोगवर्णना, उच्छ्वासों में विभाजन, वक्त्र तथा अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग एवं चूर्णक प्रकार का गद्य होना चाहिए।

कर्तृ-वंश-प्रशंसास्याद् यत्र गद्येन विस्तरात्।
कन्याहरण - संग्राम - विप्रलम्भ - विपत्तयः ॥
भवन्ति यत्र दीप्ताश्च रीतिवृत्तिवृत्तयः।
उच्छ्वासैश्च परिच्छेदो यत्र या चूर्णकोत्तरा।
वक्त्रं चापवक्त्रं वा यत्र साख्यायिका स्मृता ॥

अग्निपुराण ३३६।१२-१५

इसके अतिरिक्त कथा में कवि अपने वंश की प्रशंसा संक्षेप में स्वयं करता है। प्रमुख कथा के लिए गौण कथा का आश्रय लेता है। कन्याहरण, संग्राम आदि का अभाव तथा विषय-विभाजन लम्बकों में किया जाता है तथा चतुष्पदी पद्यों का प्रयोग किया जाता है।

श्लोकैः स्ववंशं संक्षेपात् कविर्यत्रप्रशंसति।
मुख्यार्थस्यावताराय भवेद् यत्र कथान्तरम् ॥
परिच्छेदो न यत्र स्याद् भवेद् वा लम्बकैः क्वचित्।
सा कथा नाम तद्गर्भे निबध्नीयात् चतुष्पदीम् ॥

अग्निपुराण ३३६।१५-१७

भामह के अनुसार आख्यायिका में सुन्दर शकचयन, भावी घटनाओं के सूचक श्लोक, वक्त्र और अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग, नायक के द्वारा कथानक का कथन, कन्याहरण एवं संग्राम आदि का वर्णन होना चाहिए। इसके विपरीत कथा में वक्त्र एवं अपवक्त्र छन्दों का भाव, विषय-विभाजन का उच्छ्वासों में अभाव, नायक द्वारा स्वयं कथानक का न कहा जाना, संस्कृत अथवा अपभ्रंश में इसे लिखा जाना आदि इसकी विशेषताएं हैं।

संस्कृतानाकुलश्रव्य शब्दार्थपदवृत्तिना ।
गद्येन युक्तोदात्तार्था सोच्छ्वासाऽऽख्यायिका मता ॥ १।२५
वृत्तमाख्यायते तस्यां नायकेन स्वचेष्टितम् ।
वक्त्रं चापरवक्त्रं च काले भाव्यर्थशंसि च ॥ १।२६
कवेरभिप्रायकृतैः कथनैः कैश्चिदङ्किता ।
कन्याहरणसंग्रामविप्रलम्भोदयान्विता ॥ १।२७
न वक्त्रापरवक्त्राभ्यां युक्ता नोच्छ्वासवत्यपि ।
संस्कृताऽसंस्कृता चेष्टा कथापभ्रंशभाक्तथा ॥ १।२८
अन्यैः स्वचरितं तस्यां नायकेन तु नोच्यते ।
स्वगुणाविष्कृतिं कुर्यादभिजातः कथं जनः ॥ १।२९

(काव्यालङ्कार)

आचार्य दण्डी ने स्पष्टतया उपर्युक्त लक्षणों का विरोध किया। इनका कथन है कि ये लक्षण पूर्णरूप से किसी पर भी चरितार्थ नहीं होते हैं। केवल नाममात्र का ही भेद है।

इति तस्य प्रभेदो द्वौ तयोराख्यायिका किल ॥ १।२४
नायकेनैव वाच्यान्या नायकेनेतरेण वा ।
स्वगुणाविष्क्रियादोषो नात्र भूतार्थशंसिन. ॥ १।२५
अपित्वनियमो दृष्टस्तत्राप्यन्यैरुदीरणात् ।
अन्यो वक्ता स्वयं वेति कीदृग्वा भेद-कारणम् ॥ १:२६
वक्त्रं चापरवक्त्रं च सोच्छ्वासत्वं च भेदकम् ।
चिह्नमाख्यायिकायाश्च प्रसंगेन कथास्वपि ॥ १।२७
आर्यादिवत् प्रवेशः किं न वक्त्रापरवक्त्रयोः ।
भेदश्च दृष्टो लम्भादिरुच्छ्वासोवास्तु किं ततः ॥ १।२८
कन्याहरण संग्राम विप्रलम्भोदयादयः ।
सर्गबन्धसमा एव नैते वै शेषिका गुणाः ॥ १।२९
कविभावकृतं चिह्नमन्यत्रापि न दुष्यति ।
मुखमिष्टार्थसंसिद्धौ किं न स्यात् कृतात्मनाम् ॥ १।३०

काव्यादर्श १।२४–३०

अमरकोष के अनुसार आख्यायिका की कथावस्तु ऐतिहासिक तथा सत्य के धरातल पर आरूढ़ होती है जब कि कथा कविकल्पना-प्रसूत होती है। यह परिभाषा हर्षचरित और कादम्बरी पर पूर्णतया चरितार्थ होती है।

आचार्य रुद्रट ने कथा और आख्यायिका में मौलिक परिवर्तन किए। उनके आधार पर कथा के प्रारम्भ में गुरु एवं देवताओं की वन्दना होनी चाहिए तथा स्वकीय-वंश-वर्णना भी अपेक्षित है। अनुप्रासयुक्त भाषा नगरादि का वर्णन भी होना चाहिए। प्रारम्भ में कथान्तर द्वारा कवि रचना करता है किन्तु वही कथान्तर आगे आने वाले कथान्तर में विलीन हो जाता है। कन्या की प्राप्ति का वर्णन एवं शृङ्गाररस का प्राधान्य रहता है। आख्यायिका का भी प्रारम्भ कथा की तरह ही होना चाहिए। प्राचीन कवियों की प्रशंसा भी होती है। उसका मुख्य उद्देश्य किसी राजा की प्रशंसा करना होता है। विषय का विभाजन उच्छ्वासों में होता है। उच्छ्वासों के प्रारम्भ में भावी सूचना देने वाले आर्या छन्दों का प्रयोग आवश्यक होता है।

रुद्रट के परवर्ती ध्वनिकार ने आख्यायिका में दीर्घ समास एवं विकट-बन्ध पर बल दिया एवं कथा में विकटबन्ध होने पर भी रसौचित्य के आधार पर वर्णना होनी चाहिए।

इस विषय में सबसे आधुनिकतम मत आचार्य विश्वनाथ का है कथा में सरस इतिवृत्त की रचना हुआ करती है। इसमें कहीं-कहीं आर्या छन्द तथा कहीं वक्त्र और अपवक्त्र छन्दों में रचना होती है। इसके प्रारम्भ में नमस्कारात्मक "मङ्गल" किया जाता है और खल-निन्दा तथा सज्जन प्रशंसा सम्बन्धी पद्य भी उपन्यस्त किए जाते हैं। यथा—कादम्बरी।

कथायां सरसं वस्तु गद्यैरेव विनिर्मितम् ॥
क्वचिदत्र भवेदार्या क्वचिद्वक्त्रापवक्त्रके।
आदौ पद्यैर्नमस्कारः खलादेर्वृत्तकीर्तनम् ॥

साहित्यदर्पण ६।३३२-३३३

आख्यायिका भी कथा के ही तुल्य गद्यकाव्य का एक प्रकार है। इसमें भी प्रायः कथा की ही विशेषताएँ रहती हैं। इसमें कवि अपने वंश का अनुकीर्तन करता है और यत्र-तत्र अन्य कवियों की भी चर्चा की जाती

है। इसमे जहाँ-तहाँ पद्यसूक्तियां भी रहती है। इसके कथांशों का व्यवच्छेद आश्वास नाम से निर्दिष्ट किया जाता है। इसमें आश्वास के प्रारम्भ में आर्या, वक्त्र और अपवक्त्र छन्दों में से किसी एक के द्वारा विषयवर्णन के व्याज से वर्णनीय विषय की सूचना भी दी जाया करती है।

यथा—हर्षचरित।

आख्यायिका कथावत्स्यात्कवेर्वंशानुकीर्तनम्।
अस्यामन्यकवीनां च वृत्तं पद्यं क्वचित्क्वचित्॥
कथांशानां व्यवच्छेद आश्वास इति बध्यते।
आर्यावक्त्रापवक्त्राणां छन्दसा येन केनचित्॥
अन्यापदेशेनाश्वास मुखे भाव्यर्थसूचनम्।

साहित्यदर्पण ६।३३४-३३६

यद्यपि आचार्य विश्वनाथ का यह अन्तिम मत है किन्तु इसे मौलिक नहीं कहा जा सकता। केवल पिष्टपेषण ही किया गया है। प्रतीत होता है कि हर्षचरित और कादम्बरी को देखकर ही उक्त लक्षणों को बनाया गया है।

दशकुमारचरित कथा है या आख्यायिका ?

इस विषय पर विचार करने से पूर्व कथा और आख्यायिका के स्वरूप का ज्ञान आवश्यक है। कथा और आख्यायिका के स्वरूप का वर्णन "कथा और आख्यायिका" शीर्षक में किया जा चुका है। दण्डी कथा और आख्यायिका इन दोनों रूपों में कोई अन्तर नहीं मानते। दण्डी ने दशकुमारचरित में कथा अथवा आख्यायिका के किसी पूर्ववर्ती लक्षण का अनुसरण नहीं किया है। स्पष्टरूप से दशकुमारचरित को न कथा अथवा न आख्यायिका ही कहा जा सकता है। दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका के प्रारम्भ में विष्णु की स्तुतिपरक एक पद्य प्राप्त होता है। दशकुमारचरित में कवि ने अपने वंश की प्रशंसा नहीं की है और न अपना वंश परिचय ही दिया है। कादम्बरी कथा के सदृश खल-निन्दा तथा सज्जन प्रशंसा भी प्राप्त नहीं होती। कन्याहरण, संग्राम, नायक एवं नायिका की वियोग-वर्णना, सूर्योदय, चन्द्रोदय आदि का वर्णन मिलता है जो आख्यायिका की विशेषताएँ हैं। दशकुमारचरित की समग्र कहानियां नायक द्वारा

ही नहीं कहीं गई है। अनेक राजकुमार अपनी कहानी कहते हैं इस आधार पर इसे आख्यायिका नहीं कहा जा सकता। आख्यायिका में अध्यायों के विभाजन का नाम उच्छ्वास होता है। दण्डी ने अपने दशकुमारचरित में विभाजन का नाम उच्छ्वास ही दिया है। आख्यायिका में आर्या वक्त्र और अपवक्त्र छन्दों का प्रयोग होना चाहिए पर दशकुमारचरित में इन छन्दों का सर्वथा अभाव है। रुद्रट के अनुसार आख्यायिका में प्राचीन कवियों की प्रशंसा आवश्यक है पर दशकुमारचरित में पूर्ववर्ती किसी कवि का वर्णन नहीं मिलता। दशकुमारचरित में कुछ लक्षण आख्यायिका के तथा कुछ कथा के प्राप्त होते हैं। वस्तुतः दशकुमारचरित तो गद्यकाव्य ही कहा जा सकता है। गद्यकाव्य के किसी भेद, कथा या आख्यायिका का लक्षण पूर्णरूप से घटित नहीं किया जा सकता। काव्यादर्श में दण्डी कथा और आख्यायिका दोनों विधाओं की अलग-अलग प्रतिष्ठा के विरुद्ध प्रतीत होते हैं। उन्होंने कथा और आख्यायिका का पृथक्-पृथक् लक्षण न देकर दोनों में भेद स्थापित करने वालों को उत्तर दिया है और उस अभेद स्थापना में ही उनके प्रमुख लक्षण निरूपित हो गए।

दण्डी के अनुसार यह आवश्यक नहीं है कि आख्यायिका का वक्ता उसका नायक ही हो दूसरा पुरुष भी उसका वक्ता हो सकता है। आख्यायिका की भांति कथा में भी वक्त्र और अपरवक्त्र का भी प्रयोग हो सकता है। इसी प्रकार कथा के परिच्छेद लम्भ, लुम्बक, नाम से रखे जाते हैं और आख्यायिका के उच्छ्वास नाम से लेकिन परिच्छेद की संज्ञा लम्भ हो या उच्छ्वास इससे दोनों के स्वरूप में कोई अन्तर नहीं पड़ता। केवल नाम भेद है। कुछ विद्वान् कन्याहरण, संग्राम, विप्रलम्भ, कुमारोदय आदि के वर्णनों को केवल आख्यायिका का ही वैशिष्ट्य स्वीकार करते हैं कथा का नहीं। पर ये वैशिष्ट्य आख्यायिका के लिए रूढ़ नहीं है। प्रबन्धगत सामान्य धर्म होने के कारण कथा में भी उनका प्रयोग हो सकता है।

दण्डी के इन आदर्शों को ध्यान में रखने के बाद यदि हम विचार करें कि दशकुमारचरित किस उपभेद की ओर झुका है तो कहा जा सकता है कि दशकुमारचरित आख्यायिका के वैशिष्ट्य से अधिक विभूषित होने पर भी वह कथा के अधिक समीप है। मुख्यतः आख्यायिका की कथा-

वस्तु ऐतिहासिक तथा सत्य के धरातल पर आरूढ़ होती है। जब कि कथा कविकल्पना प्रसूत होती है। दशकुमारचरित की कथा पूर्णतः कवि-कल्पना-प्रसूत है।

अन्त में कह सकते हैं कि दशकुमारचरित कथा और आख्यायिका की संकुचित सीमाओं में बद्ध न होने पर भी, कथानक के कवि-कल्पित होने के कारण कथा के अधिक समीप है।

संस्कृत-गद्य का उद्गम और विकास

गद्य की सत्ता प्राचीनतर तथा महनीय है। जब हम इसके लिखित रूप की उत्पत्ति की मीमांसा करते हैं तो हमें वैदिक ग्रन्थों का अनुशीलन अत्यावश्यक हो जाता है क्योंकि इन ग्रन्थों की सत्ता सन्देह से अस्पृष्ट और प्राचीनतम है।

विश्व में प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद स्वीकार किया जाता है यद्यपि इसमें गद्य का नितान्त अभाव है, परन्तु फिर भी जर्मन मनीषी ओल्डेनवर्ग ने इसकी उत्पत्ति ऋग्वेद से ही सिद्ध की है। उनकी धारणा के अनुसार ऋग्वेद के यम-यमी, पुरुरवा-उर्वशी प्रभृति संवादात्मक सूक्तों में गद्य का सम्मिश्रण रहा होगा, किन्तु शनैःशनैः कालान्तर स्मरणशक्ति के दुर्बल होने के कारण गद्यांश लुप्त हो गया होगा क्योंकि पद्य की अपेक्षा गद्य की स्थिरता अल्पकालिक होती है। उन्होंने अपनी इस धारणा को पुष्ट करने के लिए आयरिश स्कन्डेनेवियन काव्यों से उद्धरण भी प्रस्तुत किए हैं, किन्तु उनका यह मत विद्वानों में स्थान नहीं पा सका। यह केवल बौद्धिक अनुसंधान की एक दिशा मात्र रह गई।

गद्य का प्राचीनतम रूप हमें यजुर्वेद में प्राप्त होता है। गद्य के कारण ही इसका नाम यजुर्वेद पड़ा।[1] इसकी काठक एवं तैत्तिरीय संहिताओं में गद्य का प्रारम्भिक रूप पाया जाता है। इस सम्पूर्ण गद्य साहित्य को चार भागों में विभाजित कर सकते हैं।

(१) गद्य का प्रारम्भिक युग—(प्रारम्भ से लेकर ईसा तक)

---

१. ऋग्यत्रार्थवशेन पादव्यवस्था; गीतिषु साम; शेषे यजुः शब्दः मीमांसा दर्शन १।३३, ३४, ३५. महर्षि जैमिनि।

यह युग गद्य की शैशवावस्था का था, जिसमें गद्य का रूप अति सरल एवं समासविहीन था। इस काल में वेदों, संहिताओं, ब्राह्मणग्रन्थों, आरण्यकों, उपनिषदों एवं वेदाङ्गों में उपलब्ध गद्य आता है। अथर्ववेद में भी गद्य के दर्शन होते हैं।

व्रात्य आसीदीयमान एव स प्रजापतिं समैरयत्। स प्रजापतिः सुवर्णमात्मन्नपश्यत्। तत् प्राजनयत्। तदेकमभवत्। तल्ललाममभवत्, तन्महदभवत्, तज्ज्येष्ठमभवत्, तद् ब्रह्माभवत्, तत् तपोऽभवत्, तत्सत्यमभवत्, तेन प्रजायत। (अथर्ववेद १५ काण्ड १ सूक्त)।

संहिताओं का गद्य मन्त्रों का विनियोग तथा याज्ञिक व्याख्या प्रस्तुत करता है। इस कारण से यह गद्यांश अनलङ्कृत तथा असमस्त है एवं उसमें संलाप–शैली का प्रयोग किया गया है। कृत्रिमता का सर्वथा अभाव है। स्वाभाविकता एवं प्रवाहमयी शैली सर्वत्र परिलक्षित होती है।

ब्राह्मणग्रन्थों एवं उपनिषदों का गद्य भी सरल तथा प्रवाहमय है क्योंकि इसके द्वारा विभिन्न प्रकार की व्याख्याएं प्रस्तुत की गई हैं। अतः समझाने की दृष्टि से गद्य का सरल होना आवश्यक है। महर्षि यास्क प्रणीत निरुक्त का गद्य भी सरल अकृत्रिम शैली में है। यत्र-तत्र कृत्रिमता भी मिलती है। ब्राह्मणग्रन्थों की भाषा प्राचीन है और वह सर्वत्र पाणिनि के नियमों का अनुसरण करती नहीं दिखलाई पड़ती : ह, वै, उ, खलु आदि अव्ययों का प्रयोग विशेष मिलता है उनकी शैली सरल और शक्तिशाली है। आरण्यक भी गद्य में विरचित हैं उनकी भाषा लौकिक साहित्य के अधिक निकट है। क्रमशः वेद, ब्राह्मण एवं उपनिषदों से एक-एक उदाहरण दिया जाता है जिनमें गद्य की सरल और समासहीन शैली मिलती है।

होता यक्षत सरस्वतीं मेषस्य हविष आवयदद्य मध्यतो मेद उद्भृतं पुरा द्वेषोभ्यः पुरा पौरुषेय्या गृभो घसन्नून घासे अज्राणां यवसप्रथमाना सुमत्·········सरस्वती जुषता हवि र्होतर्यज। यजुर्वेद २१।४४

अग्निर्वै देवानामवमो विष्णुः परमस्तदन्तरेण सर्वा अन्या देवताः। अग्नावैष्णवं पुरोडाशं निर्वपन्ति। दीक्षणीयमेकादशकपालं सर्वाभ्य एवैनं तद्देवताभ्योऽनन्तरायं निर्वपन्ति। ऐतरेय ब्राह्मण १।१

यत्र नान्यत् पश्यति नान्यच्छृणोति नान्यद् विजानाति तद्भूमा। अथ यत्रान्यत् पश्यति अन्यच्छृणोति अन्यद् विजानाति तदल्पम्। यो वै भूमा तदमृतमथ यदल्पं तन्मर्त्यम्। छान्दोग्योपनिषद् ७।२४

(२) गद्य का पूर्व-मध्य-युग—(ईसा की प्रथम शती से ५ वीं शती तक)—

यह गद्य का वयः सन्धि का काल है, जिसमें वैदिक एवं लौकिक संस्कृत गद्य का मेल है। इस काल को भी तीन भागों में विभक्त कर सकते हैं।

(क) पौराणिक गद्य—पौराणिकगद्य के अन्तर्गत महाभारत, श्रीमद्-भागवत एवं विष्णुपुराण का गद्य आता है। महाभारत का गद्य सरल तथा स्वाभाविक है। यत्र-तत्र आलङ्कारिक भाषा का भी प्रयोग हुआ है। श्रीमद्-भागवत एवं विष्णुपुराण का गद्य लौकिक एवं वैदिक गद्य के मिश्रण का निदर्शन है। इनका गद्य अलङ्कार तथा प्रसादगुण युक्त है। कहीं-कहीं साहित्यिक गद्य के भी दर्शन होते हैं।

· भगवानपि मनुना यथावदुपकल्पितापचितिः प्रियव्रतनारदयोरविषयम-भिसमीक्षमाणयोरात्मसमस्थानमवाङ्मनसं क्षयमव्यवहृतं प्रवर्तयन्नगमत्—श्रीमद्भागवतम् ५।१।

(ख) शिलालेखीय गद्य—इस प्रकार का गद्य शिलालेखों तथा प्रशस्तियों में प्राप्त होता है। इस दृष्टि से रुद्रदामन् का गिरिनार का शिला-लेख तथा हरिषेणकृत प्रयाग प्रशस्ति विशेषतः उल्लेखनीय है। इनका गद्य अत्यन्त प्रौढ़, आलङ्कारिक, मञ्जुल तथा ओजगुणसम्पन्न है। कृत्रिमता का बाहुल्य है। इनकी छाया परवर्ती गद्यसाहित्य पर देखी जा सकती है।

प्रमाणामानोन्मान स्वरगतिवर्णसारसत्त्वादिभिः परमलक्षणव्यञ्जनैरुपे-तैकान्तमूर्तिना स्वयमधिगत-महाक्षत्रपनाम्ना नरेन्द्रकन्यास्वयंवरानेकमा-ल्यप्राप्तदाम्ना महाक्षत्रपेण रुद्रदाम्ना सेतुं सुदर्शनतरं कारितम्—

(रुद्रदामन् का गिरिनारलेख १५० ई०)

(ग) शास्त्रीय गद्य—शास्त्रीय गद्य के अन्तर्गत व्याकरणग्रन्थों, दर्शनग्रन्थों, अर्थशास्त्र, नीतिशास्त्र एवं कथाओं का गद्य आता है। व्याकरण में हमें प्रथमतः महाभाष्य में गद्य प्राप्त होता है, जिसकी शैली

अति सरल एवं प्रवाहपूर्ण है। कृत्रिमता का सर्वथा अभाव है। इसी कारण से भाष्य जैसा दुरूह ग्रन्थ भी सरल बन पड़ा है। इसी में वासवदत्ता, भैमरथी और सुमनोत्तरा नामक आख्यायिकाओं का भी उल्लेख है। ३०० ई० पू० कात्यायन ने भी आख्यायिका का उल्लेख किया है। महाराज भोज के शृङ्गारप्रकाश में मनोवती एवं सातकर्णीहरण कथाओं का उल्लेख है। जल्हण ने रामिल और सोमिल कृत शूद्रक कथा का सङ्केत किया है। परन्तु इन कथाओं के अप्राप्य होने के कारण इनके गद्य का अनुमान ही किया जा सकता है। महाकवि बाण ने हर्षचरित में भट्टार हरिश्चन्द्र के गद्य की प्रशंसा की है।

दर्शन ग्रन्थों पर लिखे गए भाष्यों का गद्य कहीं-कहीं दुरुह भी हो गया है यद्यपि उसको सरल बनाने का प्रयास किया गया है। मीमांसा के सूत्रों पर शबरस्वामी का भाष्य, वात्स्यायन द्वारा न्यायसूत्रों पर भाष्य, आचार्य शङ्कर द्वारा वेदान्तसूत्रों पर भाष्य, योग सूत्रों पर व्यासभाष्य एवं जयन्त भट्ट द्वारा लिखित "न्यायमञ्जरी" नामक ग्रन्थ इस दृष्टि से महत्त्वपूर्ण हैं।

एवं हि दृश्यते लोके मृत्कयाचिदाकृत्या युक्तो पिण्डो भवति, पिण्डाकृतिमुपमृद्य घटिकाः क्रियन्ते, घटिकाकृतिमुपमृद्य कुण्डकाः क्रियन्ते। तथा—सुवर्णं कयाचिदाकृत्या युक्तं पिण्डो भवति, पिण्डाकृतिमुपमृद्य रुचकाः क्रियन्ते, रुचकाकृतिमुपमृद्यकटकाः क्रियन्ते, कटिकाकृतिमुपमृद्य स्वस्तिकाः क्रियन्ते। महाभाष्य पस्पशाह्निक पृ०४६।

इच्छयात्मानमुपलभामहे! कथमिति? उपलब्ध पूर्वे ह्यभिप्रेते भवतीच्छा। यथा मेरुमुत्तरेण यान्यसमज्जातीयैरनुलब्ध पूर्वाणि स्वादूनि वृक्ष फलानि न तानि प्रत्यस्माकमिच्छा भवति। मीमांसा दर्शन १।१।१५ शबर-स्वामी कृत-भाष्य।

अत्राह—यदि जगदिदयनभिव्यक्तनाम रूपं बीजात्मकं प्रागवस्थमवाक्त-शब्दार्हम्युपगम्येत्, तदात्मना च शरीरस्याप्यव्यक्तशब्दार्हत्वं प्रतिज्ञायेत, स एव तर्हि प्रधानकारणवाद एव सत्यापद्येत्। ब्रह्मसूत्र १।३—आचार्य शङ्कर कृत भाष्य।

(३) गद्य का उत्तर-मध्यकाल—(६ वीं शताब्दी से १८ वीं शताब्दी तक)

यह काल गद्य के विकास की प्रौढ़ावस्था थी। इस काल में गद्य का चरम विकास हुआ। महाकवि सुवन्ध से लेकर १८ वीं शताब्दी तक के गद्य प्रणेताओं ने अपनी प्रौढ़ प्रतिभा का परिचय दिया। प्रौढ़ गद्य के आदि प्रणेतामहाकवि सुवन्धु हैं जिनकी "वासवदत्ता" नामक प्रणयकथा अपनी श्लेषमयी रचना के लिए आज भी प्रसिद्ध है। उनकी कथा में "प्रत्यक्षर-श्लेषमयप्रबन्धविन्यासवैदग्ध्यनिधिर्निवन्धम्" की बात चरितार्थ होती है। इनका गद्य अलङ्कृत, संश्लिष्ट एवं समास-बहुल है। यह गौड़ीरीति में लिखी गई है। सुवन्धु के पश्चात् आचार्य दण्डी ने अपनी सरस और ललित पद वन्धों से युक्त शैली का परिचय दिया। उनका दशकुमारचरित गद्य के पदलालित्य का चरम निदर्शन है। इनके गद्य में व्यङ्ग, हास्य एवं प्रेम का सम्मिश्रण है। उनके गद्य को पढ़ते हुए पाठक ऊवता नहीं। वह तादात्म्य के साथ पढ़ता चला जाता है।

इसके पश्चात् कवि-कुञ्जरों के मद को चूर्ण करने वाले काव्य-कानन-पञ्चानन महाकवि वाण का काल आता है। महाकवि वाण ने अपनी नव-नवोन्मेष-शालिनी प्रतिभा के द्वारा नूतन उद्भावनाएं करके गद्य को पाञ्चालीरीति में प्रस्तुत किया। उनकी समन्वयात्मक प्रतिभा ने गौड़ी और वैदर्भी का सम्मिश्रण स्थापित किया। कवि की भाषा विषय के अनुरूप है। कलापक्ष एवं भावपक्ष का समन्वय कादम्बरी कथा में उपलब्ध होता है। बाण के गद्य का प्राथमिक रूप हर्षचरित आख्यायिका में एवं चरम विकास कादम्बरी में प्राप्त होता है। कवि के पास अपार शब्द भण्डार एवं अथाह ज्ञान है। सुवन्धु और दण्डी का सुन्दर समन्वय वाण की कथा में प्राप्त होता है। उनके गद्य में प्रायः सर्वत्र सरसता, कोमलता एवं प्राञ्जलता प्राप्त होती है।

इस लेखकत्रयी के अनन्तर चम्पूकाव्यों का गद्य आता है। इन काव्यों में गद्य-पद्य मयी द्विकूला सरिता समानरूप से प्रवाहित होती रही है। इनका गद्य भी बड़ा ही प्राञ्जल एवं कलापक्ष का समर्थन करता है। इस दृष्टि से त्रिविक्रमभट्ट का "नलचम्पू" सोमदेवसूरि का यशस्तिलकचम्पू' भोज का "रामायणचम्पू' अनन्तभट्ट का 'भारतचम्पूः कवि कर्णपूर का

'आनन्दवृन्दावनचम्पू' और वेंकटाध्वरि का 'विश्वगुणादर्शचम्पू' विशेष उल्लेखनीय है। इन कृतियों के अतिरिक्त धनपाल की "तिलकमञ्जरी" एवं ओढ़यदेव वादीभ सिंह की गद्यचिन्तामणि सफल रचनाएँ हैं। तिलकमञ्जरी में कादम्बरी का अनुकरण किया गया है। इसमें हरिवाहन, समरकेतु एवं तिलकमञ्जरी की प्रणयकथा वर्णित है। गद्यचिन्तामणि में भी कादम्बरी का अनुकरण है और जीवन्धर नामक एक राजकुमार की कथा वर्णित है। कादम्बरी के शुकनासोपदेश की जीवन्धर के उपदेश में स्पष्ट छाप है। इन कवियों ने विशेष रीति पर बल नहीं दिया किन्तु अनुकरण की प्रवृत्ति अवश्य प्रकट की। अलङ्कृत गद्य होने पर भी मौलिकता के अभाव में वह महत्त्व को प्राप्त न कर सका।

११ वी शताब्दीमें सोड्डल की "उदय सुन्दरी कथा" १५ वी शताब्दी में वामनभट्ट द्वारा "वेयभू पालचरित" एवं १६५० ई० में मुद्राराक्षस नाटक के आधार पर अनन्तशर्मा ने "मुद्राराक्षस पूर्व संकथानक" नामक एक गद्य रचनाप्रस्तुत की। इन रचनाओं में भी कोई नूतनता नहीं आई किन्तु अनुकरण की ही प्रवृत्ति लक्षित होती है।

४ आधुनिक काल—(१९ वीं शताब्दी से·········)

यह काल भी अपनी रचनाओं के लिए विशेष महत्त्व रखता है। इस काल की सर्वोत्तम कृति अम्बिकादत्त व्यास का "शिवराजविजय" नामक ऐतिहासिक उपन्यास है, जिसमें कवि ने ऐतिहासिकता के साथ ही साथ कल्पना का भी प्रलेप चढ़ाया है। व्यास जी ने अपनी प्रतिभा के द्वारा प्राचीन और अर्वाचीन शैली का समन्वय किया है। इसमें प्रसादादि गुण, हास्य और व्यङ्ग्य का पुट विषय के अनुकूल है। कथोपकथन में लघु वाक्यों का प्रयोग सर्वत्र हुआ है। कवि का भाषा पर पूर्ण अधिकार है।

यों तो व्यास जी के पश्चात् भी गद्य काव्य की रचना हुई, किन्तु उन जैसी भाषा कोई नहीं ला सका। पण्डित हृषीकेश द्वारा प्रणीत "प्रबन्धमञ्जरी" एक निबन्ध संग्रह व्यङ्ग्य शैली में प्रकाशित हुआ। इन्होंने इस विधा की ओर उन्मुख होकर साहित्य को एक नया योगदान दिया। इनकी शैली महाकवि बाण से प्रभावित है। इसके अतिरिक्त

पण्डिता क्षमा राव की लघु कहानियां "कथामुक्तावली" के नाम से संकलित हैं। इनकी भाषा प्रवाहमयी, प्राञ्जल तथा आकर्षक है। एक अन्य कथा-संग्रह "कथाकल्लोलिनी" के नाम से वाराणसी से प्रकाशित हुआ जिसमें द्विजेन्द्रनाथ मिश्र "निर्गुण" एवं रामकुवेर मालवीय आदि विद्वानों के द्वारा लिखित आधुनिक कहानियां सरल शैली में लिखी गई है। इसके अतिरिक्त श्री नारायण शास्त्री की "विद्वच्चरितपञ्चकम्" एवं म० म० पं० रामावतार शर्मा की "भारतानुवर्णनम्" विशेष उल्लेखनीय हैं। पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन भी आजकल बढ़ रहा है—जिसमें गाण्डीवम्, दिव्यज्योति, भारतोदय, सरस्वतीसुषमा, साकेतम्, संस्कृतभवितव्यम्, सूर्योदय आदि का योगदान उल्लेखनीय है।

संस्कृत-गद्य-काव्य की विशेषताएं

मानव एक संवेदनशील प्राणी है। उसकी संवेदना की अभिव्यक्ति भाषा है। वह अपने विचार गद्य एवं पद्य के द्विविधरूपों में ही व्यक्त करता है। इसी कारण अनादिकाल से गद्य-पद्य रूपी द्विकूला-साहित्य-सरिता अपने कल-कल-निनाद से जनमानस को आप्लावित करती रही है। गद्य मानव की सहज अभिव्यक्ति है तथा कवियों का निकषोपल है। यदि गद्य में प्रौढ़ मस्तिष्क का योग है तो पद्य में सुकोमल हृदय का।

निःसन्देह मानव की नैसर्गिक रुचि पद्य की ओर अधिक है। यथार्थतः स्वाभाविक रुचि के साथ ही साथ युगीन विचारधारा और बौद्धिक क्षीणता भी कुछ अंशों में उत्तरदायी है। जहाँ साहित्यप्रणेता पद्य का आश्रय लेकर अपनी दुर्बलताओं को संवरण करते थे, वहाँ पर कतिपय मनीषी गद्य के निर्मुक्त क्षेत्र में निर्द्वन्द्व विचरण करके अपना बौद्धिक परिचय भी देते थे। इसी के परिणामस्वरूप गद्य कवियों की निकष बन गयी और "गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति" विद्वानों के वैदुष्य का मापदण्ड करने लगी।

यद्यपि कतिपय विद्वानों ने ही गद्य की सर्जना की, तथापि उतनी सर्जना में ही उनकी प्रतिभा का चरम प्रदर्शन प्राप्त होता है। इस गद्य रचना को देखकर कवियों की सामान्य प्रवृत्तियों पर प्रकाश पड़ता है और वे प्रवृत्तियां स्वयं आदर्श रूप में परवर्ती कलाकारों के लिए उपजीव्य बन

गयीं। इन्हें ही दूसरे शब्दों में गद्य की विशेषताएं भी कह सकते हैं। इसी कारण भिन्न-भिन्न कवियों की पृथक्-पृथक् विशेषताएं भी प्रकट हुईं। यदि सुबन्धु श्लेष के सम्राट् हैं तो दण्डी पद-लालित्य के। जबकि काव्यकानन के पञ्चानन तथा पाञ्चालीरीति के नायक महाकवि बाण में दोनों का समत्व योग है। गद्य काव्य की विशेषताओं को निम्न प्रकार से विभाजित किया जा सकता है।

(क) समासाधिक्य–संस्कृत गद्य की यह प्रथम विशेषता है कि इसमें कविगण समासों का प्रयोग प्रचुरता से करते हैं, जिसमें दीर्घकाय वाक्यों के लिए लघुता का स्वरूप आता है। यदि पात्रों में कथोपकथन होता है तो समास का प्रयोग नहीं किया जाता है। यदि किसी विषय की वर्णना की जा रही है या प्रकृति की भयङ्करता का वर्णन किया जा रहा है तो समास-बाहुल्य होना आवश्यक हो जाता है। अतः समासों का योगदान गद्य के प्रति अपना विशेष महत्त्व रखता है। इस दृष्टि से सुबन्धु का निम्न गद्य स्पृहणीय है। कवि विन्ध्यपर्वत का वर्णन कर रहा है।

कन्दरान्तराललतागृहसुप्तप्रबुद्धविद्याधरमिथुनगीताकर्णनसुखितचमरीगणमारणोत्सुकशबरकुलसम्बाधकच्छतटः, कटकतटगतकरिकराकृष्टभग्नहरिचन्दनस्यन्दमानरसामोदहरगन्धवाहशिशिरितशिलातलः, सुदूरपतनभग्नतालफलरसार्द्रकरतलास्वादनोत्सुकशाखामृगकदम्बकः। वासवदत्ता पृष्ठ ६३

(ख) ओजः प्राधान्य—' ओजः समासभूयस्त्वमेतद् गद्यस्य जीवितम्" दण्डी की इस उक्ति ने ओज को गद्य का प्राण बताया। यथार्थतः यह लक्षण दण्डी से पूर्ववर्ती शिलालेखों पर भी चरितार्थ होता है। रुद्रदामन् के शिलालेख और हरिषेण की प्रयागप्रशस्ति में इस प्रकार की गद्य शैली के दर्शन प्राप्त होते हैं। यों तो विषय के अनुरूप प्रसाद और माधुर्य गुण भी प्राप्त होता है। शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार आख्यायिका में शृङ्गार में भी कोमल वर्णों से युक्त रचना नहीं होती है।[1] कहीं-कहीं पर वक्ता एवं वाच्य के अनुसार रचना को मोड़ देना पड़ता है। ओज की दृष्टि से सुबन्धु का निम्न गद्य द्रष्टव्य है।

---

(1) तथाहि आख्यायिकायां शृङ्गारेऽपि न मसृणवर्णादयः।

काव्यप्रकाश ८

अत्यूहदात्यूहकुहरितभरितनदीतटानेकुञ्जपुञ्जेन, पुञ्जिताकुण्ठकण्ठ-कलकण्ठाध्यासितसहकारपल्लवेन चपलकुलायकुक्कुटकुटुम्बाध्युषितोत्कटानेक-विटपेन, मदजलमेचकितगण्डकाषमुचुकुन्दकाण्डकथ्यमाननिःशङ्ककरिकरटवि-कटकण्डूतिना, कतिपय दिवस प्रसूतकुक्कुटीकुटीकृत कुटजकोटरेण। वासव-दत्ता २३१ पृष्ठ।

(ग) अर्थगाम्भीर्य—संस्कृतवाङ्मय में गम्भीर-विषयों का विवेचन गद्य के ही माध्यम से किया गया है। दार्शनिक गद्य बड़ा ही अर्थपूर्ण तथा प्रौढ़ है। अतः प्रणेताओं ने भी शास्त्रीय ग्रन्थियां सुलझाने के लिए प्रौढ़-शैली का आश्रय लिया और एक नूतन "अवच्छेदकावच्छिन्न" प्रणाली को जन्म दिया। यों तो सरस और सुकोमलभाव अपने विषय के अनुसार उपस्थापित किए गए हैं तथापि अर्थगाम्भीर्य सर्वत्र परिलक्षित होता है। कादम्बरी का शुकनासोपदेश इस दृष्टि से अच्छा बन पड़ा है। इस अर्थ-गाम्भीर्य को प्रदर्शित करने के लिए कवियों ने श्लेष, उपमा, उत्प्रेक्षा आदि अलङ्कारों का आश्रय लिया है।

(घ) अलङ्कारबाहुल्य—संसार की किसी भी भाषा में संस्कृत जैसा अलङ्कार-वैविध्य नहीं प्राप्त होता है लक्षण-शास्त्रियों ने इनकी संख्या सौ से ऊपर निर्धारित की है तथापि कतिपय अलङ्कार अपनी सरसता और विशेषता के लिए समान रूप से कवियों द्वारा ग्राह्य हैं। विशेषतः गद्य के स्वच्छन्द क्षेत्र में अपनी प्रतिभा के प्रदर्शन के लिए उनका प्रयोग किया है। वे हैं—उपमा, रूपक, विरोधाभास, उत्प्रेक्षा, परिसंख्या, श्लेष, अनुप्रास और यमक आदि। उपर्युक्त अलङ्कारों का संस्कृत गद्य में विशेष प्रयोग हुआ है। इन अलङ्कारों ने स्वर्ण में सुगन्ध का कार्य किया है। विभिन्न अलङ्कारों के प्रयोग से गद्य का सौन्दर्य बढ़ जाता है अतः अलङ्कार बाहुल्य गद्य का भूषण है।

(ङ) पदलालित्य—गद्य निर्माताओं ने ललित-पद-बन्ध के द्वारा भाषा में माधुर्य तथा सौन्दर्य को बढ़ाया है। कोमल-कान्त-पदावली को पढ़कर साधारण पाठक का भी हृदय मन्त्रमुग्ध हो जाता है तथा कवि की प्रतिभा पर आश्चर्य प्रकट करने लगता है। यों तो विभिन्न कवियों ने

अपने विषय के अनुसार सुकुमार पद-बन्ध का सृजन किया है। किन्तु महाकवि दण्डी इस विषय के आचार्य हैं, यथा—

अनवरतयागदक्षिणरक्षित शिष्टविशिष्टविद्यासंभारभासुर भूसुरनिकरः, विरचितारातिसन्तापेनप्रतापेन सततुलितमध्य हंसः, राजहंसो नाम घनदर्प-कन्दर्प सौन्दर्यं सौदर्यहृद्यनिरवद्यरूपोभूपो बभूव। —दशकुमारचरित

'गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति'

संस्कृत साहित्य में विविधि प्रकार के अनेक काव्य हैं किन्तु गद्य-काव्यों की कमी, उनके रचना-काठिन्य और काव्य-वैशिष्ट्य को प्रकट करती है। संस्कृत काव्यों में गद्य की न्यूनता इसलिये है कि पद्य की अपेक्षा गद्य-रचना में दुरूहता है। श्लोक के एक अंश में भी चमत्कार की विशेषता आ जाने से सम्पूर्ण श्लोक प्रशंसा-भाजन बन जाता है किन्तु गद्य में सौन्दर्य का आधान सुलभ नहीं है। पद्य रचना में शब्द-योजना, श्रीतिमाधुर्य तथा छन्द-विधान के अनुसार आरोह अवरोह एवं यति आदि के प्रभाव से स्वाभाविक रूप से ही मधुरता आ जाती है। और यदि कवि की निपुणता से थोड़ा-सा भी वैशिष्ट्य उत्पन्न हो जाता है, तो योग्य शिष्य को प्रदान की गई विद्या की भाँति वह प्रशस्त काव्य सुधियों का मनोरञ्जन करता ही है।

पद्यरचना में यह और भी महान लाभ है कि यदि कोई दोष (रचना शैथिल्य अथवा भाव-कल्पना की कमी) होता है तो वह भी छन्द के गुण से उसी प्रकार छिप जाता है जैसे चन्द्र-गत कालिमा उसके ज्योत्स्ना-जाल से आवृत हो जाती है। छन्द-शास्त्र के नियमों में निबद्ध कवि स्वेच्छानुसार श्लोक-रचना में बाध्य होता है अत एव कवि परतन्त्रता रूपी शृंखला में बद्ध बन्दी की स्थिति का अनुभव करता है। किन्तु गद्य रचना में नियमों का ऐसा बन्धन नहीं होता अतः कवि अभीष्ट काव्य-कौशल के प्रयोग में सर्वथा स्वतन्त्र होता है। और उसका कोई भी दोष किसी प्रकार से छिपाया नहीं जा सकता। उसके भाव-प्रदर्शन में कोई भी सीमा या नियम बाधक नहीं होता अतः गद्य में यदि किसी प्रकार की न्यूनता प्रतीत होती है तो वह कवि-दूषण को ही सूचित करती है। इस कारण

से पद्य की अपेक्षा गद्य-रचना ही महामान्य होती है और अत्यन्त दुष्कर भी गद्य ही है। काव्य कोविदों ने कवि रूपी स्वर्ण के परीक्षण हेतु गद्य को निकष रूप में निश्चित किया है।

जिस प्रकार स्वर्ण कहलाने वाले पदार्थ के बाहुल्य होने पर भी कसौटी में कसने के पश्चात् शुद्ध स्वर्ण अल्प ही प्राप्त होता है उसी प्रकार गद्य रूपी कसौटी में, सुन्दर वर्ण-विन्यास वाले कवियों की संख्या अङ्गुलिगण नीय ही प्राप्त होती है किन्तु इससे यह नहीं कहा जा सकता कि संस्कृत भाषा में गद्य का अभाव है क्योंकि दैवी-वाङ्मय में वैदिक काल से लेकर आधुनिक समय तक यजुर्वेद, ब्राह्मण, उपनिषद् भाष्य, शिलालेख आदि में प्रचुर-गद्य प्राप्त होता है किन्तु पद्य की अपेक्षा गद्य की अल्पमात्रा उसके महत्त्व व गरिमा को निश्चित ही स्पष्ट करती है कि किसी एक पद के विशिष्ट चमत्कार पूर्ण विन्यास हो जाने पर भी समाज कवि को श्रेष्ठपद प्रदान कर देता है। इस सन्दर्भ में घण्टामाघ, भवभूति श्रीकण्ठ, आदि का नामकरण उल्लेखनीय है ही। किन्तु गद्य की प्रशंसा तब तक नहीं की जा सकती जब तब उसके सर्वांश में काव्य-सौष्ठव का उन्मुक्त विलास न हो। यही कारण है कि पद्यक्षेत्र में सिद्धहस्त कविवरों ने भी गद्य-क्षेत्र में हाथ नहीं डाला। तथापि संस्कृत-भाषा में गद्य-कवि-रत्नों का अभाव नहीं है क्योंकि सुबन्धु, दण्डी, बाण, अम्बिकादत्त व्यास प्रभृति ज्योतिस्तम्भों से गद्य-लोक की सुषमा अवर्णनीय ही है। संस्कृत के सदृश प्राञ्जल और प्रशस्त कल्पना-कौशल से अनुप्राणित सर्वथा हृद्य, अनवद्य गद्य रचना अन्य भाषा में सर्वथा दुष्कर है।

गद्य क्षेत्र में कवि शृंगार जैसे मधुर-भावों के अभिव्यक्तीकरण में सक्षम, मृदुलता सुधा सिंचित वर्ण-विन्यास करते हुए भी कभी-कभी वीर आदि रस वर्णन में कठिन एवं विविध दीर्घ-समास पूर्ण कर्कश शब्दों की संयोजना स्वेच्छानुसार करता हुआ उस मधुसञ्चयकर्ता का अनुचरण करता है जो पुष्प-समूह के मध्य गमन करता हुआ भी कभी कुश-कण्टकाकीर्ण कानन में भी स्वच्छन्द विचरण करता है।

इस प्रकार पूर्वोक्त विचारों की समीक्षा करने पर यह निर्विरोध कहा जा सकता है कि नियम सम्बन्धी परतंत्रता का अभाव, संगठित शब्द

योजना की कठिनता, अलंकार, रीति, गुण आदि के समावेशन की स्वतं-त्रता, दोषों की अगोपनीयता, अपने कल्पना-कौशल के प्रदर्शन की स्वच्छन्दता आदि गद्य-क्षेत्र के ऐसे मौलिक तत्त्व हैं जिससे परीक्षा करने पर समस्त सुवर्णसृष्टा कवि सर्वथा खरे नहीं उतरते। अत एव गद्य की गुण-गरिमा का डिण्डिम घोष करती हुई यह सामाजिकों की सूक्ति सत्य ही चरितार्थ होती है—

"गद्यं कवीनां निकषं वदन्ति"

———

दण्डी का समय

दण्डी के स्थितिकाल के विषय में विद्वान् एक मत नहीं हैं। दण्डी का नामोल्लेख नवम शताब्दी के ग्रन्थों में सर्वप्रथम मिलता है। इस आधार पर उनको नवम शताब्दी के वाद में नहीं रखा जा सकता। डाक्टर वार्नेट महोदय के अनुसार सिंघली भाषा के अलङ्कारग्रन्थ "सिय-बस-लकर" (स्वभाषालङ्कार) की रचना काव्यादर्श के आधार पर की गई है। महावंश के अनुसार इसका रचयिता राजा सेन प्रथम सन् ८४६ से ८६६ई० तक राज्य करता था। कन्नड़ी भाषा के अलङ्कार-ग्रन्थ "कविराजमार्ग" पर काव्यादर्श की छाया पड़ी है। इसकी रचना सन् ८१५ ई० के समीप हुई है। कविराजमार्ग में काव्यादर्श से उदाहरण लिए गए हैं, कहीं-कहीं पूर्णतः उसी रूप में कहीं-कहीं कुछ परिवर्तन के साथ उनका प्रयोग किया गया है। हेतु, अतिशयोक्ति आदि अलंकारों के लक्षण दण्डी के काव्यादर्श से अक्षरशः सारूप्य रखते हैं। कविराजमार्ग के लेखक का नाम अमोघवर्ष है। इस आधार पर कहा जा सकता है कि काव्यादर्श नवम शताब्दी के पूर्व ही रचा जा चुका था और नवम शताब्दी के द्वितीय दशक के पूर्व ही पर्याप्त ख्याति भी प्राप्त कर चुका था। तभी सिंघली आदि भाषाओं के ग्रन्थों पर उसका प्रभाव पड़ा। अतः काव्यादर्श के रचयिता दण्डी को नवम शताब्दी ई० के द्वितीय दशक के पूर्व ही स्थित स्वीकार करना पड़ता है। यह तो रही दण्डी के काल की अन्तिम सीमा।

अब पूर्व सीमा की ओर विचार करना है। यह निर्विवाद सिद्ध है कि काव्यादर्श में आये हुये समस्त पद्य दण्डी विरचित नहीं है। अन्य अलङ्कारग्रन्थों की भाँति काव्यादर्श में भी पूर्ववर्ती कवियों के पद्यों को उद्धृत किया गया है। लक्ष्म लक्ष्मीं तनोतीति प्रतीतिसुभगं वचः में दण्डी के स्पष्टरूप से इति शब्द के प्रयोग से ज्ञात होता है कि यह अंश 'मलिनमपि हिमांशोर्लक्ष्म लक्ष्मीं तनोति' कालिदास के पद्यांश से उद्धृत है। अतः कालिदास के अनन्तर ही आते हैं। दण्डी के काव्यादर्श में सेतुबन्ध नामक एक प्राकृत काव्य का उल्लेख है। सेतुबन्ध का रचयिता प्रवरसेन है जिसका स्थिति-काल पाँचवीं शताब्दी माना जाता है। इससे स्पष्ट है कि काव्यादर्श के रचयिता दण्डी के स्थिति-काल की पूर्व सीमा पाँचवी शताब्दी से पूर्व नहीं मानी जा सकती।

संस्कृत-गद्य लेखकों में वाणभट्ट का समय निश्चित है। इसके आधार पर दण्डी के समय के विषय में कुछ विचार किया जा सकता है। दण्डी और वाण के पौर्वापर्य के विषय में विद्वान् एक मत नहीं मालूम पड़ते। पीटर्सन और याकोवी महोदय का विचार है कि काव्यादर्श के निम्न पद्य पर वाणभट्ट कृतकादम्बरी के शुकनाशोपदेश की छाया है। दण्डी को वाण का परवर्ती सिद्ध करने के लिए विद्वानों ने अन्य प्रमाण भी प्रस्तुत किए हैं।

अरत्नालोकसंहार्यमवार्यं सूर्यरश्मिभिः।
दृष्टिरोधकरं यूनां यौवनप्रभवं तमः॥ काव्यादर्श

केवलं च निसर्गत एवाभानुभेद्यमरत्नालोकोच्छेद्यमदीपप्रभापनेयमतिगहनं तमो यौवनप्रभवम्। कादम्बरी।

दण्डी ने स्वयं एक पद्य में वाण और मयूर की प्रशंसा की है।

भिन्नतीक्ष्णमुखेनापिचित्रं बाणेन निर्व्यथः।
व्यवहारेषु जहौ लीलां न मयूरः······॥

प्रो० पाठक के अनुसार दण्डी ने काव्यादर्श में निर्वर्त्य, विकार्य तथा प्राप्य हेतु का विभाग वाक्यपदीय के कर्त्ता भर्तृहरि ६५० ई० के अनुसार किया है। प्रो० आर नरसिंहाचार्य तथा डॉ०वेलवल्कर ने राजवर्मा (रात-

वर्मा) तथा नरसिंह वर्मा द्वितीय (जिसका विरुद अथवा उपनाम राजवर्मा था) की एकता को मानकर दण्डी का समय सातवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध सिद्ध किया है। शैव-धर्म के उत्थापक पल्लवराज नरसिंहवर्मा का समय ६९०-७१५ ई० माना जाता है। इस आधार पर पण्डित बलदेव उपाध्याय प्रभृति विद्वान् दण्डी का समय सप्तम शताब्दी का अन्त तथा अष्टम शताब्दी का प्रारम्भ मानते हैं।

डॉ० भोलाशङ्कर व्यास ने दण्डी के समय पर विचार करते हुए लिखा है "कुछ विद्वान् दण्डी के काव्यादर्श को भामह के पूर्व की रचना मानते हैं। दशकुमारचरित में वर्णित सामाजिक स्थिति ठीक वही है, जो हमें मृच्छकटिक में दिखाई पड़ती है और यह हर्षवर्धन के पूर्व भारत की स्थिति का सङ्केत देती है। दण्डी निश्चित रूप से बाण से प्राचीन हैं पर २५-३० वर्ष से अधिक प्राचीन नहीं।"

डॉ० हरिदत्तशास्त्री भी काव्य शैलियों की तुलना के आधार पर दण्डी को बाण से पूर्ववर्ती मानते हैं। उनका तर्क है कि बाल्मीकि, कालिदास और अश्वघोष की प्रसादगुणयुक्त शैली भारवि, माघ और श्री हर्ष आदि की कविता में क्रमशः कृत्रिम और दुरूह होती गई। यही स्थिति गद्य की भी है। उपनिषदों, महाभाष्य और पञ्चतन्त्र का सरल और सरस गद्य कालान्तर में प्रौढ़ता और जटिलता की ओर अग्रसर होता गया। जिसका चरम परिपाक सुबन्धु और बाण की रचनाओं में देखा जा सकता है। दण्डी की प्रसाद गुण युक्त शैली बाण के अलंकृत गद्य में आकर विशेष प्रौढ़ता को प्राप्त हुई। दण्डी का गद्य बाण के गद्य सदृश श्लेष और वक्रोक्ति जैसे अलङ्कारों से बोझिल नहीं है। यदि दण्डी बाण के परवर्ती होते तो उनका गद्य भी बाण के गद्य सदृश विशेष अलंकृत होता। दशकुमारचरित में जिस समाज का चित्रण मिलता है वह स्पष्टतः हर्षवर्धन से पूर्व के भारत से सम्बन्ध रखता है। गुप्त राजाओं की शक्ति क्षीण होने पर जो अव्यवस्था और स्वच्छन्दता भारतीय समाज में फैली थी उसी का चित्र दशकुमार-चरित में मिलता है। दण्डी निःसन्देह हर्षवर्धन के पूर्ववर्ती हैं। किन्तु दोनों में कुछ दशकों का ही अन्तर है। अतः दण्डी का स्थितिकाल ६००ई० के लग-भग निश्चित होता है।

दण्डी का जीवन परिचय

अवन्तिसुन्दी कथा के आधार पर दण्डी के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त होती है। दण्डी के पूर्वज गुजरात के आनन्दपुर नामक स्थान के रहने वाले थे। बाद में यह परिवार अचलापुर (एलिपुचर) में रहने लगा। "किरातार्जुनीय" महाकाव्य के रचयिता भारवि को दण्डी का प्रपितामह कहा जाता है। नारायण स्वामी के पुत्र का नाम दामोदर था। भारवि का वास्तविक नाम दामोदर बतलाया जाता है। दामोदर के तीन पुत्र हुए। जिनमें 'मनोरथ' मध्यम पुत्र था। मनोरथ के चार पुत्र हुए जिनमें वीरदत्त सबसे छोटा था। वह सुयोग्य एवं दार्शनिक था। वीरदत्त की पत्नी का नाम गौरी था, इन्हीं से महाकवि दण्डी का जन्म हुआ। बाल्यकाल में ही दण्डी के माता-पिता स्वर्गलोक वासी हो गए थे। ये काञ्ची में रहते थे। काञ्ची में विप्लव प्रारम्भ हो जाने के कारण ये जङ्गलों में भटकते रहे। ततः पुनः पल्लवों का अधिकार हो जाने पर पल्लव-नरेश की सभा में रहने लगे और वहीं पर उन्होंने "अवन्तिसुन्दरी कथा" की सर्जना की।

महाकवि दण्डी का उक्त परिचय तभी सत्य माना जा सकता है जब कि अवन्तिसुन्दरी कथा और दशकुमारचरित के रचयिता को एक मान लिया जाय। जहाँ कुछ विद्वान् महाकवि दण्डी को ही दोनों का रचयिता मानते हैं वही डा० डे प्रभृति विद्वान् दोनों के रचयिता को एक नहीं मानते।

दण्डी और भारवि को जिस पद्य के आधार पर जोड़ा जा रहा है। उसमें पाठ भेद प्राप्त हो जाने से कुछ विद्वान् भारवि और दामोदर को एक नहीं मानते।

स मेधावी कविर्विद्वान् भारविं प्रभवं गिराम्।
अनुरुध्याकरोन्मैत्रीं नरेन्द्र विष्णुवर्धने ।। १।२३

इस द्वितीयान्त 'भारविम्' के स्थान पर पूर्व पाठ प्रथमान्त भारवि प्राप्त होता है। भारविम् इस पाठ से यह अर्थ निकलता है कि भारवि की सहायता से दामोदर की मित्रता विष्णुवर्धन से हुई। भारवि और दामोदर दो व्यक्ति हुए और इस प्रकार दामोदर ही भारवि के प्रपितामह हुए न

कि भारवि। इससे इतना तो स्पष्ट ही है कि दण्डी का जन्म एक शिक्षित ब्राह्मण-कुल में हुआ था। एम० रंगाचार्य ने एक किंवदन्ती के आधार पर लिखा है कि पल्लव-राज के पुत्र को शिक्षा देने के लिए दण्डी ने काव्यादर्श की रचना की।

काव्यादर्श के टीकाकार तरुणवाचस्पति ने निम्न प्रहेलिका में काञ्ची के पल्लव नरेशों की ओर संकेत माना है।

नासिक्यमध्या परितश्चतुर्वर्णविभूषिता।
अस्ति काचित् पुरी यस्यामष्टवर्णाह्वया नृपाः ॥११४॥

इस प्रकार दण्डी का काञ्ची के पल्लवराज के आश्रय में रहना सिद्ध ही है।

दण्डी की रचनाएँ

शार्ङ्गधर पद्धति में राजशेखर के नाम से निम्न पद्य उद्धृत है। इस आधार पर दण्डी ने तीन ग्रन्थों कीं रचना की।

त्रयोऽग्नयस्त्रयो देवास्त्रयो वेदा स्त्रयो गुणा.।
त्रयोदण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः॥

दशकुमारचरित और काव्यादर्श को प्रायः सभी विद्वान् दण्डी की ही रचना मानते हैं। दशकुमारचरित गद्य काव्य है तथा काव्यादर्श अलङ्कारशास्त्र का ग्रन्थ है। जो लोग दोनों रचनाओं को एक ही दण्डी की कृति नहीं मानते हैं उनका तर्क है कि काव्यादर्श में जिन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है दशकुमारचरित में उनका पालन नहीं हुआ। एक व्यक्ति स्वयं प्रतिपादित सिद्धान्तों की अवहेलना नहीं कर सकता। इसका उत्तर कुछ विद्वानों ने यह दिया है कि दशकुमारचरित दण्डी का युवावस्था में रचित ग्रन्थ है और काव्यादर्श की रचना के समय कवि ने काव्यशास्त्र सम्बन्धी ज्ञान की प्रौढ़ता को प्राप्त कर लिया था। अब प्रश्न उत्पन्न होता है कि दण्डी की तृतीय रचना कौन है। काव्यादर्श में 'छन्दोविचिति और कलापरिच्छेद का उल्लेख मिलने के कारण छन्दोविचिति को तृतीय रचना मानते हैं। इस बात का कोई प्रमाण उपलब्ध नहीं होता छन्दोविचिति कोई स्वतन्त्रग्रन्थ है। डा० कीथ के अनुसार छन्दोवि-

चित और कलापरिच्छेद कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं है अपितु दो परिच्छेद थे जिन्हें वह काव्यादर्श के परिशिष्ट के रूप में देना चाहते थे। भोज के श्रृंगार-प्रकाश में दण्डिद्विसंधान का उल्लेख मिलता है। आचार्य बलदेव उपाध्याय इस दण्डिद्विसंधान महाकाव्य को दण्डी की तृतीय रचना मानते हैं। यह महाकाव्य आज अनुपलब्ध है। इसमें श्लेष के द्वारा रामायण और महाभारत के कथानको का वर्णन किया गया है। पिशेल मृच्छकटिक को दण्डी की तृतीय रचना मानते हैं। इसके लिए उन्होंने दो तर्कों को उपस्थित किया है। प्रथम मृच्छकटिक का एक पद्य (लिम्पतीव तमोङ्गानि) काव्यादर्श में विना कवि के नाम के उद्धृत है। द्वितीय दशकुमारचरित और मृच्छकटिक में एक सी सामाजिक दशा का चित्रण उपलब्ध होता है। इस द्वितीय तर्क के आधार पर इतना तो कहा जा सकता है कि दोनों का रचना काल एक हो पर यह सिद्ध नहीं हो सकता कि दोनों रचनाएँ एक ही कवि की है। भास के नाटकों के उपलब्ध होने के कारण प्रथम मत भी तथ्यहीन हो गया है क्योंकि वह पद्य भास के नाटकों में उपलब्ध होता है। कुछ विद्वान् दण्डी की तृतीय रचना के रूप में मल्लिका मारुत का नाम लेते हैं। पर यह रचना उद्दण्ड रङ्गनाथ (१५ वीं शताब्दी ई०) द्वारा रचित सिद्ध हो चुकी है।

अब मुख्य रूप से अवन्तिसुन्दरी कथा को दण्डी की तृतीय रचना के रूप में कहा जाता है। इस कथा का पता मद्रास से प्राप्त दो हस्तलेखों से चलता है। एक हस्तलेख गद्य में है द्वितीय पद्य में। गद्य में लिखित ग्रन्थ का नाम अवन्तिसुन्दरी कथा माना गया है और उसके रचयिता के रूप में दण्डी का स्मरण किया जाता है। अवन्तिसुन्दरी कथा दण्डी के दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका का प्रारूप है। डा० भोलाशङ्कर व्यास का कथन है "हमें अवन्तिसुन्दरी कथा को दण्डी की कृति मानने में आपत्ति है और सच बात तो यह है कि महाकवि दण्डी की तृतीय कृति का अभी हमें पता नहीं लग पाया है।" आचार्य बलदेव उपाध्याय ने दशकुमार-चरित का मूल अवन्तिसुन्दरी कथा को मानते हुए लिखा है—"अवन्ति-सुन्दरी ही दण्ड का द्वितीय प्रबन्ध है जिसकी उपलब्धि न होने से कालान्तर

में "दशकुमारचरित" ही उसका स्थानापन्न ग्रन्थ मान लिया गया। तथ्य दोनों के अनुशीलन से स्पष्ट होता है कि अवन्तिसुन्दरी ही मूल ग्रन्थ है जिसका सार अंश दशकुमारचरित में निवद्ध किया गया, परन्तु कब ? इस प्रश्न का ठीक उत्तर नहीं दिया जा सकता। ध्यान देने की वात है कि दशकुमारचरित का नाम न तो अलंकार के किसी ग्रन्थ में और न किसी व्याख्या ग्रन्थ में ही निर्दिष्ट किया गया है। इससे उक्त कथन की पुष्टि होती है।

दशकुमारचरित (कथानक)

दशकुमारचरित के प्रारम्भ में पांच उच्छ्वासों की पूर्वपीठिका है। ततः आठ उच्छ्वासों की कथा है जिनमें केवल आठ कुमारों की कहानियां कहीं गई है अन्त में उपसंहारात्मक उत्तरपीठिका है। विद्वनों का कथन है कि पूर्वपीठिका तथा उत्तरपीठिका दण्डी की लेखनी से लिखित नहीं है। ये वाद के परिवर्धन है। दण्डी के आठ उच्छ्वासों की कथा को पूरा करने का कई कवियों ने प्रयत्न किया। भट्ट नारायण (वेणीसंहार नाटक के रचयिता से इतर कवि), विनायक, चक्रपाणि और गोपीनाथ ने दशकुमारचरित में समय-समय पर परिवर्धन किए हैं। दण्डी के दशकुमारचरित के मूल कलेवर में केवल आठ कहानियां ही उपलब्ध होती हैं, नाम को सार्थकता वनाए रखने के लिए पूर्वपीटिका में पुष्पोद्भव और सोमदत्त की कथा को जोड दिया गया है। इसके अतिरिक्त उसमें राजवाहन तथा उसकी प्रेयसी अवन्तिसुन्दरी की कथा है। इधर "अवन्तिसुन्दरीकथा" के प्राप्त हो जाने पर विद्वान् उक्त कथा को ही दशकुमारचरित की पूर्वपीठिका मानते हैं। अवन्तिसुन्दरी कथा को दण्डी की मौलिक कृति के रूप में स्मरण किया जाता है। अवन्तिसुन्दरी कथा के अनुपलब्ध हो जाने पर दशकुमारचरित को क्रमवद्ध वनाने के लिए पूर्वपीठिका एवं उत्तरपीठिका को जोड़ दिया गया। यही कारण है कि मूल ग्रन्थ तथा पूर्वपीठिका के कथानकों में घटना वैषम्य प्राप्त होता है।

दशकुमारचरित म राजकुमारों के देश-विदेश में भ्रमण तथा साहसपूर्ण कार्यो का हृदयहारक वर्णन है। यह गद्य-साहित्य की एक अनूठी कृति है। यह एक यथार्थवादी रचना है यद्यपि संस्कृत-साहित्य सदैव

आदर्शोन्मुख रहा है परम्परा के अनुसार संस्कृत-ग्रन्थों के नायक उदात्तता तथा शालीनता आदि गुणों से युक्त होते हैं, परन्तु, इस ग्रन्थ के राजकुमार अपनी कार्यसिद्धि के लिए अनुचित साधनों का भी अपनाने में संकोच का अनुभव नहीं करते। इसमें छल, कपट, परस्त्रीहरण, हिंसा, अवैध प्रेम आदि का स्पष्ट उल्लेख मिलता है। जादूगर, चञ्चल तपस्वी, हृदयहीन वेश्याओं, धूर्तकुट्टिनियों, सेवकों, नर्मव्यापार के दूती कर्म में प्रवीण भिक्षुणियां तथा उत्सुक प्रेमियों का चित्रण उपलब्ध होता है।

उच्छ्वास विवरण

पूर्वपीठिका—प्रथम उच्छ्वास में राजहंस तथा वसुमती आदि का वर्णन
द्वितीय उच्छ्वास में कुमारों की दिग्विजय-यात्रा
तृतीय उच्छ्वास में सोमदत्तचरित
चतुर्थ उच्छ्वास में पुष्पोद्भवचरित
पञ्चम उच्छ्वास में राजवाहनचरित का प्रारम्भ
मध्यभाग—प्रथम उच्छ्वास में राजवाहनचरित की समाप्ति
द्वितीय उच्छ्वास में अपहारवर्मा का चरित
तृतीय उच्छ्वास में उपहारवर्मा का चरित
चतुर्थ उच्छ्वास में अर्थपाल का चरित
पञ्चम उच्छ्वास में प्रमति का चरित
षष्ठ उच्छ्वास में मित्रगुप्त का चरित
सप्तम उच्छ्वास में मन्त्रगुप्त का चरित
अष्टम उच्छ्वास में विश्रुत का चरित
उत्तरपीठिका—में विश्रुतचरित की समाप्ति तथा ग्रन्थ का उपसंहार।

पूर्वपीठिका का कथासार

प्रथम उच्छ्वास—मगध देश में पुष्पपुरी नाम की एक उत्तम नगरी है। वहां राजहंस नाम का राजा राज्य करता था। वसुमती नाम की अद्वितीय सुन्दरी उसकी रानी थी। उसके धर्मपाल, पद्मोद्भव तथा सितवर्मा नामक कुलक्रमागत तीन मन्त्री थे। उनमें धर्मपाल के सुमन्त्र, सुमित्र तथा कामपाल नामक तीन, पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव

नामक दो तथा सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा नामक दो पुत्र हुए। उनमें विलासी एवं दुर्विनीत कामपाल घुमक्कड़ हो गया, रत्नोद्भवविदेशों से व्यापार में लग गया और सत्यवर्मा संसार से विरक्त होकर तीर्थयात्राभिलाषी होकर विचरण करने लगा। शेष चारो अपने जनकों के दिवंगत हो जाने पर उनके स्थान पर मन्त्री हो गए।

एक बार राजहंस तथा मालवा के राजा मानसार में युद्ध छिड़ गया। पहले तो राजहंस ने विजय पाई, किन्तु अन्त में उसे पराजित होकर विन्ध्य के अरण्य में शरण लेनी पड़ी। वहां वह अपने नष्ट हुए राज्य को पुनः प्राप्त करने की इच्छा से वामदेव नामक तपस्वी की शरण में गया और उसकी सलाह से वहाँ कुछ वर्षों तक रहा। उसके चारो मन्त्री भी उसके साथ गए। वहाँ रानी ने राजवाहन नामक एक पुत्र को जन्म दिया। वहीं चारो मन्त्रियों के भी, सुमति के प्रमति, सुमन्त्र के मित्रगुप्त, सुमित्र के मन्त्रगुप्त तथा सुश्रुत के विश्रुत नामक पुत्र उत्पन्न हुए। जब राजहंस वन में निवास कर रहे थे, तो पृथक्-पृथक् समय में उसके पास पाँच अन्य बालक लाए गए। यही दशकुमार इस कथा 'दशकुमार-चरितम्' के नायक हैं।

मिथिलाधिपति प्रहारवर्मा राजहंस का मित्र तथा युद्ध में सहायक था। राजहंस के पराजित होने पर वह अपने देश को भागा। मार्ग में भीलों ने उस पर आक्रमण करके लूट लिया। उसके दोनों पुत्र भी बिछुड़ गए। उनमें से एक को एक ब्राह्मण ने छुड़ा लिया और राजा के पास ले आया। राजहंस ने उसका नाम उपहारवर्मा रखा और अन्य कुमारों के साथ उसका भी पालन-पोषण किया। अन्य अवसर पर राजा को प्रहारवर्मा का दूसरा पुत्र भी मिल गया जिसे उसने अपहारवर्मा नाम देकर अपने संरक्षण में रख लिया। रत्नोद्भव अपनी पत्नी सहित समुद्री यात्रा कर रहा था, जहाँ उसका जहाज टूट गया और उस दुर्घटना में उसका पुत्र माँ से अलग हो गया, जिसे एक ब्राह्मण बचा कर राजा के पास लाया और उसका पुष्पोद्भव नाम रखा। कामपाल ने एक यक्षराज की पुत्री तारावती के साथ विवाह किया, जो अपने पुत्र अर्थपाल को राजहंस की पत्नी के पास लाई। सत्यवर्मा के पुत्र को उसकी विमाता ने ईर्ष्यावश एक नदी में फेंकवा दिया

गया, जहाँ से बचाकर वह राजहंस के पास लाया गया, जिसने उसका नाम सोमदत्त रखा। इस प्रकार एकत्र हुए इन दशकुमारों की साथ-साथ शिक्षा-दीक्षा हुई और वे समस्त कला और विज्ञानों में प्रवीण हो गए।

द्वितीय उच्छ्वास—जब सब राजकुमार बड़े हुए, तो तपस्वी वामदेव की सलाह से राजा ने उनको दिग्विजय यात्रा पर भेजा। कुछ समय तक तो वे साथ-साथ यात्रा करते रहे, किन्तु विन्ध्यवन में एक आगन्तुक ब्राह्मण राजवाहन को चुपचाप साथियों को छोड़कर उसे (ब्राह्मण को) पाताल लोक का आधिपत्य प्राप्त करने में, जैसी कि भगवान् शिव ने स्वप्न में उससे भविष्यवाणी की थी, सहायतार्थं लिवा ले गया। वे दोनों एक सुरङ्ग (बिल) के मार्ग से पाताल गए और अपने कार्य में सफल हुए। किन्तु जब कुमार राजवाहन उस स्थान पर लौट कर आया जहाँ उसने अपने साथियों को छोड़ा था, तो वे सब वहाँ से उसी की खोज में चल चुके थे। (जब वे राजवाहन से आ कर पुनः मिले, तो उन्होंने अपने-अपने साहसपूर्ण कार्यों का उससे वर्णन किया, जो 'दशकुमारचरित' के नाम से उनकी प्रणय-कथाओं का चित्रण है)।

अपने साथियों की खोज में भटकता हुआ राजवाहन उज्जयिनी पहुँचा, जहाँ एक उद्यान में उसकी सोमदत्त से भेंट हुई, जिसके साथ शानदार परिचारक वर्ग तथा एक सुन्दरी युवती थी राजवाहन के पूछने पर सोमदत्त ने अपना चरित वर्णन करना प्रारम्भ किया।

तृतीय उच्छ्वास—लाट देश के राजा मत्तकाल ने उज्जयिनी के राजा वीरकेतु के राज्य पर इस आशय से आक्रमण किया कि वह अपनी पुत्री वामलोचना को उसके साथ विवाह दे। सोमदत्त ने वीरकेतु का सहायक बन कर मत्तकाल की सेनाओं को हरा कर प्रथम युद्ध में ही उसे मार डाला। कृतज्ञता से अभिभूत हो कर वीरकेतु ने अपनी पुत्री का विवाह सोमदत्त से कर दिया तथा उसे अपना युवराज भी बना लिया। जब सोमदत्त अपनी पत्नी के साथ एक ज्योतिषी के आदेशानुसार महाकाल के मन्दिर को जा रहा था, तब मार्ग में उसकी राजवाहन से भेंट हो गई। जब सोमदत्त अपनी कथा समाप्त कर चुका, तभी वहाँ पुष्पोद्भव आ पहुँचा

जिसने राजवाहन के प्रार्थना करने पर अपना चरित वर्णन करना प्रारम्भ किया।

चतुर्थ उच्छ्वास—कई दिन तक इधर-उधर भटकने के पश्चात् एक दिन पुष्पोद्भव ने अपने पिता रत्नोद्भव को एक कगार से कूदते हुए देखा जो सोलह वर्ष पूर्व जहाज की दुर्घटना में अपनी पत्नी से बिछुड़ गया था। और उस दुःख को सहन करने में असमर्थ होकर आत्महत्या करना चाहता था। कुछ समय पश्चात् पुष्पोद्भव ने एक स्त्री को जो उसकी माँ निकली, अग्नि में कूदते से बचाया। इस प्रकार अपने माता-पिता से पुनः मिलकर पुष्पोद्भव उज्जयिनी आया जहाँ उसकी एक धनी व्यापारी बन्धुपाल से मित्रता हुई। वहाँ उसकी पुत्री बालचन्द्रिका से परस्पर प्रेम हो गया। बालचन्द्रिका के साथ दारुवर्मा विवाह करना चाहता था। किन्तु वह उसके दुराचारी तथा आततायी होने के कारण घृणा करती थी। अतः पुष्पोद्भव की सलाह से बालचन्द्रिका ने प्रदर्शित किया कि उसके ऊपर एक यक्ष आता है और वह उसी शूरवीर के साथ पाणिग्रहण करेगी जो उसे यक्ष से मुक्त करायेगा। दारुवर्मा यक्ष को मारकर बालचन्द्रिका को प्राप्त करने के लिये उसके पास एकान्त में गया जहाँ उसकी सखी के वेष में स्थित पुष्पोद्भव ने दारुवर्मा को मार दिया। और कुछ दिनों के बाद पुष्पोद्भव का बालचन्द्रिका से विवाह हो गया। बन्धुपाल ज्योतिषी ने पुष्पोद्भव को बताया था कि उज्जयिनी में उसका राजवाहन से मिलन होगा। पुष्पोद्भव के आत्मकथा कहने के पश्चात् राजवाहन सोमदत्त और पुष्पोद्भव सहित उज्जयिनी आये जहाँ उन्होंने अपने को एक ब्राह्मण पुत्र के रूप में छिपाया।

पञ्चम उच्छ्वास :—उज्जयिनी में रहते हुए राजवाहन ने एक दिन अपने पिता राजहंस के शत्रु राजा मानसार की सुन्दर पुत्री अवन्तिसुन्दरी को देखा। राजकुमार तथा राजकुमारी दोनों ही एक दूसरे को देखकर परस्पर आसक्त हो गये। मानसार ने अपना राज्य अपने पुत्र दर्पसार के हाथों में सौंप दिया था जो अपने भतीजे दारुवर्मा और चण्डवर्मा को युवराज नियुक्त करके तपस्या करने चला गया। इनमें से दारुवर्मा को पुष्पोद्भव ने मार दिया और चण्डवर्मा ही उसके राज्य का

उत्तराधिकारी वना। एक ऐन्द्रजालिक ब्राह्मण विद्येश्वर की सहायता से राजवाहन और अवन्तिसुन्दरी का अग्नि को साक्षी करके विवाह हो गया। और वे दोनों सुरति-सुख के लिए अन्तःपुर में प्रविष्ट हुए।

यहीं पर पूर्वपीठिका समाप्त हो जाती है। राजवाहन के चरित्र का अवशिष्ट भाग आगे दशकुमारचरित के मध्यभाग के प्रथमउच्छ्‌वास में समाप्त होता है।

दण्डी की शैली एवं वर्णन कौशल

दण्डी वैदर्भी[1] गद्यरीति के आचार्य हैं। दण्डी की रचना में समस्त पदों की न्यूनता तथा माधुर्य व्यञ्जक वर्णों का प्रयोग पाया जाता है। वाणभट्ट के गद्य सदृश दीर्घकाय समासों का वाहुल्य दण्डी के गद्य में दृष्टिगत नहीं होता। यदि कहीं समस्तपद आये भी हैं, तो वे सरल एवं सुस्पष्ट हैं, वाण के समान दीर्घकाय वाक्यों का प्रयोग भी दण्डी की रचनाओं में नहीं दिखलाई पड़ता है। वस्तु वर्णनों में जहाँ कहीं दण्डी ने दीर्घ वाक्यों का प्रयोग किया भी है वे भी वाण के वाक्यों से छोटे ही हैं।

दण्डी की भाषा सजीव, चुस्त, प्रवाहमयी एवं प्रसाद गुणयुक्त है। अर्थ की स्पष्टता, रस की रम्य अभिव्यक्ति, कल्पना की सजीवता और पदलालित्य ये दण्डी की शैली के विशेष गुण हैं। अनुप्रास तथा शाब्दी क्रीडा का विशेष मोह दण्डी की शैली में अधिक नहीं है। यही कारण है कि पूर्व-पीठिका की कृत्रिम शैली को देखकर विद्वान् यह अनुमान लगाने लगे हैं कि यह पूर्व-पूठिका दण्डी की लेखनी से निःसृत नहीं है।

तत्र वीरभटपटलोत्तरंगतुरंगकुञ्जरमकरभीषणसकलरिपुगणकटक जलनिधिमथनमन्दरायमाणसमुद्दण्ड भुजदण्डः, पुरन्दरपुराङ्गणवनविहरण-परायणगीर्वाणतरुणगणिकागणजेगीयमानयातिमानया शरदिन्दुकुन्दघनसार-नीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरक्षीरगिरिशाट्टहासकैलासकाशनीकाशमूर्त्या, रचितदिगन्तरालपूर्त्या कीर्त्याऽभितः सुरभितः, स्वर्लोकशिखरोरुरुचिररत्न-रत्नाकरमेखलावलयित धरणीरमणीसौभाग्यभोगभाग्यवान्' ·····भूयो वभूव।

---

1. वैदर्भीरीति का लक्षण है—माधुर्यव्यञ्जकैर्वर्णै रचना ललितात्मिका।
अवृत्तिरल्पवृत्तिर्वा वैदर्भीरीतिरिष्यते॥
अर्थात् माधुर्यगुण के व्यञ्जक कोमल वर्णों की लालित्यपूर्ण रचना जिसमें समासों का अभाव अथवा अल्पता (लघुसमासयुक्त रचना) हो, वैदर्भीरीति कही जाती है।

डॉ० भोलाशंकर व्यास के शब्दों में—"दण्डी वैदर्भीरीति के सफल कवि हैं। वैसे वर्णनों में दण्डी के भी वाक्यों में यत्र-तत्र समासान्त शैल मिल जाती है पर वे शाब्दी या आर्थी क्रीडा के फेर में अधिक नहीं फँसते, अभिव्यञ्जना की स्वाभाविकता और अर्थ की स्पष्टता की ओर दण्डी का खास ध्यान रहता है और कभी-कभी शाब्दी या आर्थी क्रीडाओं का प्रयोग भी किया जाता है पर वे प्रभावोत्पादकता या अर्थ प्रतीति में बाधक नहीं होती। नख-शिख वर्णन तथा प्रकृति-चित्रण के लिए बाण की बहुत प्रशंसा की जाती है, पर दण्डी के ये वर्णन उस पैमाने के न होने पर भी असुन्दर नहीं हैं।"

सरल तथा प्रसाद गुण युक्त शैली की प्रेरणा दण्डी को पञ्चतन्त्रादि आख्यान ग्रन्थों से मिली थी। पञ्चतन्त्र में जहाँ सुगम भाषा और सरल शैली का प्रयोग है वहाँ शैली और विषय के बीच उचित सन्तुलन नहीं मिलता। दण्डी ने कौशल के साथ कथाओं के विषय अनुरूप ही अपनी गद्य-शैली को ढाला है। पञ्चतन्त्र की भांति न कथा-विषय को प्रधानता देकर काव्य की सरसता में व्याघात पहुँचाया है और न सुबन्धु और बाण भट्ट की कृत्रिम शैली को अपनाकर कथा तत्त्व को गौण बनाया है। दण्डी की शैली सुबन्धु की श्लेषाक्रान्त शैली की भांति कृत्रिम न होकर विषयानुकूल है। बाण जहाँ समास्तपदावली के प्रयोग को ही गौरव मानते हैं वहीं दण्डी वस्तु के वर्णन के अनुरूप समस्त एवं समास रहित दोनों प्रकार की पदावलियों के प्रयोग में सिद्धहस्त है। यदि कहीं समस्त पदावली का प्रयोग किया भी है तो वह स्थल इतने दुरुह नहीं हो पाए हैं कि उनका अर्थ विशेष कठिनाई से समझा जा सके।

दण्डी का पदलालित्य प्रसिद्ध ही है। दण्डी ने गद्य रचना बड़ी कुशलता के साथ की है जिसमे पद्योचित सरसता एवं सुकुमारता के दर्शन होते हैं—

निशास्वपि श्मशानमधिरात्रे. निजनिलयनिशितनिःशेषजने नितान्त निशीते निशीथे, अयुग्मशरःशरशयने शाययिष्यति, सखे! सैषा सज्जनाचरिता सरणिः यदणीयसि कारणेऽनणीयानादरः संदृश्यते ......।

दण्डी के दशकुमारचरित में अर्थ की स्पष्टता एवं अभिव्यक्ति की यथार्थता पाई जाती है, उनके वाक्य विन्यास ओजस्वी, ललित एवं सुव्यक्त हैं वही कल्पना की उर्वरता एवं शब्दविन्यास की चारुता दण्डी

की शैली की विशेषताएँ हैं। दण्डी ने मुहावरेदार भाषा का भी प्रयोग किया है— अभवदीयं हि नैव किञ्चिद् मत्सम्बद्धम्।

दशकुमारचरित के आख्यानक काव्य होने पर भी उसकी भाषा श्लेषादि अलंकारों तथा दीर्घसमासों के बाहुल्य से दबी नहीं है। दण्डी ने दशकुमारचरित में ललित-पदावली का प्रयोग किया है। पदे-पदे हास्य और वाक्पटुता की पुट प्राप्त होती है।

राजहंसो नाम घनदर्पकंदर्पसौंदर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव। तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावती कुलशेखरमणी रमणी बभूव।

आनुप्रासिक चमत्कार के साथ-साथ यमक की छटा भी दर्शनीय है। मन्त्रगुप्त की कहानी में दण्डी ने चित्रकाव्य शैली का भी प्रयोग किया है। मन्त्रगुप्त ओष्ठ्य वर्णों का उच्चारण नहीं करता क्योंकि प्रेयसी के चुम्बनों तथा दन्तक्षतों ने उसके ओठों को क्षत कर दिया है। सुबन्धु और दण्डी ने अपनी शैली की ओर अधिक ध्यान दिया है पर दण्डी का ध्यान अभिव्यञ्जनापक्ष की ओर ही नहीं है।

दशकुमारचरित में हास्य तथा व्यंग्य का भी पुट है। जिससे पाठक उसकी ओर आकृष्ट होता है। कुमार अपनी कार्यसिद्धि के लिए नैतिकता पर ध्यान नहीं देते। कुमारों के अनुभवों का हास्यात्मक वातावरण समूची कृति में प्राप्त होता है। काममञ्जरी तपस्वी मारीच को भी ठग लेती है। चम्पा के कंजूसश्रेष्ठियों का धन चुराने वाले अपहारवर्मा की कहानी में हास्य है। रानी का वेष बनाकर राजा विकटवर्मा को धोखा देने की उपहारवर्मा की योजना में भी व्यंग्य प्राप्त होता है। प्रसंगानुकूल दण्डी की शैली में परिवर्तन हो जाता है। विश्रुतचरित में करुणवर्णना में गम्भीर शैली को अपनाया है। धूमिनी, गोमिनी निम्बवती तथा नितम्बवती की कहानियों की शैली अत्यन्त सरल एवं स्वाभाविक है। दण्डी का भाषा पर पूर्ण अधिकार था।

दण्डी ने राजमार्ग, निर्जन अरण्य, श्मशान, राजमहल आदि का वर्णन बड़ी सूक्ष्मता के साथ उपन्यस्त किया है। अकाल का करुण भयंकर वर्णन उनकी सूक्ष्म निरीक्षण शक्ति का उदाहरण है—

तेषुजीवत्सु नववर्षं वर्षाणि द्वादश दशशताक्षः, क्षीणसारं सस्यम्, ओषध्यो वन्ध्याः, न फलवन्तो वनस्पतयः, क्लीबा मेघाः, क्षीणस्रोतसः स्रवन्त्यः, पङ्कशेषाणिपल्लवानि निर्निस्यन्दान्युत्समण्डलानि, विरलीभूतं

कन्दमूलफलम्, अवहीनाः कथाः, गलिताः कल्याणोत्सवक्रियाः, बहुलीभूतानि तस्करकुलानि, अन्योन्यमभक्षयन्प्रजाः, पर्यलुठन्नितस्ततो वलाकापाण्डुराणि नरशिरः कपालानि, पर्यहिण्डन्त शुष्काः काकमण्डल्यः शून्यीभूतानि नगर ग्रामखर्वटपुट भेदनादीनि।

दशकुमारचरित में सूर्योदय एवं सूर्यास्त के सुन्दर चित्रण मिलते हैं। ये वर्णन पात्रों की मनःस्थिति के अनुरूप ही है। द्वितीय उच्छ्वास में मरीचि कथा प्रसंग में सूर्यास्त का वर्णन आया है। यह संन्ध्या के समय सूर्य इसलिए छिप रहा है क्योंकि पथ-भ्रष्ट महर्षि मारीच के मन से निः सृत अज्ञानान्धकार उसका स्पर्श न करले। मुनि का राग सन्ध्याकालीन राग के रूप में परिणत हो जाता है। मुनि के कथन से वैराग्य प्राप्त कमल वन संकुचित हो जाते हैं।

अथ तन्मनश्च्युततमः स्पर्शभियेवास्तं रविरगात्। ऋषिमुक्तश्च रागः सन्ध्यात्वेनास्फुरत्। तत्कथादत्तवैराग्याणीव कमलवनानि संकुचन्।

तृतीयउच्छ्वास में भी सूर्यास्त का सुन्दर वर्णन प्राप्त होता है—

"अस्तगिरिकुटपातक्षुभितशोणित इव शोणी भवति भानुबिम्बे पश्चिमाम्बुधि पयः पातजिर्वापितपतङ्गागारधधसम्भार इव भरिततमसि नभसि विजृम्भिते"।

उत्प्रेक्षालंकार के परिवेश में लिपटे हुए सूर्योदय का वर्णन देखिए—

चिन्तयत्येव मयि महार्णवोन्मानमार्तण्डतुरंगश्वासरयावधूतेव व्यवर्तत त्रियामा। समुद्रगर्भवासजडीकृत इव मन्दप्रतापो दिवसकरः प्रादुरासीत्।

जहाँ दण्डी नख-शिख वर्णन में कुशल हैं वहीं भयंकर वर्णन भी करने में नहीं चूकते। कापालिक सिद्ध का भयंकर वर्णन बड़ा ही प्रभावोत्पादक बन गया है।

इति विद्धक्षान्तहृदयः किंकरगतया दिशा किंचिदन्तरं गतस्तरलतरनरास्थिशकलरचितालंकाराक्रान्तकायम्, दहनदग्धकाष्ठनिष्ठाङ्गाररजः कृताङ्गरागम्, तडिल्लताकारजटाधरम्, हिरण्यरेतस्यरण्यचक्रान्धकारराक्षसे क्षणगृहीतनानेन्धनग्रासचञ्चदर्चिषि दक्षिणेतरेण करेण तिलसिद्धार्थकादीन्निरन्तरचटचटायितानाकिरन्तं कञ्चिदद्राक्षम्।

दशकुमारचरित के सप्तमउच्छ्वास में वसन्तऋतु का संक्षिप्त और परम्परागत चित्रण उपलब्ध होता है। जो शृङ्गारिक कथा के सर्वथा अनुकूल है।

दण्डिनः पदलालित्यम्

संस्कृत-जगत् में दण्डी के सम्बन्ध में "दण्डिनः पदलालित्यम्" यह सूक्ति प्रचलित है। दण्डी की रचनाओं में बाणभट्ट सदृश दीर्घसमास वाली पदावलियो का जहाँ अभाव है वहाँ सुबन्धु की प्रत्यक्षरश्लेष वाली शैली का भी अभाव है। दण्डी ने वर्णन के अनुकूल समस्त या असमस्त पदावली का प्रयोग किया है। पञ्चतन्त्र की सरल एवं स्पष्ट शैली में जहाँ विषयानुकूलता प्राप्त नहीं होती वहाँ दशकुमारचरित की शैली इस दोष से मुक्त है। दण्डी की रचना में जहाँ विषयानुकूल पदावली मिलती है वहाँ पदलालित्य भी है।

निष्ठुर वेश्या महर्षि मरीचि की समस्त-आशा-लताओं पर लालित्यपूर्ण शब्दों के द्वारा तुषारापात कर देती है।

भगवन्! अयमञ्जलिः। चिरमनुगृहीतोऽयं दासजनः, स्वार्थं इदानी मनुष्ठेयः।

दण्डी की गद्य रचना के पढ़ने में लय है। शब्दों की इस संयोजना ने ही उसमें लालित्य उपस्थित कर दिया है।

तत्र चकोरलोचनावचितपल्लवकुसुमनिकुरम्बं महीरुह समूहं शरदिन्दुमुख्या मन्मथसमाराधनस्थानं च नताङ्गी पदपंक्तिचिह्नितं शीतलसैकततलं च सुदतीभुक्तमुक्तं माधवीलतामण्डपान्तरपल्लवतल्पं च विलोकपॅल्लवलनातिलकविलोकनवेलाजनितशेषाणि स्मारं-स्मारं मन्दमारुतकम्पितानि नवचूतपल्लवानि मदनाग्निशिखा इव चकितो दर्शं दर्शं मनोजकर्णजपानामिव कोकिलकीरमधुकराणा क्वणितानि श्रावं श्रावं मारविकारेण क्वचिदप्यवस्थातुम सहिष्णुः परिबभ्राम।

राजकुमार को जो पत्र उसकी प्रयसी से प्राप्त हुआ था उसमें समास रहित, मधुर एवं सरल पदावली दृष्टिगोचर होती है।

> सुभग कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम्।
> मम मानसंसमभिलषति त्वं चित्तं कुरु तथा मृदुलम्॥

महाकवि दण्डी की रचना में अनुप्रासमिश्रित ललितपदावली सहृदयपाठकों को अपनी ओर आकृष्ट कर लेती है।

राजहंसो नाम घनदर्पकंदर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव।

अनुप्रासयुक्त पदावली के साथ ही साथ यमक की छटा ने इसके काव्य में चार चांद लगा दिये हैं।

तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणीरमणी बभूव।

मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रहः स विग्रह इव साग्रहोऽभिमुखीभूय भूपो निर्जगाम ।

लावण्योपमिपमितपुष्पसायक, भूनायकः भवानेव भाविन्यपि जन्मनि बल्लभो भवतु ।

दण्डी का दशकुमारचरित इन ललित्यपूर्णपदावलियों से भरपूर है।

दण्डी की यह पदलालित्य एवं संगीतलय-पूर्णशैली विषय तथा वर्ण्य-रस (शृङ्गार आदि) के सर्वथा अनुकूल होने से पाठक के हृदय को त्वरित प्रभावित कर लेती है।

दशकुमारचरित का साहित्यिक मूल्याङ्कन

'दशकुमारचरित' दण्डी की एक मौलिक कृति है। इसका वर्तमान संस्करण तीन भागों में विभाजित है—

(१) पूर्वपीठिका । (२) दशकुमारचरित । (३) उत्तरपीठिका ।

इनमें से केवल मध्यभाग दशकुमारचरित ही दण्डी की रचना मानी जाती है। पं० बलदेव उपाध्याय ने इस पर अपना मन्तव्य इस प्रकार दिया है–"मूल ग्रन्थ के आठ उच्छ्वासों में केवल आठ ही कुमारों की कार्यावली का रुचिर विन्यास है, परन्तु नाम की सार्थकता सिद्ध करने के लिए पूर्वपीठिका में अन्य दो कुमारों का चरित्र जोड़ दिया गया है तथा अधूरे ग्रन्थ को पूर्णता की कोटि पर पहुँचाने के लिये अन्त में उत्तरपीठिका भी जोड़ी गई है। इस प्रकार आरम्भ में पूर्वपीठिका से तथा अन्त में उत्तरपीठिका से सम्पुटित मूलग्रन्थ ही आज दशकुमारचरित के अभिधान से विख्यात है।

'दशकुमारचरित' में शब्दविन्यास की कलित-क्रीड़ा देखते ही बनती है। नाद सौन्दर्य का एक उदाहरण देखिये—

"तयोरथ रथतुरग खुरक्षुण्णक्षोणी समुद्भूते करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौतमूले नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकथाजनजवनिकापटमण्डप इव वियत्तलव्याकुले धूलीपटले दिविषद् ध्वनि धिक्कृतान्यध्वनिपटहध्वान वधिरिताशेषदिगन्तरालं शस्त्राशस्त्रि हस्ताहस्ति परस्परामित सैन्यं जन्यमजनि"।

दण्डी के काव्य का सबसे बड़ा गुण उनका पदलालित्य है। उनकी कृति में अर्थ की स्पष्टता और रस की मार्मिक व्यञ्जना प्रत्यक्ष ही विलसती है। दशकुमारचरित की भाषा में चुटीलापन एवं स्वाभाविकता के साथ प्रवाहपूर्णता भी है। दण्डी ने तत्कालीन समाज एवं संस्कृति को बड़े ही व्यंग्य-विनोद युक्त ढंग से प्रस्तुत किया है। दण्डी की गद्यशैली को हृदयंगम करने के लिए एक उदाहरण पर्याप्त होगा—

'अथैकदा वामदेवः सकलकलाकुशलेन कुसुमशायकसंशयितसौन्दर्येण कल्पितसोदर्येण साहसोपहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारेण-कुलिशाङ्कितकरेण कुमार निकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं समभिगम्य तेन तां कृतां परिचर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमल युगलमिलन्मधुकराय-माणकाकपक्षं विदलिष्यमाण विपक्ष कुमारचयं गाढमालिङ्ग्यमितसत्य वाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत।'

दण्डी अपनी वैदर्भी गद्य-शैली के लिये विशेष प्रसिद्ध हैं। उनकी गद्यशैली बड़ी ही सुबोध, सरस एवं मार्दवमयी है। प्रसादगुण तो दण्डी की कृति की व्यक्तिगत विशेषता है। उसकी भाषा में न तो अलंकारों का अनावश्यक आडम्बर है और न दीर्घ-समासों का साम्राज्य ही। सुबन्धु की प्रत्यक्षरश्लेषमयी विचार धारा दण्डी को नहीं रुची। दशकुमारचरित की भाषा वर्ण्यविषय के अनुरूप परिवर्तित होती हुई चलती है उसमें दैनन्दिनवाग्व्यवहार का सहज चित्रण है। पं० बलदेव उपाध्याय के शब्दों में :—

"साहित्यिक दृष्टि से दशकुमारचरित एक श्लाघनीय रचना है। यह आख्यान काव्य का उज्ज्वल दृष्टान्त है, जिसके पात्र जीते-जागते जगत् के प्राणी हैं और जिनका चित्रण शिष्ट हास्य तथा मधुर व्यंग्य का आश्रय लेकर प्रस्तुत किया गया है। कथानक में पारस्परिक मनोरम सामञ्जस्य है। वर्णन की स्वल्पता न तो कथानक के प्रवाह को रोकती है और न अवान्तर कथाएँ मुख्य कथा में किसी प्रकार का अवरोध खड़ा करती हैं।"

इस प्रकार 'दशकुमारचरित' दण्डी का वह कीर्तिमान् स्तम्भ है जो साहित्यिक-सौन्दर्य की सभी विधाओं की अप्रतिम प्रयोगशाला है और यह साहित्यिक दृष्टिकोण से संस्कृत गद्य की एक अनुपम एवं अनूठी कृति है। 'दशकुमारचरित' की लोकप्रियता ने दण्डी को वाल्मीकि तथा व्यास के पश्चात् होने वाला उनके समान तृतीय कवि का स्थान दिया है—

जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवि इति ततो व्यासे कवयस्त्वपि दण्डिनि॥

दण्डी के काव्य में सामाजिक-स्थिति

दशकुमारचरित एक यथार्थवादी रचना है। उसमें तत्कालीन समाज का स्वाभाविक स्वरूप चित्रित किया गया है। दण्डी ने तत्कालीन समाज को अति सूक्ष्मदृष्टि से देखा और उसका वैसा ही चित्रण उपस्थित किया। तत्कालीन समाज पर व्यंग्य और विनोदपूर्ण ये यथार्थचित्रण हृदय-

हारक बन गए हैं। दण्डी समान्य नैतिक मूल्यों अथवा उच्च आदर्शों के प्रति कम आस्थावान् हैं। उनके पात्र आदर्शवादी न होकर यथार्थवादी हैं। थोथे आदर्श की कलई खोलने वाले हैं। दम्भी तपस्वी, कपटी ब्राह्मणों, कुट्टिनियों, दासियों आदि के चित्र यथार्थवादी हैं। दण्डी ने देवताओं और तपस्वियों की दुर्बलताओं का भी चित्रण किया है। पूर्वपीठिका में देवताओं और ब्राह्मणों का आदर्शवादी रूप मिलता है। पूर्वपीठिका में ब्राह्मणों को भूसुर कहा गया है तथा देवताओं के यजन का भी वर्णन है पर मध्यभाग (मूलदशकुमारचरित) में इस प्रकार के चित्रण नहीं मिलते इसी आधार पर आलोचक पूर्वपीठिका को बाद में जोडा हुआ तथा अन्य कवि की रचना मानते हैं। दण्डी के पात्र ऐसे भी कार्य करते हुए दिखलाई पड़ते हैं जिनको अनुचित कहा जा सकता है। ऐसे वर्णनों में कहीं-कहीं कवि ने नैतिकता की पुट लगा दी है। यथा अपहारवर्मा चौरी में इसलिए प्रवृत होता है क्योंकि वेश्या द्वारा निर्धन बनाए हुए व्यक्ति की उसे सहायता करनी है, इस कार्य में भी अपहारवर्मा का कोई भी स्वार्थ निहित नहीं है। दशकुमारचरित के पात्र दैवीशक्ति पर विश्वास न रखकर अपने पुरुषार्थ पर विश्वास रखने वाले हैं। दैवीशक्तियाँ उनके कार्यो को सम्भव है इतना सफल न बना पाती। दण्डी का उद्देश्य इन कथाओं के द्वारा नीतिशास्त्र अथवा व्यावहारिक ज्ञान की शिक्षा देना न था बल्कि वह अपने पाठकों को इन विचित्र कथाओं के द्वारा आनन्दित करना चाहते थे।

दम्भी तपस्वी धूर्तब्राह्मणों और छली वेश्याओं के यथार्थचित्रण दशकुमारचरित में प्राप्त होते हैं। काममञ्जरी नामक वेश्या मरीचि नामक एक महर्षि को अपनी कुशलता से इस प्रकार ठगती है कि पाठक उसे पढ़कर मन्त्रमुग्ध-सा हो जाता है। दण्डी ने ब्राह्मणों और पुरोहितों की दुर्बलताओं को पाठकों के सम्मुख लाकर रख दिया है। दण्डी ने मार्कण्डेय ऋषि का उपहासात्मक चित्रण उपस्थित किया है। जिसने अपने ऊपर अप्सरा की हारयष्टि गिर जाने से क्रुद्ध होकर उसे रजत शृङ्खला हो जाने का शाप दे दिया था। मरीचि को आकृष्ट करने के लिए काममञ्जरी ब्रह्मा, इन्द्र, चन्द्र, सूर्य, वृहस्पति, पराशर आदि देवी देवताओं और ऋषियों को प्रमाण रूप से उपस्थित करती है। अन्त में वह मरीचि को अपनी ओर आकृष्ट करने में सफल हो जाती है। इसी प्रकार दण्डी ने राजा, श्रेष्ठी, वेश्याओं और दूती कर्म में नियुक्त बौद्ध भिक्षुणियों पर भी

आक्षेप किए हैं। उसके पात्र भले ही कहीं दैव का नाम ले दें पर वे पुरुषार्थ पर ही विश्वास रखते हैं। चोरी करते समय अपहारवर्मा तथा दस्युओं के साथ पकड़ा जाने वाला पूर्णभद्र अपनी विपत्ति का कारण दैव को वतलाने पर भी अपने साहस और उद्यम को प्रदर्शित करता है।

दण्डी ने नारी के प्रत्येक रूप का चित्रण उपस्थित किया है यदि कहीं नारी पतिवञ्चक एवं क्रूरहृदया है तो कहीं पतिपरायणा और मृदुहृदया भी है। धूमिनी यदि क्रूरता की मूर्ति है तो गोमिनी पतिप्राणा सती है।

दण्डी के दशकुमारचरित में राजनीति, कामशास्त्र, चौर-शास्त्र के नियमों का यथास्थान परिचय मिलता है। जिससे तत्कालीन सामाजिक स्थिति का सुचारु-रूप से अध्ययन किया जा सकता है। गुप्तकाल की समाप्ति एवं हर्षवर्धन के राज्य की स्थापना के पूर्व देश की यही स्थिति हो गई थी। मृच्छकटिक में भी इसी समाजिक स्थिति का चित्रण मिलता है।

दण्डी के समय शैवधर्म की प्रधानता थी। शिव की तपस्या के प्रसाद से ही मातङ्ग पाताललोक का स्वामी वनता है। श्रावस्ती नगरी में शिव (त्र्यम्वक) के समीप समाज एकत्र होता था — अतीतायां तु यामिन्यां देवदेवस्य त्र्यम्बकस्य श्रावस्त्यामुत्सवसमाजमनुभूय बन्धुजनम्।.........जैनधर्म का भी प्रचार हो चुका था। बौद्धभिक्षुणियां विवाहकार्य के लिए दूतीका कार्य किया करती थी। संगीत एवं मनोरञ्जन के लिए विशेष सभागृह हुआ करते थे। मुर्गों का युद्ध भी हुआ करता था। मित्र के आगमन पर कपूरमिश्रित ताम्बूल देने का प्रचलन था। तत्कालीन समाज में व्यवसाय का अधिक प्रचलन था। सीमन्तोत्सव मनाने का प्रचलन था। व्यापारी जन अपने व्यापार के लिए नावों पर यात्रा करते थे तथा बैलों की सहायता से माल ढोया करते थे। शकुन आदि पर विश्वास किया जाता था वन्धुपाल के द्वारा शकुन वतलाए जाने पर भी पुष्पोद्भव राजवाहन से मिलता है। स्त्रियाँ आभूषणों का प्रयोग किया करती थीं। कामी पुरुष अपनी प्रेयसी को स्वर्णजटित आभूषण, सुन्दरवस्त्र, कस्तूरी और हरिचन्दन, कर्पूरमिश्रित ताम्बूल तथा सुगन्धित पुष्प दिया करते थे। राजाओं के मनोरञ्जन के लिए जादूगर भी घूमा करते थे।

दण्डी की इस रचना में उक्त प्रकार के समाज का यथार्थपूर्ण मनोहर चित्रण किया गया है।

गद्य कवियों में दण्डी का स्थान

संस्कृत भाषा के प्रमुख गद्यकारों में दण्डी का अप्रतिम स्थान है। वे उच्चकोटि के सरस कवि हैं। दण्डी के गद्य-काव्य का कथानक जहाँ वैचित्र्यपूर्ण हैं वहाँ सरस एवं प्रवाहपूर्ण वर्णनशैली भी तदनुरूप है। दण्डी का प्रशस्त कीर्ति-स्तम्भ 'दशकुमारचरित' ही है। नैसर्गिक शैली, विशद चरित्रचित्रण, शिष्टपरिहास, बुद्धि-विलास, रसानुरूप शब्द-विन्यास इत्यादि गुण-गण 'दशकुमारचरित' को गद्यसाहित्य में मूर्धन्य स्थान प्रदान करते हैं। दण्डी का प्रधान वैशिष्ट्य है अपने समकालीन समाज का अनावरण-चित्रण।' दण्डी ने तात्कालिक समाज को सूक्ष्मदृष्टि से देखा था एवं उनका सामाजिक अनुभवक्षेत्र भी व्यापक था, उन्होंने समाज के भद्र-अभद्र दोनों ही पक्षों को अपने चित्रण में प्रतिबिम्बित किया है। 'दशकुमारचरित' में कपटी एवं दम्भी तपस्वी ब्राह्मण तथा छली वेश्याओं का चित्रण इतना रुचिकर एवं यथार्थ हुआ है कि पाठकों को मन्त्र-मुग्ध हो जाना पड़ता है। नारीमनोविज्ञान में भी दण्डी का प्रवेश कम नहीं है। 'धूमिनी' जैसे घृणित और 'गोमिनी' जैसे पवित्र नारीचरित्र उनकी ही बुद्धि की उपज है।

दण्डी का कलापक्ष भी अत्यन्त मनोज्ञ है। उनकी रचना में पदलालित्य का प्राधान्य है। दण्डी जैसा पदलालित्य न तो सुबन्धु की 'वासव दत्ता' में है और न वाणभट्ट के हर्षचरित व कादम्बरी में ही। अनुप्रास युक्त मनोरम पद-विन्यास में वे अत्यन्त सिद्धहस्त हैं। उदाहरणार्थ—

१. असत्येनास्य नास्यं संसृज्यते।

२ अयुग्मशरः शरशयने शाययिष्यति।

३. स पुण्यैः कर्मभिः प्राप्य पुरुषायुषं पुनरपुण्ये न प्रजानाभगण्यता भरेषु। आदि।

इस प्रकार उनकी अनुप्रासमयी मनोरम पदावली नितान्त अभिराम है। दण्डी की वर्णनशैली सरल और प्रसादपूर्ण है। वे अपनी वैदर्भी गद्यशैली

और पदलालित्य के लिये विशेष ख्यात हैं—'दण्डिनः पदलालित्यम्।
वैदर्भी रीति का प्रकृष्ट प्रयोग यदि पद्य में कालिदास ने किया है तो गद्य में दण्डी ही वैदर्भी के अप्रतिम प्रयोजक हैं।

"दण्डी की गद्यशैली बड़ी ही सुबोध सरस तथा प्रवाहमयी है उनका गद्य न तो श्लेष के बोझ से वही दबा हुआ है और न कहीं समास के प्रहार से प्रताड़ित है। उनका गद्य दिन-प्रतिदिन के व्यवहार योग्य, सजीव और चुस्त है। उसकी प्रसादमयता (सरलता) दण्डी की निजी विशेषता है। ये अपनी भाषा को अलंकारों के आडम्बर (अनाश्यक बोझ) से सदा बचाते हैं। इसीलिये इनकी भाषा प्रवाहपूर्ण, मंजी हुई और मुहाविरेदार है। सुबन्धु के गद्य के समान न तो वह प्रत्यक्षर श्लेषमय है और न बाणीय गद्य के समान समासों से लदी हुई तथा गाढ़बन्धता से मण्डित ही। तथ्य यह है कि गद्य के इतिहास में दण्डी का अपना निजी मार्ग है।"

पं० बलदेव उपाध्याय

दण्डी ने छोटे से छोटे सरल वाक्यों में जीवन के महनीय तथ्यों को उभारा है जो कि व्यञ्जना से ओतप्रोत हैं। स्थालीपुलाकन्याय से यहाँ कतिपय उदाहरण प्रस्तुत हैं—

१. भवदीयं हि नैव किञ्चित मत्सम्बद्धम्।
 (मेरा सर्वस्व आपका ही है।)
२. जीवितं हि नाम जन्मवतां चतुःपञ्चाण्यहानि।
 (जीवन क्या है ? दो-चार दिनों का नाम।)
३. स्वदेशो देशान्तरमिति नेयं गणना विदग्धस्य।
 (विदग्ध-जन इस प्रकार नहीं सोंचते कि यह अपना देश है वह पराया)

दण्डी के गद्य का यह स्पृहणीय स्वरूप अन्य किसी कवि-कृति में नहीं दीखता। पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय ने दण्डी की वर्णन-विधा का बड़ा सटीक उल्लेख किया है—

'उनकी शब्द-योजना में रस छलका पड़ता है। हास्य, वाक्पटुता एवं सूझ की चटकीली उर्वरता स्थल-स्थल पर दृष्टिगोचर होती है। उन्होंने अपने कथानकों को इस प्रकार क्रमबद्ध किया है कि वे सर्वथा सुसंगठित

होकर खिल उठे हैं। भाषावैभव का प्रदर्शन उन्होंने न किया हो ऐसी बात नहीं, पर साहित्यिक अलङ्करण में कहीं-कहीं फँस जाने पर भी वह दुरूह और अरुचिकर नहीं है। सुललित एवं सुगम गद्य लिखने में दण्डी निष्णात हैं और उनकी रचना, कला से चमत्कृत सामाजिक चुनौतियों के कारण, एक महान प्रौढ़ और रस-पेशल रचना के रूप में सम्पन्न हुई है।'

—पं० चन्द्रशेखर पाण्डेय

दण्डी के काव्य में शब्दविन्यास का सर्वोत्तम गुण नाद-सौन्दर्य या श्रुति-विलास भी है। "वे सुबन्धु तथा बाण इन दोनों में से किसी की भी शैली का अनुगमन न कर एक नवीन प्रकार की शैली के उद्भावक हैं, जिनके विशेष गुण हैं—अर्थ की स्पष्टता, रस की सुन्दर अभिव्यक्ति, पद का लालित्य तथा दैनन्दिन प्रयोग की क्षमता। 'दण्डिनः पदलालित्यम्' के ऊपर पण्डित समाज अपने को निछावर किये हुए है।

—आचार्य बलदेव उपाध्याय

इस प्रकार दण्डी सभी गद्यकवियों में अग्रगण्य हैं। उनके पदलालित्य पर विमोहित होकर एक समीक्षक ने एकमात्र उन्हें ही कवि माना है—

कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः।

आचार्य दण्डी की प्रशस्तियां

१. कविर्दण्डी कविर्दण्डी कविर्दण्डी न संशयः।

२. त्रयोऽग्नयस्त्रयोदेवास्त्रयोवेदास्त्रयोगुणाः।
त्रयोदण्डिप्रबन्धाश्च त्रिषु लोकेषु विश्रुताः॥

३. जाते जगति वाल्मीकौ कविरित्यभिधाऽभवत्।
कवी इति ततो व्यासे कवयस्त्वयि दण्डिनि॥

४. आचार्यदण्डिनो वाचामाचान्तामृतसंपदाम्।
विकासो वेधसः पत्न्या विलासमणि दर्पणः॥

५. दण्डिनः पदलालित्यम्।

श्रीगणेशाय नमः

दशकुमारचरितम्

पूर्वपीठिका

प्रथमोच्छ्वासः

ब्रह्माण्डच्छत्त्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः ।
क्षोणीनौकूपदण्ड क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः ॥
ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः ।
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः ॥

हिन्दी अर्थ - आचार्य दण्डी वामनावतार भगवान् विष्णु का स्मरण कर रहे हैं।

भगवान् विष्णु का दण्ड के सदृश चरण आपका कल्याण करे, जो चरण ब्रह्माण्डरूपी छत्र का दण्ड है अथवा ब्रह्मा जी की उत्पत्ति स्थान भूत कमल का नालदण्ड है। पृथिवीरूपी नाव का कूपदण्ड [पतवार] है प्रवहमान आकाश गङ्गारूपी ध्वजा का केतुदण्ड है। अथवा नक्षत्र समुदाय रूपी चक्र [रथचक्र] का अक्षदण्ड है [लकड़ी का दण्डविशेष धुरी] अथवा तीनों लोकों की विजय का सूचक स्तम्भ है, तथा देवों से द्वेष रखने वाले अर्थात राक्षसों के लिए यमराज के तुल्य अर्थात मृत्युरूप है। [इस प्रकार का भगवान् का चरण आप लोगों का कल्याण करे]।

अन्वयः—ब्रह्माण्ड छत्रदण्डः, क्षतधृति भवनाम्भोरुहः नालदण्डः, क्षोणी-नौकूपदण्डः, क्षरदमर सरित्पट्टिका केतुदण्डः, ज्योतिश्चक्राक्षदण्डः, त्रिभुवन विजयस्तम्भदण्डः, विबुध द्वेषिणां कालदण्डः त्रैविक्रमः अङ्घ्रिदण्डः ते श्रेयः वितरतु।

संस्कृतव्याख्याः—अस्मिन् श्लोके महाकविः दण्डी वामनरूपेणावतीर्णस्य बालिछलनापरस्य भगवतः विष्णोः चरणस्य स्मरणं करोति।

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः = ब्रह्माण्डमेव भुवनमेव जगदित्यर्थः छत्रमातपत्रम् तस्य दण्डः आधारयष्टिः भगवतो विष्णोर्विश्वविश्वाधारत्वात्, शतधृतिभवना-म्भोरुहः=शतंधृतयो यस्य स शतधृतिर्ब्रह्मा तस्य भवनमुत्पत्तिस्थानं तद्

भूतस्य अम्भोरुहः [अम्भारी जले रोहतीति] कमलस्य इत्यर्थः, नालदण्डः नालयष्टिः इत्यर्थः, क्षौणीनौकूपदण्डः=क्षोणी पृथिवी एव नौस्तरणिस्तस्याः कूपदण्डः गुणवृक्षः [पतवार के अतिरिक्त एक अन्य बांस] जिसे भाषा में 'गुन रखा' या 'डोलकाठी' कहते हैं। क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः=क्षरन्ती प्रस्रवन्ती प्रवहन्ती वा याऽमरसरितं वियद्गंगा मन्दाकिनीत्यर्थः सैव पट्टिका पताका तस्याः केतुदण्डः ध्वजदण्डस्वरूपः, ज्योतिश्चक्राक्षदण्डः= ज्योतिषां नक्षत्रादीनां चक्रं समूह एव चक्रं रथचक्रं तस्याक्षदण्डः काष्ठदण्डविशेषः [जो पहिए की नाभी स्थानीय होता है] त्रिभुवनविजय-स्तम्भदण्डः=त्रयाणां भुवनानां समाहारस्त्रिभुवनं त्रिलोकं तस्य त्रिजयस्त-त्सूचकः आवेदको वा स्तम्भदण्डः स्तम्भदण्ड स्वरूप इत्यर्थः, विबुधद्वेषिणां =विबुधान् सुरान् देवान् वा द्विषन्ति द्रुह्यन्ति इति विबुधद्वेषिणः राक्षसा इत्यर्थः तेषांकृते कालदण्डो यमराज स्वरूपः मृत्युरिति भावः, त्रैविक्रमः=त्रिविक्रमस्यायं त्रैविक्रमः वैष्णवः विष्णोरिति भावः, अङ्घ्रिदण्डः=अङ्घ्रिः चरणः दण्ड इव इति अङ्घ्रिदण्डश्चरणदण्डः ते=तुभ्यम्, श्रेयः=कल्याणं शिवं वा वितरतु=प्रददातु, प्रयच्छतु वा।

टिप्पणी—इस श्लोक के प्रत्येक पाद के अन्त में दण्ड शब्द का प्रयोग हुआ है। अतः पादान्त्यानुप्रास स्पष्ट है। यहाँ पर ब्रह्माण्ड, क्षोणी और अमर सरित् पर छत्र, नौ और पट्टिका का आरोप किया गया है और यह आरोप भगवान् के चरण में दण्ड कूपदण्ड एवं ध्वजदण्डत्व के आरोप में कारण है अतः परम्परित रूपक अलंकार है। यह श्लेष रहित है किन्तु 'ज्योतिश्चक्राक्षदण्ड' यहाँ पर चक्र शब्द के श्लिष्ट होने से श्लेष मूलक है। अन्यत्र निरङ्ग रूपक है। इस प्रकार दोनों में निरपेक्ष भाव होने से संसृष्टिः अलंकार हो जाता है।

त्रिविक्रम और त्रिभुवन पद साभिप्राय विशेषण होने से परिकर अलंकार होता है। स्रग्धरा छन्द है।

इस श्लोक में ब्रह्माण्डच्छत्र—अमर सरित् पदों से भगवान् के ऊर्ध्वपाद, शतधृति एवं ज्योतिश्चक्रादि पदों से मध्यमपाद क्षोणीनौकूप एवं विबुधद्वेषि पदों से भूतलस्थ पाद का संकेत देकर त्रिभुवन एवं त्रिविक्रम से तीनों का संकेत दिया है। यह श्लोक अपने व्यंग्य रूप में उपन्यास के नायक राजवाहन की विजय एवं पराक्रम का सूचक है।

आचार्य दण्डी की भगवत् विषयिणी रति व्यंग्य होने से भावध्वनि भी है। यह आशीर्वादात्मक मंगलाचरण है। "शम्भुः शतधृतिः स्रष्टा" इति हैमः, 'क्षोणिर्ज्या काश्यपी क्षितिः' इति कोशः 'श्रेयो निःश्रेयसामृतम्' स्याद्धर्ममस्त्रियां पुण्यश्रेयसी सुकृतं वृषः "इति कोशः कालो मृत्यौ महाकाले समये यमकृष्णयाः मेदिः०।"

पाटलिपुत्र वर्णनम्—

अस्ति समस्तनगरी निकषायमाणा शश्वदगण्य पण्यविस्तारितमणि गणादि वस्तु जातव्याख्यातरत्नाकरमाहात्म्या मगधदेश शेखरीभूता पुष्पपुरी नाम नगरी।

हिन्दी अर्थ—समस्त नगरियों की कसौटी स्वरूप तथा असंख्य बिक्री के हेतु फैलाये गये मणिसमूह एवं अन्य वस्तुसमूहों के द्वारा सागर [रत्नाकर] के समान महिमा वाली [अर्थात् वह नगरी भी रत्नाकर थी] मगधदेश के शिर के आभूषण स्वरूप पुष्पपुरी नामक एक नगरी है।

संस्कृत व्याख्या :—पुष्पपुरी नाम नगरी अस्ति। इत्यन्वयः। समस्त नगरीनिकषायमाणा=समस्तानां निखिलानां नगरीणां पुरीणां निकषः निकषोपलः निकषपाषाणो वा तद् वदाचरतीति निकषायमाणा ललामभूतेति भावः, शश्वदगण्य पण्यविस्तारितमणि गणवस्तु जात व्याख्यात रत्नाकर माहात्म्या=शश्वत् सततं अगण्यैःअसंख्यैः संख्यातीतैः पण्यैः विक्रेय वस्तुभिः विस्तारितैः प्रसारितैः मणिगणादिवस्तुजातैः विभिन्न पद्मरागादि अन्य वस्तु समूहैः व्याख्यातं प्रकटितं रत्नाकरस्य सागरस्येव माहात्म्यं महत्त्वं महिमा वा यस्याः सा, मगधदेश=शेखरीभूता=मगधदेशस्य तन्नामक देशस्य शेखरीभूता शिरोभूषणस्वरूपा, पुष्पपुरी कुसुमपुरं पाटलिपुत्रमिति आधुनिकं नाम, नामनाम्नी [अथवा नाम इत्यव्ययम्] नगरी=पुरी, अस्ति=वर्तते।

टिप्पणी—निकषायमाणा=निकष इवं आचरतीति विग्रहे कर्तुः क्यङ् सलोपश्च इस सूत्र से क्यङ् होने के पश्चात् शानच् एवं टाप् होता है। उपमा अलंकार है।

शेखरीभूता=अशेखरः शेखरः सम्पन्ना इति शेखरीभूता=अभूत तद् भावेच्विः से इस सूत्र च्विप्रत्यय मुख्य है। नगरी की समृद्धता का वर्णन होने

से उदात्त अलंकारः = "उदात्तमृद्धेश्चरितं श्लाघ्यं चान्योपलक्षणम्" ये दोनो अलंकार परस्पर निरपेक्ष रूप से स्थित होने के कारण संसृष्टि अलंकार हैं। पुष्पपुरी आधुनिक पटना का नाम है।

मगधराज हंस वर्णनम्—

तत्रवीरभटपटलोत्तरङ्ग तुरङ्ग कुञ्जरमकरभीषणसकलरिपुगणकटकजलनिधिमथन मन्दरायमाण समुद्दण्ड भुजदण्डः, पुरन्दर पुराङ्गणवन विहरण परायण तरुणगणिकागणजेगीयमानयातिमानया शरदिन्दु कुन्दघनसारनीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरक्षीरगिरिशाट्टहासकैलाशकाशनीकाशमूर्त्यारचितदिगन्तराल पूर्त्या कीर्त्याभितः सुरभितः, स्वर्लोक शिखरोरुरुचिररत्नरत्नाकर वेलामेखलायितधरणीरमणीसौभाग्यभोगभाग्यवान्, अनवरत यागदक्षिणारक्षितशिष्ट विशिष्टविद्यासम्भारभासुरभूसुरनिकरः विरचितारातिसन्तापेन प्रतापेन सतततुलितवियन्मध्यहंसः, राजहंसो नाम घनदर्पकन्दर्पसौन्दर्यसोदर्यहृद्यनिरवद्यरूपो भूपो बभूव।

हिन्दी अर्थ–उस नगरी में राजहंस नामक राजा हुआ। उसकी विशाल भुजाएँ योधाओं के समूह रूप तरंगों, घोड़े और हाथियों रूप मकरों से भयप्रद, सेना समुद्र को मथने के लिए मन्दराचल पर्वत के तुल्य थीं। जिसकी कीर्ति अमरावती के आँगन में अर्थात् नन्दनवन में विहार में तत्पर तरुण अप्सराओं के द्वारा गायी जाती थी तथा शरत्कालिक चन्द्रमा, कुन्दपुष्प, कपूर तुषार [वर्फ] मुक्ताहार, कमलनाल, हंस, ऐरावत [इन्द्र का हाथी], पानी, दूध, शंकर का अट्टहास, कैलाश पर्वत, काशपुष्प के तुल्य मूर्ति वाली, दिशाओं के मध्यभाग की पूर्ति करने वाली कीर्ति से सुगन्धित अर्थात् मनोहर था। सुमेरु पर्वत के शिखर के विशाल और सुन्दर रत्नों से युक्त या देवों के शिर पर लगी हुई मनोहर मणियों वाला सागर की तट रूपी करधनी से घिरी हुई पृथ्वी रूपी स्त्री के सौभाग्य का भोग करने वाला था, निरन्तर यज्ञों में दक्षिणाओं के द्वारा शिष्ट एवं विद्वान ब्राह्मण समुदाय का रक्षक था, शत्रुओं को कष्ट देने वाले प्रताप के द्वारा जो मध्याह्न के सूर्य के सदृश था, अपने रूप के अभिमानी कामदेव के रूप के तुल्य अर्थात् काम को भी तिरस्कृत करने वाला उसका रूप था। इस प्रकार अनिन्द्य रूप वाला राजहंस नामक राजा हुआ।

संस्कृतव्याख्या :—तत्र राजहंसो नाम भूपो बभूवेत्यन्वयः। तत्र= पुष्पपुरीनाम्नगर्याम, वीरभट पटलोत्तरङ्गतुरगकुञ्जरमकरभीषण सकल-रिपुगणकटक जलनिधिमथनमन्दरायमाणसमुद्दण्डभुजदण्डः = वीराणां शूराणां, भटानां युयुत्सूनां योद्घृणां पटलेन वृन्देन समूहेन वा उत्तरङ्गः उद्गताः तरंगाः वीचयः यस्मिन् सः अथवा वीराश्च ते भटाः वीरभटाः तेषां पटलानि तैः उद्गताः तरंगाः यस्य यस्मिन् वा स उत्तरंगः, तुरगाः, घोटकाः कुञ्जराः हस्तिनः ते मकराः नक्राः इव [मगर इति भाषायाम्] तैः भीषणः भयंकरो भीतिप्रदो वा अथवा तुरगाश्च कुञ्जराश्च तुरगकुञ्जराः त एव मकराः तैः भीषणः, सकलानां निखिलानां रिपूणां शत्रूणां गणः समूहः तस्य कटकं सेना जलनिधिः सागर इव तस्य मथने मन्थने आलोडने वा मन्दरायमाणः मन्दराचल इवाचरन् [मन्थनदण्ड इवेतिभावः] समुद्दण्डः समुन्नतः समुद्यतो वा भुजो बाहुर्दण्ड इव यस्य सः इत्थंभूतः राजहंसः इत्यर्थः-अथवा सकलाश्च ते रिपवः तेषां गणः तस्य कटकं तदेव जलनिधिः तस्य मथने मन्दर इवाचरन् समुद्दण्डो भुज दण्डो यस्य सः, पुरन्दर पुराङ्ग-णवन विहरणपरायण तरुणगणिकागण जेगीयमान याति मान या=पुरन्दरस्य इन्द्रस्य यत पुरं नगरं पुरन्दरपुरं [अमरावतीति भावः] तस्य अङ्गणवने चत्वरोपवने नन्दनवने इत्यर्थः विहरणपरायणेन विहरणतत्परेण भ्रमणशीलेन वा तरुण गणिकागणेन तरुणाप्सरोवृन्देन जेगीयमानया कीर्त्यमानया अति अत्यन्तं मानं परिमाणं यस्याः तया अर्थात् अपरिमितया अति प्रमाणया वा, शरदिन्दुकुन्दघनसार नीहारहारमृणालमरालसुरगजनीरक्षीरगिरिशाट्टहास कैलासकाशनीकाशमूर्त्या=शरदः शरदृतोः इन्दुश्च चन्द्रश्च कुन्दश्च माध्य पुष्पञ्च नीहारश्च हिमश्च हारश्च मौक्तिकस्त्रक् च मृणालं च बिसञ्च मरालश्च हंसश्च सुरगजश्च ऐरावतश्च नीरञ्च सलिलञ्च क्षीरञ्च दुग्धञ्च गिरिशस्य शङ्करस्य अट्टहासश्च महाहास्यञ्च कैलासश्च कैलाशपर्वतश्च काशश्च काशपुष्पविशेषश्च तैः नीकाशा सदृशी समा वा मूर्तिः स्वरूपं यस्याः तया, रचित दिगन्तरालपूर्त्या=रचिता विहिता कृता वा दिगन्त-रालानां दिग्मध्यभागानां पूर्तिः सम्पूर्तिः पूरणं वा यया तया, कीर्त्या= यशसा, अभितः परितः सर्वतो वा सुरभित=मनोहरः, स्वर्लोकशिखरोरु-रुचिररत्नरत्नाकरवेलामेखलायित धरणी रमणी सौभाग्य भोग भाग्यवान्=

स्वः स्वर्गः लोकः आश्रयः येषां ते स्वर्लोकाः देवा इति भावः तेषां शिखरेषु मौलिषु शिरःसु वा उरुणि स्थूलानि पीवराणि वा रुचिराणी सुन्दराणि रत्नानि मणयो यस्येत्थं भूतस्य रत्नाकरस्य उदधेः वेला सीमा तट प्रदेशो वा सैव मेखला काञ्चीदाम तयेवाचरिता, धरणी धरैव रमणी कान्ता तस्याः सौभाग्यस्य ऐश्वर्यस्य भोगे उपभोगे भाग्यवान् भाग्यशाली यः सः, अथवा स्वलोकः सुरालयो मेरुः तन्नामकः पर्वतः तस्य शिखरं तद्वत् तत् सम्बन्धीनि वा उरुणि सुन्दराणि रत्नानि तद्युक्तो रत्नाकरः शेषं पूर्ववत्, अनवरत यागदक्षिणा रक्षित शिष्ट विशिष्टविद्यासम्भार भासुरभूसुरनिकरः=अनवरतं सततं यागेषु यज्ञेषु या दक्षिणाद्रव्यदानं तया रक्षितः संरक्षितः पालितो वा शिष्टानां सदाचारानुरक्तानां विशिष्ट विद्यासम्भारेण विविध-शास्त्र ज्ञानाधिक्येन भासुराणं देदीप्यमानां भूसुराणां ब्राह्मणानां निकरः समूहो येन सः, अथवा शिष्टाश्च ते विशिष्टविद्यासम्भारेण भासुराः भूसुराः तेषां निकरो येन तेन, विरचितारातिसंतापेन प्रतापेन=विरचितो विहितोऽरातीनांमरीणां सन्तापः दुःखं क्लेशो वा येनेत्थं भूतेन प्रतापेन=ऐश्वर्येण तेजसेत्यर्थः, सतततुलितवियन्मध्यहंसः=सततं निरन्तरं तुलित उपमितो वियत आकाशस्य मध्यहंस मध्याह्न कार्तिकसूर्यः येन, प्रतापेन सूर्योपम इत्यर्थः, घनदर्पकन्दर्प सौन्दर्य-सोदर्यं हृद्य निरवद्य रूपः=घनो निविडः सान्द्रो वा दर्पाऽवलेपः यस्य तस्य कन्दर्पस्य कामदेवस्य यत् सौन्दर्यं रूपं तस्य सोदर्यं सदृशं समानं वा हृद्यं रमणीयं निरवद्यं निर्दोषं निष्कलंकं वा रूपं श्रीः यस्येत्थं भूतो राजहंसो नाम भूपः=नृपः, बभूव=अभवत् ।

टिप्पणी—वीरभट पटल—इत्यादि अंश में पहले उपमित समास के आधार पर विग्रह किया गया है क्योंकि उसकी भुजाओं को मन्दराचल के समान बताने वाले क्यङ् प्रत्यय का प्रयोग किया गया है अतः उपमा अलंकार ही उचित है किन्तु रूपक समास की दूसरी व्याख्या भी लिखी गयी है। यह व्याख्या अरुचिकर है। यदि रूपक अलंकार माना जाय तो सेना के ऊपर जलनिधि का आरोप होने से उसी का प्राधान्य होने से, उसमें भुजाओं के द्वारा मन्थन सम्भव नहीं। अतः उपमा अलंकार ही उचित प्रतीत होता है यथा मुखचन्द्रः प्रकाशते. मुख चन्द्रं चुम्बति इत्यादि सन्देहास्पद स्थलों पर क्रिया के आधार पर ही उपमा और रूपक का निर्णय लेना

चाहिए। स्वर्लोक—इत्यादि अंश में रूपक अलंकार है कीर्ति के भी विभिन्न उपमान प्रस्तुत किये गये हैं। इस प्रकार उपमा और रूपकों की निरपेक्ष भाव से स्थिति होने से संसृष्टि अलंकार है। "वारस्त्री गणिकावेश्या' इत्यमरः 'निभसंकाशनीकाशप्रतीकाशोपमादयः' स्त्रीकट्यां मेखलाकाञ्ची सप्तकी-रशनातथा' अभिघातिपरारातिप्रत्यर्थिपरिपन्थिनः' इत्यमरः।

राज्ञीवसुमती वर्णनम्—

तस्य वसुमती नाम सुमती लीलावतीकुलशेखरमणी रमणी बभूव।

हिन्दी अर्थ—उस राजा राजहंस की वसुमती नामक रानी थी जो अच्छी बुद्धि वाली तथा स्त्रीसमुदाय की मुकुटमणि थी।

संस्कृतव्याख्याः—तस्य=राजहंसस्य, वसुमती=तन्नामधेया महिषी, सुमती=सु सुष्ठु शोभना वा मतिः बुद्धिर्यस्या सा, लीलावती कुलशेखरमणी =लीलावतीनां प्रमदाना कान्तानां वा कुलस्य समूहस्य शेखरस्य शिरोभू-षणस्य मुकुटस्य वा मणिः रत्नमिवेति, रमणी=पत्नी महिषीत्यर्थः, बभूव =आसीत्।

टिप्पणी—मणी+रमणी की 'रोरि' सूत्र की सन्धि रमणीय बनपड़ी है। अनुप्रास भी दृष्टव्य है।

रोषरूक्षेण निटिलाक्षेण भस्मीकृतचेतने मकरकेतने तदा भये-नानवद्या वनितेति मत्वा तस्य रोलम्बावली केशजालम्, प्रेमाकरो रजनीकरो विजितारविन्दं वदनम्, जयध्वजायमानो मीनो जाया-युतोऽक्षियुगलम्, सकलसैनिकाङ्गवीरो मलयसमीरो निःश्वासः, पथिकहृद्दलनकरवालः प्रवालश्चाधर बिम्बम्, जयशङ्खो बन्धुरा लावण्यधरा कन्धरा, पूर्णकुम्भौ चक्रवाकानुकारौ पयोधरौ, ज्याय-माने मार्दवासमाने बिसलते च बाहू, ईषदुत्फुल्ल लीलावतंसकह्लार कोरको गङ्गावर्तसनाभिर्नाभिः, दूरीकृतयोगिमनोरथो जैत्ररथोऽति-घनं जघनम्, जयस्तम्भभूते सौन्दर्यभूते विघ्नतयति जनारम्भे रम्भे चोरुयुगम्, आतपत्रसहस्रपत्रं पादद्वयम्, अस्त्रभूतानि प्रसूनानि तानीतराण्यङ्गानि च समभूवन्निव।

हिन्दी अर्थ—(एकबार) क्रोध के कारण कठोर भगवान् शंकर ने तृतीयनेत्र से काम को जला देने पर भय के कारण (उसके सहायकों ने) मानो उस रानी को प्रशस्त स्त्री समझ कर (अर्थात् भगवान् शंकर मुझे न

जला देवें इस कारण से भयभीत होकर उसके सहायकों ने इसी रानी में अपनी सुरक्षा समझ करके अपने स्वरूपानुसार प्रत्येक अङ्ग का आश्रय लिया। भ्रमर समुदाय ने केशसमूह का, प्रेम के भण्डार चन्द्रमा ने कमल को जीतने वाले मुख का, विजयध्वज के चिन्ह पानी सहित मछली ने नेत्रयुगल का, सम्पूर्ण सैनिकों के प्रधान मलय वायु ने निश्वास का पथिकों के हृदय को भेदन करने में तलवार के सदृश पल्लव ने अधरोष्ठ का विजयशंख के सदृश उच्चावच सौन्दर्य ने कण्ठ का, दोनो पूर्ण घटों ने चक्रवाक के समान दोनों स्तनों का, धनुष की डोरी के समान कोमलता में अतुलनीय कमल तन्तुओं ने भुजाओं का कुछ खिले हुए कर्णभूषण बने हुए कमलकालिका ने गङ्गा के भ्रमर के तुल्य नाभि का, योगियों के मनोरथ (ब्रह्म साक्षात्कार) को दूर करने वाले विजयशील रथ ने जघनस्थल का, ऋषियों के (योगाभ्यास) में बाधा पैदा करने वाले सौन्दर्य स्वरूप तथा विजयस्तम्भ रूप केलेयुगल ने दोनों जांघों का, छत्र के तुल्य कमल ने दोनों पैरों का अस्त्रभूत पुष्पों ने उसके अन्य अंगों का मानो आश्रय लिया।

संस्कृतव्याख्या :—रोषरूक्षेण=रोषेण क्रोधेन रुक्षः कठोरो निष्ठुरो वा तेन निष्कृपेणेतिभावः, निटिलाक्षेण=ललाटनेत्रेण निटिले ललाटे अक्षिः नेत्रं यस्य तेन शंकरेणेत्यर्थः, भस्मीकृत चेतने=भस्मीकृता विनाशिता चेतना चैतन्यं यस्य तस्मिन् , मकरकेतने=मकरो नक्रः केतने ध्वजे यस्य तस्मिन् कामे तदा=तदानीम, भयेन=भीत्या (भस्मीकरणस्य) अनवद्या=निष्कलंका निर्दोषा वा, वनिता=कान्ता, इति मत्वा=सुविचार्य निश्चित्य वा, तस्य=कामदेवस्य, रोलम्बावली=रोलम्बानां भ्रमराणां अवली पंक्तिरिति भ्रमर श्रेणीत्यर्थः, केशजालम्=केशवृन्दम, प्रेमाकरः प्रेम्णः स्नेहस्य आकरः खनिः रजनीकरः=चन्द्रः, विजितारविन्दम्विजितं प्रभयान्यक्कृतं अरविन्दं कमलं ये न तत्, वदनम्=आननं मुखम्वा, जयध्वजायमानः=जयध्वजः विजयकेतनं तद् इवाचरतीति, जायायुतः=सस्त्रीकः, मीनः=मत्स्यः, अक्षियुगलम्=नेत्र द्वन्द्वम्, सकलसैनिकाङ्गवीरः=सकलेषु अखिलेषु सैनिकेषु भटेषु अङ्गवीरः प्रधानभटः, मलयसमीरः=मलयवायुः, निश्वासः= निश्वास वायुः, पथिकहृद्दलनकरवालः=पथिकां पान्थानां हृद्दलने हृदय विदारणे करवालः खड्गः, प्रवालः=किसलयं, अधरविम्बम्=अधरोष्ठः,

जयशंखः=विजयशंखः, वन्धुरा=निम्नोन्नता, लावण्यधरा=सौन्दर्ययुता, कन्धरा=ग्रीवा, पूर्णकुम्भौ=जलपूर्णघटौ, चक्रवाकानुकारी=चक्रवाक सदृशौ, पयोधरौ=स्तनौ, ज्यायमाने=ज्या इव मौर्वीव आचरन्त्यौ म र्दवा-समाने=मार्दवे मृदुत्वे असमाने असदृशे, विसलते=मृणालयुगलमिति भावः, बाहू=भुजौ, ईषदुत्फुल्ल लीलावतंसकह्लार कोरकः=ईषत् स्वल्पं उत्फुल्लं विकचं लीलावतंसः कर्णभूषणं यत् कह्लारं कमलं तस्य कोरकः कुड्मलः,गङ्गावर्त सनाभिर्नाभिः=गङ्गायाः भागीरथ्याः आवर्तः भ्रमः तस्य सनाभिः समा नाभिः, दूरीकृतयोगि मनोरथः=दूरीकृताः अपनीताः योगिनां योगाभ्यासपराणां मनोरथाः अभिलाषाः येन सः, जैत्ररथः=विजयरथः, अतिघनम्=अति संयुक्तम्, जघनम्=जघन प्रदेशः, जयस्तम्भभूते=विजयस्तम्भ स्वरूपे (कामस्येतिशेषः) सौन्दर्यभूते=लावण्ययुक्ते, विघ्नितयतिजनारम्भे=विघ्निताः बाधायुक्ताः कृताः यतिजनानां मुनिजनानां आरम्भाः=उद्योग-कर्माणि याभ्यां ते, रम्भे=कदल्यौ, ऊरुयुगम=सक्थि द्वन्द्वम्, आतपत्रसहस्रपत्रम्=आतपत्रं छत्रं तद् रूपं यत् सहस्रपत्रं कमलं, पादद्वयम्=चरण-युगलम्, अत्रभूतानि=अत्र जातानि, प्रसूनानि=पुष्पाणि, इतराणि=पूर्ववर्णितभिन्नानि, अङ्गानि=शरीराङ्गानि समभूवन्=अभवन्, इव=इत्युत्प्रेक्षायाम् ।

टिप्पणी—क्रिया उत्प्रेक्षा अलंकार है। अरविन्दमशोकं च शिरीषं चूतमुत्पलम्" यह पांच कामदेव के बाण हैं। 'पयोधरौ' शब्द का चमत्कार द्रष्टव्य है क्योंकि स्तन भी पयोधर है और पूर्णकुम्भ भी पयोधर हैं। [जल] 'इन्दिन्दिरोऽली रोलम्बो द्विरेफः' इति हैमः 'खनिः स्त्रियामाकरः' 'पान्थः पथिकः', "कौक्षेयकः मण्डलाग्रः करवालः कृपाणवत्" "बन्धुरं तून्नतानतम्" "स्यादावर्तोऽम्भसां भ्रमः" 'प्रसूनं कुसुमं सुमम्' इत्यमरः।

विजितामरपुरे पुष्पपुरे निवसता सानन्तभोगलालिता वसुमती वसुमतीव मगधराजेन यथासुखमन्वभावि।

हिन्दी अर्थ—अमरावती [इन्द्रपुरी] को जीतने वाली [सुन्दरता से] पुष्पपुरी नामक नगरी में रहते हुए मगधराज राजहंस ने शेषनाग के फणों से लालित पृथ्वी से समान अपार भोगों सन्तुष्ट वसुमती नामक रानी के साथ सुखोचित विहार किया।

संस्कृतव्याख्या:—विजितामरपुरे=विजितं सौन्दर्येण तिरस्कृतं अमरपुरं देवनगरं येन तस्मिन्, पुष्पपुरे=कुसुमपुरे तन्नामके पत्तने, निवसता=निवासं कुर्वता, सानन्तभोगलालिता=सा=राज्ञी, अनन्तस्य वासुकेः भोगेन फणेन लालिता धृतेति [पृथ्वीपक्षे] अनन्ताश्च अपरिमिताः संख्यातीताः वा ते भोगाः तैः लालिता परितुष्टा [इत्थंभूता राज्ञी] वसुमतीव:=पृथ्वीव, वसुमती=तन्नाम महिषी, मगधराजेन=मगधेश्वरेण, यथासुखम् = सुखमनतिक्रम्येति सुखानुसारमित्यर्थः । अन्वभावि=उपभुक्ता ।

टिप्पणी —श्लेषानुप्राणित उपमा अलंकार। अन्वभावि=अनुपूर्वक 'भू' सत्तायां धातु से कर्म में लुङ् लकार होता है।

अमात्य वर्णनम्—

तस्य राज्ञः परमविधेया धर्मपालपद्मोद्भवसितवर्मनामधेया धीरधिषणावधीरितविबुधाचार्यविचार्यकार्यसाहित्याः कुलामात्यास्त्रयोऽभूवन् ।

हिन्दी अर्थ—उन महाराज के परम विनीत तथा अपनी गम्भीर बुद्धि से देवगुरु वृहस्पति को भी विचारणीय कार्य समुदाय में अनाहृत करने वाले धर्मपाल, पद्मोद्भव एवं सितवर्मा नामक तीन कुलक्रमागत मन्त्री थे।

संस्कृतव्याख्या:—तस्य=पूर्वोक्तस्य, राज्ञः=मगधराजस्य नृपस्य परमविधेयाः=परमविनीताः, धीरधिषणावधीरित विबुधार्यविचार्यकार्य साहित्याः धीरा प्रगल्भा गमीरा वा या धिषणा बुद्धिः तथा अवधीरितं तिरस्कृतं विबुधानां देवानां आचार्यस्य गुरोः विचार्यं विचारार्हं कार्यसाहित्यं कार्यसमूहः यैस्ते, कुलामात्याः=कुलक्रमागत मन्त्रिणः, अभूवन्=अभवन् ।

तेषां सितवर्मणः सुमतिसत्यवर्माणौ, धर्मपालस्य सुमन्त्रसुमित्रकामपालाः, पद्मोद्भवस्य सुश्रुतरत्नोद्भवाविति तनयाः समभूवन् ।

हिन्दी अर्थ —उन मन्त्रियों में सितवर्मा के सुमति और सत्यवर्मा नामक, धर्मपाल के सुमन्त्र, सुमित्र और कामपाल नामक, पद्मोद्भव के सुश्रुत और रत्नोद्भव नामक पुत्र हुए।

संस्कृतव्याख्या:—तेषाम्=मन्त्रिणां, तनयाः=पुत्राः समभूवन=अभवन् ।

टिप्पणी —'तेषाम्' यतश्चनिर्धारणम्' इस सूत्र से निर्धारण में षष्ठी विभक्ति हुई है।
'बुद्धिर्मनीषाधिषणा' इत्यमरः

तेषु धर्मशीलः सत्यवर्मा संसारासारतां बुद्ध्वा तीर्थयात्राभिलाषी देशान्तरमगमत्।

हिन्दी अर्थ —उन पुत्रों में धर्मशील सत्यवर्मा संसार को असार समझकर तीर्थयात्रा करने की इच्छा से दूसरे देश को चला गया।

संस्कृतव्याख्या :—तेषु=पुत्रेषु, धर्मशीलः=धर्मस्वभावः धार्मिक इति भावः, संसारासारताम्=संसारस्य जगतः असारतां विनश्वरतां, बुद्ध्वा=ज्ञात्वा, तीर्थयात्राभिलाषीः तीर्थाटनेच्छुकः देशान्तरम्=अन्यदेशम्, अगमत्=अगच्छत्।

विटनटवारनारीपरायणो दुर्विनीतः कामपालो जनकाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य भुवं बभ्राम।

हिन्दी अर्थ —विट, नट तथा वेश्याओं में अनुरक्त होता हुआ धृष्ट कामपाल पिता की तथा बड़े भाई की आज्ञा का अतिक्रमण कर पृथ्वी पर भ्रमण करने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—विटनटवारनारीपरायणः = विटेषुचधूर्तेषु च नटेषु च शैलूषेषु च वारनारीषु च वेश्यासु च परायणः अनुरक्तः इति, दुर्विनीतः=अविनीतः, जनकाग्रजन्मनोः=जनकस्य पितुः अग्रजन्मनश्च= ज्येष्ठभ्रातुश्च, शासनम्=आज्ञाम्, अतिक्रम्य = तिरस्कृत्य, भुवम्= पृथ्वीम्, बभ्राम्=भ्रमणं चकार।

टिप्पणी—विटोऽद्रौ लवणे षिड्गे मूषिकेखदिरेऽपि च' इति मेदिनी, बभ्राम 'भ्रमु अनवस्थाने' धातु का लिट् लकार का रूप है।

रत्नोद्भवोऽपि वाणिज्यनिपुणतया पारावारतरणमकरोत्।

हिन्दी अर्थ—रत्नोद्भव व्यापारकार्य में दक्ष होने से समुद्र पार चला गया।

संस्कृतव्याख्या :—वाणिज्यनिपुणतया = व्यापारकर्मचातुर्येण, पारावारतरणम्=सागरतरणम्, अकरोत्=कृतवानित्यर्थः।

इतरे मन्त्रिसूनवः पुरन्दरपुरातिथिषु पितृषु यथापूर्वमन्वतिष्ठन्।

हिन्दी अर्थ—अन्य मन्त्रियों के पुत्रों ने अपने पिताओं की मृत्यु के पश्चात् उन्हीं के स्थान पर कार्य ग्रहण किया।

संस्कृतव्याख्या :—इतरे=अपरे, मन्त्रिसूनवः = अमात्यात्मजाः, पुरन्दरपुरातिथिषु=पुरन्दरपुरस्य इन्द्रनगरस्य अतिथिषु प्राघुणिकेषु मृतेषु इतिभावः। पितृषु=जनकेषु, यथापूर्वम्=क्रमानुसारं, अन्वतिष्ठन्=मन्त्रित्वमकुर्वन्।

टिप्पणी—'पारावारः सरित्पतिः' इत्यमरः।

राजहंसस्य युद्ध वर्णनम्—

ततः कदाचिन्नानाविधमहदायुध नैपुण्य रचितागण्यजन्य राजन्य मौलिपालिनिहितनिशितसायको मगधनायको मालवेश्वरं प्रत्यग्रसङ्ग्रामघस्मरं समुत्कट मानसारं मानसारं प्रति सहेलं न्यक्कृतजलधि निर्घोषाहङ्कारेण भेरीझाङ्कारेण हठिकाकर्णनाक्रान्तभयचण्डिमानं दिग्दन्तावलयवलयं विघूर्णयन्निजभरनमन्मेदिनीभरेणायस्तभुजगराजमस्तकबलेन चतुरङ्गबलेन संयुतः सङ्ग्रामाभिलाषेण रोषेण महताविष्टो निर्ययौ।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् एकबार विभिन्न प्रकार के अस्त्रों (के संचालन में) चातुर्य से असंख्य युद्धों में राजाओं के मस्तकों पर तीक्ष्ण बाणं चलाने वाले मगध के राजा राजहंस, नूतन युद्ध में शत्रुओं के नाशक (भक्षक) अत्यन्त अभिमानी मालवा के अधिपति मानसार के ऊपर अवज्ञापूर्वक समुद्र के शब्द करने के अहंकार को तिरस्कृत करने वाले, नगाड़ों के शब्द को हठात् सुनने के कारण भयभीत दिशाओं के हस्तियों को कम्पित करने वाले, अपने भार से दबी हुई पृथ्वी के भार से शेषनाग के मस्तक को खिन्न करने वाली चतुरङ्गिणी (हाथी, घोड़ा, पैदल एवं रथ) सेना से युक्त होकर बड़े क्रोध के साथ संग्राम करने की इच्छा से निकल पड़ा।

संस्कृतव्याख्या :—ततः=तदनन्तरम्, कदाचित्=एकदेतिभावः, नानाविधमहदायुध नैपुण्य रचितागण्य जन्यराजन्य मौलिपालिनिहित निशित सायकः=नानाविधानि विभिन्नानि महन्ति आयुधानि अस्त्राणि तेषु नैपुण्यं निपुणता तया रचितानि कृतानि अगण्यानि असंख्यानि जन्यानि युद्धानि तेषु राजन्यानां क्षत्रियाणां नृपाणां वा मौलीनां किरीटानां पालिषु प्रान्तप्रदेशेषु

निहिताः प्रक्षिप्ताः निशिताः तीक्ष्णाः सायकाः बाणाः येन, इत्थंभूतः मगध-नायकः = मगधेश्वरः, मालवेश्वरम् = मालवाधिपतिम्, प्रत्यग्रसंग्रामघस्म-रम् = प्रत्यग्रे नूतने संग्रामे युद्धे घस्मरः भक्षकः तम्, समुत्कटमानसारम् = समुत्कटः अत्युत्कटः मान एव सारो स्थिरांशः यस्य तम् अथवा समुत्कटो मानः दर्पः सारो बलं च यस्य तम्, मानसारम् = तन्नामकं राजानम्, सहेलम = सलीलम्, न्यक्कृत जलधि निर्घोषाहङ्कारेण = न्य-क्कृतः तिरस्कृतः जलधेः सागरस्य निर्घोष विषयेऽहंकारोऽभिमानो येन इत्थं-भूतेन भेरीझंकारेण, भेरीझंकारेण = दुन्दुभिशब्देन, हठिका कर्णनाक्रान्तभय-चण्डिमानम् = हठिकाकर्णनात् सहसाश्रवणात् आक्रान्तः प्राप्तः भयस्य भीतेः चण्डिमा चण्डत्वं महाभयमित्यर्थः यं तम्, दिग्दन्तावलय वलयम् = दिग्दन्ता वलानां दिग्गजानां वलयं मण्डलम् वृन्दम्वा, विघूर्णयन् = चालयन, निजभर-नमन्मेदिनीभरेण = निजभरेण स्वकीयभारेण नमन्ती अधोगच्छन्ती या मेदिनी, पृथ्वी तस्याः भरेण भारेण, आयस्त भुजगराजमस्तकबलेन = आय-स्तं पीडितं भुजगराजस्य वासुकेः मस्तकबलं शिरसाधारणसामर्थ्यं येनेत्थंभूतेन, चतुरंगबलेन = गजाश्वरथ पदातिरूपेण चतुर्विध सैन्येन, संयुतः = सहितः, संग्रामाभिलाषेण = युद्धेच्छया, महता = अतिशयेन्, रोषेण = क्रोधेन, आविष्टः = व्याप्तः, निर्ययौ = निर्जगाम।

टिप्पणी—असम्बन्ध में सम्बन्धरूपातिशयोक्ति अलंकार अनुप्रास स्पष्ट है ही। अतः संसृष्टि अलंकार परस्पर निरपेक्ष होने के कारण हो गया है। दन्तावल = 'दन्तशिखात्संज्ञायाम्' इस सूत्र से वलच प्रत्यय हो जाता है। घस्मर = 'सृघस्यदः क्मरच। इस सूत्र से क्मरच प्रत्यय हो जाता है। "युद्धमायोधनं जन्यम्" कोषः "मौलिः किरीटेधम्मिलेचूडायामनपुंसकम्" इति मेदिनी। "पालिः कर्णलतायां स्यात् प्रदेशे पंक्तिचिन्ह्योः" इत्यजयः। 'दन्तीदन्तावलो हस्ती' इत्यमरः।

मालवनाथोऽप्यनेकानेकपयूथसनाथो विग्रह सविग्रह इव साग्रहोऽभिमुखी भूय भूयो निर्जगाम !

हिन्दी अर्थ—मालवेश्वर भी अनेक हाथियों के समुदाय से युक्त हो कर शरीरधारी युद्ध के तुल्य आग्रहपूर्वक (युद्ध के लिए) पुनः निकल पड़ा।

संस्कृतव्याख्या :—मालवनाथः = मालवाधिपतिः, अनेकानेकपयूथ अनेके बहवः ये अनेकपाः हस्तिनः तेषां यूथं समूहः तेन सनाथः युक्तः,

विग्रहः = संग्रामः, सविग्रह इव = शरीरधारीव, साग्रहः = आग्रहयुक्तः, अभिमुखीभूय = सम्मुखीभूत्वा, भूयः = पुनः, निर्जगाम = निर्ययौ।

टिप्पणी—उत्प्रेक्षा अलंकार है। 'युद्धे देहे च विग्रहः' इति कोश।

तयोरथ रथतुरगखुरक्षुण्ण क्षोणीसमुद्भूते करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौतमूले नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकन्यका जनजवनिकां पटमण्डप इव वियत्तालव्याकुले धूलीपटले दिविषदध्वनि धिक्कृतान्यध्वनिपटहध्वानवधिरिताशेषदिगन्तरालं शस्त्राशस्त्रि हस्ताहस्ति परस्पराभिहतसैन्यं जन्यमजनि।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् उन दोनों का युद्ध प्रारम्भ हो गया। उसमें रथ के पहियों तथा घोड़ों के खुरों से मर्दित पृथ्वी से उत्पन्न, हस्ती समुदाय के गण्डस्थलों से बहने वाली मद धाराओं से सिक्त, (धूलिसमूह) नूतन पतियों के वरण के लिए दिव्यकन्यकाओं के पटमण्डप के समान होकर आकाश में फैल गया, दूसरे शब्दों को तिरस्कृत करने वाले पटह शब्द के द्वारा सम्पूर्ण दिशाओं को वधिर बनाने वाला, तथा शस्त्रों से शस्त्र एवं हाथों से हाथ भिड़ाकर परस्पर (योधागण) युद्ध होने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—अथ = तदनन्तरम्, तयोः = मालवराजमगधराजयोः, रथतुरगखुरक्षुण्ण क्षोणी समुद्भूते = रथैः स्यन्दनचक्रैरित्यर्थः तुरगाणां घोटकानां खुरैः शफैः क्षुण्णायाः चूर्णितायाः मर्दितायाः वा क्षोण्याः समुद्भूते समुत्पन्ने, करिघटाकटस्रवन्मदधाराधौतमूले = करिणां गजानां घटाः समूहाः तासां कटेभ्यः गण्डेभ्यः स्रवन्त्यः प्रवहन्त्यः या मदधारा दानधाराः ताभिः धौतं प्रक्षालितं मूलं अधः प्रदेशः यस्य तस्मिन्, नव्यवल्लभवरणागतदिव्यकन्यका जन जवनिका पटमण्डप इव = नव्यानां अभिनवानां वल्लभानां प्रियाणां वरणाय पतित्वेन स्वीकरणाय आगतः समागतः यः दिव्यकन्यकाजनः अप्सरः समुदायः तस्य जवनिका तिरस्करिणी तथा युक्तः पटमण्डपः पटवास इव तस्मिन्, वियत्तलव्याकुले = वियतः गगनस्य तले अधः व्याकुले व्याप्ते, धूलीपटले = पांशुपटले, दिविपदध्वनि = दिवि सीदन्तीति दिविषिदः देवाः तेषां अध्वनि-मार्गे, धिक्कृतान्यध्वनि पटह ध्वान वधिरिता शेष दिगन्तरालम् = धिक्कृताः न्यक्कृता अन्यध्वनयः अन्येषां वा ध्वनयः येन तादृशेनःपटहध्वानेन ढक्काध्वनिना वधिरितं वधिरी-

कृतं दिगन्तरालं दिग्मध्यभागः यस्मिन् तत् (युद्धस्य विशेषणम्) शस्त्राशस्त्रि=शस्त्रैः शस्त्रैश्च प्रहृत्य यद् युद्धं प्रवृत्तमिति, (योद्धारः परस्परं शस्त्राणि क्षिप्त्वा युद्धं कुर्वन्तीतिभावः) हस्ताहस्ति=हस्तैः हस्तैश्च प्रहृत्य प्रवृत्तं युद्धम् तत्, परस्पराभिहत सैन्यम्=परस्परस्य अन्योन्यस्य अभिहतं आक्रान्तं सैन्यं सेना यस्मिन् तत् जन्यम्=युद्धम्, अजनि=अभवत्।

टिप्पणी—'अजनि' जनी प्रादुर्भावे लुङ् लकार का रूप है। 'दीप जन बुध पूरितायि—इस सूत्र से विकल्प से चिण् होगा 'जनिवध्योश्च' इससे वृद्धि नहीं होगी।

शस्त्राशस्त्रि तथा हस्ताहस्ति यहाँ पर शस्त्रैः शस्त्रैश्च प्रहृत्येदं युद्धं प्रवृत्तमिति विग्रहे 'तत्र तेनेदंमिति सरूपे' इस सूत्र से बहुव्रीहि समास तथा 'इच्कर्मण्यतिहारे' इस सूत्र से समासान्त इच् होकर 'अन्येषामपिदृश्यते' इस सूत्र से दीर्घ हो जायेगा। उत्प्रेक्षा अलंकार है।

'करटः स्यात्कटो गण्डः' इति हलायुधः। 'प्रत्यग्रोऽभिनवो नव्यः' 'वल्लभो दयितोऽध्यक्षे सलक्षणतुरंगमे' प्रतिसीरा जवनिका स्यात्तिरस्करिणी 'च सा' इत्यमरः।

तत्र मगधराजः प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलं मालवराजं जीवग्राहमभिगृह्य कृपालुतया पुनरपि स्वराज्ये प्रतिष्ठापयामास। ततः सः रत्नाकरमेखलाभिलामनन्यशासनां शासदनपत्यतया नारायणं सकललोकैककारणं निरन्तरमर्चयामास।

हिन्दी अर्थ—उस युद्ध में मगधराज राजहंस ने मालवराज मानसार की सम्पूर्ण सेना नष्ट करके तथा उसे सजीव पकड़ करके पुनः कृपालुतावश उसे उसी के राज्य में स्थापित कर दिया अर्थात् उसका राज्य पुनः लौटा दिया इसके पश्चात् मगधराज राजहंस समुद्र पर्यन्त पृथ्वी पर शासन करते हुए निःसन्तान होने के कारण सम्पूर्ण लोकों के एकमात्र कारण नारायण की पूजा करने लगे।

संस्कृतव्याख्या :—तत्र = संग्रामे, मगधराजः = मगधाधिपतिः राजहंसः, प्रक्षीणसकलसैन्यमण्डलम्=प्रक्षीणं विनष्टं सकलं समग्रं सैन्यमण्डलं सेनावृन्दं यस्य तम्, मालवराजम्=मालवदेशाधिपतिं मानसारम्,

जीवग्राहम्=जीवन्तम्, अभिगृह्य=धृत्वा,कृपालुतया=दयावशेन पुनरपि=भूयोऽपि, स्वराज्ये=शासने, प्रतिष्ठापयामास=स्थापयामास। ततः=तदनन्तरम्, सः=मगधराजो राजहंसः, रत्नाकरमेखलाम्, रत्नाकरः सागरः एव मेखला काञ्ची रशना वा यस्याः साताम्, इलाम्=पृथ्वीम्, अनन्य शासनाम्=न अन्यस्य अपरस्य शासनं आदेशः यस्यां ताम्। शासत्=शासनं कुर्वन्; अनपत्यतया=सन्तानाभावत्वेन, सकललोकैक-कारणम्=सकलानां सम्पूर्णानां लोकानां भुवनानां एक कारणं मूलकारणम्, नारायणम्=भगवन्तं विष्णुम्। निरन्तरम्=सततम्, अर्चयामास=पूजयामास।

टिप्पणी—जीवग्राहम्=जीवतीति जीवः इस स्थिति में 'इगुपधज्ञा प्रीकिरः कः' इससे क होने के पश्चात् 'समूलाकृतजीवेषु हन् कृञ्ग्रहः' इस सूत्र से णमुल् हो जायेगा। जीवन्तं गृह्णातीत्यर्थः। 'गौरिलाकुम्भिनी क्षमा' इत्यमरः।

राज्ञ्या गर्भधारणवर्णनम् —

अथ कदाचित्तदग्रमहिषी 'देवि, देवेन कल्पवल्लीफलमाप्नुहि' इति प्रभातसमये सुस्वप्नमालोकितवती। सा तदा दयितमनोरथ-पुष्पभूतं गर्भमाधत्त। राजापि सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः सुहृन्नृप मण्डलं समाहूय। निजसम्पन्मनोरथानुरूपं देव्याः सीमन्तोत्सवं व्यधत्त।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् मगधराज की बड़ी रानी ने प्रातः एक सुन्दर स्वप्न देखा जिसमें उनसे किसी ने कहा-हे देवि! राजा के द्वारा प्रदत्त या राजा के साथ [सहित] यह कल्पवृक्ष का फल आप ग्रहण करें। उस रानी ने प्रिय के मनोरथ स्वरूप पुष्प के समान गर्भ को धारण किया। अपने ऐश्वर्य से इन्द्र के वैभव को तिरस्कृत करने वाले उस राजा ने मित्र-भूत नृपसमुदाय को बुलाकर अपनी सम्पत्ति एवं मनोरथ के अनुरूप रानी का 'सीमन्तोन्नयन' संस्कार किया।

संस्कृतव्याख्याः—अथ=नारायणपूजानन्तरम्, अग्रमहिषी=पट्टम-हिषी, देवि=राज्ञि, देवेन=राज्ञा, कल्पवल्लीफलम्=कल्पलताफलम्, आप्नुहि=प्राप्नुहि, प्रभातसमये=प्रातःकाले: सुस्वप्नम्, आलोकितवती=

दृष्टवती, सा=राज्ञी, तदा=तदानीम्, दयितमनोरथपुष्पभूतम्=दयितस्य प्रियस्य यः मनोरथः पुत्ररूपः कामना तस्य पुष्पमिव कुसुममिव भूतं गर्भं, आधत्त=धृतवती, राजापि=नृपोऽपि, सम्पन्न्यक्कृताखण्डलः=सम्पदा समृद्धया ऐश्वर्येण वा न्यक्कृतः तिरस्कृतः अधरीकृतो वा आखण्डलः इन्द्रो येन सः, सुहृन्नृपमण्डलम्=सुहृदां मित्रभूतानां नृपाणां राज्ञां मण्डलं समूहं अथवा सुहृदश्च नृपाश्च (द्वन्द्वसमासः) तेषां मण्डलम्, समाहूय=आह्वानं कृत्वा, निजसम्पन्मनोरथानुरूपम्=निजस्य स्वकीयस्य सम्पदः समृद्धेः मनोरथस्य च अभिलाषस्य च अनुरूपं सदृशम्, देव्याः राज्ञ्याः, सीमन्तोत्सवम्=केशप्रसाधन रूपसंस्कारविशेषम्, व्यधत्त=अकरोत् ।

टिप्पणी—"सीमन्तोत्सव' एक संस्कारविशेष जिसमें केशप्रसाधन किया जाता है। आश्वलायन के आधार पर यह संस्कार गर्भ के चतुर्थ मास में किया जाता है। तथा मनु और याज्ञवल्क्य के आधार पर छठें या आठवें मास में किया जाता है। प्रातःकालिक स्वप्न सत्य फल वाले होते हैं। अग्निपु०२२८।१६,१७ के अनुसार १० दिन में फल देते हैं। अवितथ फलाश्च प्रायो निशावसान समय दृष्टा भवन्ति स्वप्नाः (कादम्बरी पृ० २०३, १९६१, चन्द्रकला विद्योतिनी टीका)।

'अधत्त्' डुधाञ्धारणपोषणयोः' इस धातु से लङ् लकार का आत्मनेपद का रूप है। 'आखण्डलः तुराषाट्' इति हलायुधः।

एकदा हितैः सुहृन्मन्त्रिपुरोहितैः सभायां सिंहासनासीनो गुणैरहीनो ललाटतटन्यस्ताञ्जलिना द्वारपालेन व्यज्ञापि-"देव! देवसन्दर्शनलालसमानसः कोऽपि देवेन विरच्यार्चनार्हो यतिर्द्वारदेशमध्यास्ते" इति। तदनुज्ञादेव तेन स संयमी नृपसमीपमनायि।

हिन्दी अर्थ—एक दिन सभी गुणों से युक्त मगधनरेश अपने हितैषी मित्रों, मन्त्रियों और पुरोहितों से युक्त, होकर सभा में सिंहासन पर विराजमान थे। उस समय हाथ जोड़कर प्रणाम करके द्वारपाल ने कहा "राजन्! आपके द्वारा पूजा के योग्य आपको देखने का इच्छुक कोई संन्यासी दरवाजे पर खड़ा है। राजा की आज्ञा प्राप्तकर द्वारपाल उस संन्यासी को राजा के समीप लाया।

संस्कृतव्याख्या :—एकदा=एकस्मिन् समये, हितैः=हितकारिभिः, सुहृन्मन्त्रि पुरोहितैः=सुहृदश्च मित्राणि च मन्त्रिणश्च अमात्याश्च पुरोहिताश्च कुलपूज्याश्च तैः, गुणैः=सद्गुणैः अहीन=सहितः इत्यर्थः, ललाटतटन्यस्ताञ्जलिना=ललाटतटे भालप्रदेशे न्यस्तः रक्षितः अञ्जलिः करसंपुटं येन तेन इत्थंभूतेन द्वारपालेन=प्रतीहारेण, व्यज्ञापि=कथितः, देव=भो महाराज! देवसन्दर्शन लालस मानसः=देवस्य भवतः सन्दर्शने अवलोकने लालसं साभिलाषं मानसं मनः यस्यसः, देवेन=भवता, विरच्यार्चनार्हः=विरच्या कर्तव्या या अर्चना पूजा तां अर्हतीति, यतिः=संन्यासी भिक्षुर्वा, द्वारदेशम्=द्वारस्थानम्, अध्यास्ते=तिष्ठतीतिभावः, तदनुज्ञातेन=राजाज्ञया आदिष्टेन, तेन=द्वारपालेन, सः=पूर्वोक्तः, संयमी=यतिः, नृपसमीपम्=नृपस्य राज्ञः समीपम् सकाशम्, अनायि=नीतः।

टिप्पणी—'द्वारदेशम्' यहाँ पर "अधिशीङ्स्थासां कर्म" इस सूत्र से कर्म संज्ञा होकर द्वितीया हुई है। 'व्यज्ञापि' ज्ञा अववोधने' इस धातु से णिजन्त हो जाने से कर्म में लुङ् लकार हुआ है।

22 भूपतिरायान्तं तं विलोक्य सम्यग्ज्ञाततदीयगूढचारभावो निखिलमनुचरनिकरं विसृज्य मन्त्रिजनसमेतः प्रणतमेनं मन्दहासमभाषत—"ननु तापस! देशं साप्देशं भ्रमन् भवांस्तत्र तत्र भवदभिज्ञातं कथयतु" इति।

संन्यासिनः सन्देश कथनम्—

23 तेनाभाषि भूभ्रमणबलिना प्राञ्जलिना—"देव! शिरसि देवस्याज्ञामादायैनं निर्दोषं वेषं स्वीकृत्य मालवेन्द्रनगरं प्रविश्य तत्र गूढतरं वर्तमानस्तस्य राज्ञः समस्तमुदन्त जातंविदित्वा प्रत्यागमम्।

हिन्दी अर्थ—राजा ने उसे आता हुआ देखकर और उसे अपना गुप्तचर जान करके अपने समो नौकर समुदाय को हटाकर मन्त्रियों से युक्त, मन्द मुसकान के साथ प्रणाम करते हुए इस दूत से पूछा—हे तापस! इस कपटवेश युक्त देश में घूमते हुए जो आपने जाना है उसे आप कहें'। पृथ्वी पर भ्रमण करने में समर्थ, हाथ जोड़कर उस संन्यासी ने कहा "हे राजन्! आपकी आज्ञा शिरोधार्य करके इस निर्दोष वेश को धारण करके मैं मालव नरेश के नगर में प्रविष्ट हुआ और वहाँ गुप्तरूप से रहता हुआ उस राजा के सम्पूर्ण वृतान्त को जानकरके लौटा हूँ।

संस्कृतव्याख्याः—भूपतिः=नृपो राजहंसः, आयान्तम=समागच्छन्तं, तम=यतिम्, विलोक्य=अवलोक्य, सम्यग्ज्ञाततदीयगूढचारभावः=सम्यक् सुष्ठु ज्ञातः अवगतः तदीयः तत्सम्बन्धी गूढः गुप्त प्रच्छन्नो वा चारभावः गुप्तचरत्वं येन सः, निखिलम्=सम्पूर्णम्, अनुचरनिकरम्=अनुचराणां सेवकानां निकरं समूहं, विसृत्य=त्यक्त्वा, मन्त्रिजनसमेतः=मन्त्रिजनैः अमात्यवृन्दैः समेतः युक्तः, प्रणतम्=कृतनमस्कारं. एनम्=संन्यासिनम्, मन्दहासम्=सहासं, अभाषत=अवोचत, तापस=भो संन्यासिन्, सापदेशम्=सव्याजम्, देशम्=मालवदेशम्, भ्रमन्=विचरन्, भवान्=त्वम् तत्र तत्र=तेषु तेषु स्थानेषु, भवदभिज्ञातम्,=भवता त्वया अभिज्ञातं अवगतं, कथयतु=निवेदयतु, भूभ्रमणबलिना=भुवः पृथिव्याः भ्रमणे विहरणे बलिः समर्थः तेन, प्राञ्जलिना=बद्धाञ्जलिना, तेन=यतिना, अभाषि=कथितम्, देव! भो राजन्, शिरसि=मस्तके, देवस्य=भवतः, आज्ञाम्=आदेशम्. आदाय=अङ्गीकृत्य, निर्दोषम्=दोषरहितम्, वेषम्=भिक्षुरूपम् स्वीकृत्य=धृत्वा, मालवेन्द्रनगरम्=मालवनरेश पत्तनम्, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, तत्र=तस्मिन् स्थाने, गूढतरम्=अतिशयेन गूढमित्यर्थः, वर्तमानः =विराजमानः सन्, तस्यराज्ञः=मालवनरेशस्य, समस्तम्=सम्पूर्णम्, उदन्तजातम्=वृत्तान्तवृन्दं, विदित्वा=ज्ञात्वा, प्रत्यागमम्=प्रत्यागच्छम्,

टिप्पणी—'अभाषि' 'भाष व्यक्तायां वाचि' इस धातु से कर्म में लुङ् लकार है। 'गूढतरम्' द्विवचनविभज्योपपदे तरबीयसुनौ' इस से तरप् प्रत्यय हो जाता है। 'वर्तमानः' 'वृतु वर्तने' धातु से कर्ता में शानच् हुआ है। "वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्तः उदान्तः स्यात्' इत्यमरः।

२५ मानी मानसारः स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये संपराये भवतः पराजयमनुभूय वैलक्ष्यलक्ष्यहृदयो वीतदयो महाकालनिवासिनं कालीविलासिनमनश्वरं महेश्वरं समाराध्य तपः प्रभावसन्तुष्टादस्मादेकवीरारातिघ्नीं भयदां गदां लब्ध्वाऽऽत्मानमप्रतिभटं मन्यमानो महाभिमानी-भवन्तमभियोक्तुमुद्युङ्क्ते। ततः परं देव एव प्रमाणम् इति।

हिन्दी अर्थ—(उसने बताया) अभिमानी मानसार राजा युद्ध में अपने सैनिकों के नाश से तथा आप से पराजय प्राप्त करके लज्जित होता हुआ दीन भाव से युक्त महाकाल (उज्जैन का एक मन्दिर जिसमें भगवान शंकर की स्थापना है। निवासी तथा पार्वती के साथ विहार करने वाले, अवि-

नाशी भगवान् शंकर की आराधना करके, तपस्या के प्रभाव से संतुष्ट उन्हीं भगवान् शंकर से एक प्रधान वीर को मारने वाली भयप्रदा गदा को प्राप्त करके, अपने को अप्रतिम योद्धा मानता हुआ अभिमान के साथ आपसे लड़ने के लिए प्रयत्नशील है। इस विषय में आप ही प्रमाण हैं अर्थात् जैसा उचित समझें आप विचार कर लेवें।

संस्कृतव्याख्या :—मानी=स्वाभिमानी, मानसार:=तन्नामक:मालवनरेश:, स्वसैनिकायुष्मत्तान्तराये=स्वसैनिकानां निजवीराणांआयुष्मत्ता जीवितावधि: तस्या: अन्तराये विघ्नस्वरूपे, सम्पराये=युद्धे, भवत:=त्वत्त:, पराजयम्=पराभवम्, अनुभूय=लब्ध्वेत्यर्थ:, वैलक्ष्यलक्ष्यहृदय=वैलक्ष्यस्य दैन्यस्य दीनताया: वा लक्ष्यं विषयीभूतं हृदयं चित्तं यस्य स: अथवा वैलक्ष्येण दैन्येन लक्ष्यं समाक्रान्तं हृदयं यस्य स:, वीतदय:=वीता विनष्टा दया यस्य स:, महाकालनिवासिनम्=महाकालवास्तव्यम्, कालीविलासिनम्=पार्वतीपतिम्, अनश्वरम्=अविनश्वम्, महेश्वरम्=महादेवम्, समाराध्य=सम्पूज्य, तप: प्रभावसन्तुष्टात्=तपस: तपश्चरणस्य प्रभावेण सामर्थ्येन सन्तुष्ट: परितुष्ट: तस्मात्, एकवीरारातिघ्नीम्=एकश्चासौ वीर एकवीर: स चासौ आराति: शत्रु: तं हन्तीति तम्, एक शब्दस्यार्थ: एक संख्यक: श्रेष्ठ: प्रधानो वा, भयदां=भीतिप्रदां, गदाम्=आयुधविशेषम्, लब्ध्वा=प्राप्य, अप्रतिभटम्=नास्ति प्रतिभट: यस्य तं अप्रतिद्वन्द्विनमित्यर्थ:, अद्वितीयमिति भाव:, मन्यमान:=आत्मानं मन्यमान:, महाभिमान: =महान् अत्यधिक: अभिमान: अहंकार यस्य स:, अभियोक्तुम्=अभिषेणयितुम्, उद्युङ्क्ते=प्रयतते, तत: परम्=इत्थं विचार्य, देव एव=भवान् एव, प्रमाणम्=प्रमाणस्वरूपम्।

टिप्पणी—उमा कात्यायनी गौरी काली हैमवतीश्वरी' इति कोष:, 'सम्पराय: समीकं साम्परायिकम् इति हैम:।

अमात्य कृत निश्चय:—

२६ तदालोच्य निश्चिततत्कृत्यैरमात्यै राजा विज्ञापितोऽभूत् 'देव, निरुपायेन देवसहायेन योद्धुमरातिरायाति। तस्मादस्माकं युद्धं साम्प्रतमसाम्प्रतम्। सहसा दुर्गसंश्रय: कार्य:" इति।

राजहंसस्य पुनराहवे प्रवृत्ति :—

26 तैर्बहुधा विज्ञापितोऽप्यखर्वेण गर्वेण विराजमानो राजा तद् वाक्यमकृत्यमित्यनादृत्य प्रतियोद्धुमनाबभूव। 27 शितिकण्ठदत्तशक्ति-सारो मानसारो योद्धुमनसामग्रीभूय सामग्रीसमेतोऽक्लेशं मगधदेशं प्रविवेश।

हिन्दी अर्थ—यह श्रवण करके उसके मन्त्रियों ने विचार विमर्श करके राजा से कहा 'हे राजन्! जिसका कोई प्रतिकार नहीं है इस प्रकार की देव (महादेव) की सहायता से शत्रु युद्ध करने आ रहा है तो इस समय हम लोगों का युद्ध करना अनुचित होगा। अतः ऐसे समय में हमलोगों को दुर्ग का आश्रय लेना चाहिए। मन्त्रियों के द्वारा विभिन्न प्रकार से समझाने पर भी अत्यधिक गर्व के साथ उनके वाक्यों को अकरणीय समझ-कर अनादर करके युद्ध करने के लिए तैयार हो गया। शंकर द्वारा प्राप्त शक्ति से बलप्राप्त मानसार युद्ध करने की इच्छा वालों में अग्रगण्य, सामग्री सहित बिना क्लेश के मगधदेश में प्रवेश किया।

संस्कृतव्याख्या :—तदालोच्य=तच्छ्रुत्वेतिभावः, निश्चिततत्कृत्यैः= निश्चितं निर्णीतं तत्कृत्यं तत्समयोचितं राजकृत्यं यैस्तैः, राजा=नृपः, विज्ञापितः=निवेदितः, अभूत=अभवत्, देव=भो राजन्! निरुपायेन= नास्ति उपायः प्रतीकारः यस्य तेन, देवसहायेन=शंकरसाहाय्येन, योद्धुम्= युद्धं कर्तुम्, आरातिः=शत्रुः, आयाति=समागच्छति। तस्मात्=तस्मात् कारणात्, अस्माकं, युद्धम्=समरः, साम्प्रतम्=इदानीम्, असाम्प्रम्= अनुचितम्, सहसा=शीघ्रम्, दुर्गसंश्रयः=दुर्गप्रवेशः, कार्यः=कर्तव्यः, तैः =मन्त्रिभिः, बहुधा=बहुप्रकारेण, विज्ञापितोऽपि=निवेदितोऽपि, अख-र्वेण=न खर्वः इति अखर्वः तेन महतेत्यर्थः, गर्वेण=दर्पेण, विराजमानः =शोभमानः, राजा=मगधनरेशः, तद्वाक्यम्=मन्त्रिवचनम्, अकृत्यम् =अकरणीयम्, इति=इत्थं, अनादृत्य=अस्वीकृत्य, अनादरं विधाय वा, प्रतियोद्धुमना=युद्धेच्छुकः, बभूव = अभवत्। शितिकण्ठदत्तशक्तिसारः =शितिकण्ठः शंकरः तेन दत्ता समर्पिता या शक्तिः आयुधविशेषः स एव सारः बलं यस्य सः, मानसारः=तन्नामकः मालवाधिपतिः, योद्धुमनसाम् =युद्धेच्छुकानाम्, अग्रीभूय = पुरोभूत्वा, सामग्रीसमेतः=आयुधादि युद्धोपकरणोपेतः, अक्लेशम्=क्लेशं विनैव, प्रविवेश=प्रवेशं अकरोत्।

टिप्पणी—'खर्वो ह्रस्वश्च वामनः' इत्यमरः ।

'विराजमानः' वि+राजृ दीप्तौ' धातु से शानच् प्रत्यय हो जाता है ।

28 तदा तदाकर्ण्य मन्त्रिणो भूमहेन्द्रं मगधेन्द्रं कथंचिदनुनीय रिपुभिरसाध्ये विन्ध्याटवीमध्येऽवरोधान् मूलबलरक्षितान् निवेशयामासुः । 29 राजहंसस्तु प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतस्तीव्रगत्या निर्गत्याधिकरुषं द्विषं रुरोध । 30 परस्परबद्धवैरयोरेतयोः शूरयोस्तदा तदा लोकनकुतूहलागतगगनचराश्चर्यकारणे रणे वर्तमाने जयाकांक्षी मालवदेशरक्षी विविधायुधस्थैर्यचर्याञ्चित समरतुलितामरेश्वरस्य मगधेश्वरस्य पुरा पुरारातिदत्तां गदां प्राहिणोत् । 31 निशितशरनिकर शकलीकृतापि सा पशुपतिशासनस्यावन्ध्यतया सूतं निहत्य रथस्थं राजानं मूर्च्छितमकार्षीत् ।

राजहंसस्य पराजयो वनवासश्च—

32 ततो वीतप्रग्रहा अक्षतविग्रहा वाहा रथमादाय दैवगत्याऽन्तःपुरशरण्यं महारण्यं प्राविशन् ।

हिन्दी अर्थ—उस समय यह सुनकर मन्त्रियों ने महीपति राजहंस को समझा बुझाकर शत्रुओं के द्वारा अगम्य विन्ध्याटवी में मूलसेवा के द्वारा रक्षित अन्तःपुर की स्त्रियों को भिजवा दिया । राजहंस उत्कृष्ट और दीनभाव से रहित सेना को लेकर तीव्रगति से निकल करके अत्यन्त क्रुद्ध शत्रु को घेर लिया । परस्पर द्रोह रखने वाले उन दोनों (राजहंस और मानसार) के युद्ध को देखने के कुतूहल से आये हुए आकाशचारी (देवगन्धर्वादि) के लिए आश्चर्य का कारण हो गया । इस प्रकार युद्ध में विजय की अभिलाषा करने वाले मालवनरेश ने विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्र चलाने में निपुण तथा युद्ध में इन्द्र की उपमा वाले मगधनरेश के ऊपर पहले ही शंकर जी द्वारा प्रदत्त गदा का प्रहार किया । मगधराज के द्वारा तीक्ष्ण बाण समुदाय के द्वारा खण्ड-खण्ड की जाने पर भी भगवान् शंकर के वाक्य की अव्यर्थता सिद्ध करने के लिए सारथी को मारकर रथस्थित राजा राजहंस को मूर्च्छित कर दिया । इसके पश्चात् लगाम रहित तथा बिना चोट वाले घोड़ों ने रथ को लेकर सौभाग्य से अन्तःपुर की स्त्रियों के आश्रयभूत उस महावन में पहुंचा दिया ।

संस्कृतव्याख्या :—तदा = तदानीम्, तदाकर्ण्य = तन्निशम्य, मन्त्रिणः = अमात्याः, भूनहेन्द्रम् = भुवि पृथिव्यां महेन्द्रः सुरेन्द्रः तमिव अथवा भुवः महेन्द्रः स्वामीत्यर्थः तम् महीपतिमिति भावः, मगधेन्द्रम् = मगधस्वामिनम् राजहंसम्, कथंचिद् = येन केन प्रकारेण, अनुनीय = प्रणीय, प्रार्थ्यंवा, रिपुभिः = शत्रुभिः, असाध्ये = अगम्ये, विन्ध्याटवीमध्ये = विन्ध्यवने, अवरोधान् = राजदारान्, मूलबलरक्षितान् = मूलबलेन प्रधानसेनया रक्षितान् सुरक्षितान् निवेशयामासः = स्थापितवन्तः, स्थापयामासुर्वा । राजहंसस्तु = तन्नामको नरेशस्तु, प्रशस्तवीतदैन्यसैन्यसमेतः = वीतं गतं समाप्तं वा दैन्यं कार्पण्यं यस्मात् तत्, प्रशस्तञ्च अत्युत्कृष्टं च वीतदैन्यञ्च यत सैन्यं बलं तेन समेतः युक्तः, तीव्रगत्या = द्रुतगत्या, निर्गत्य-बहिरागत्य, अधिकरुषम् = अधिका रुट् यस्य तं अतिक्रुद्धमित्यर्थः द्विषम् = शत्रुम, रुरोध = अवरोधं चकार ।

परस्परबद्धवैरयोः = परस्परं मिथः बद्धं कृतं वैरं द्रोहभावः याभ्यांतयोः, एतयोः शूरयोः = मगधराजमालवराजयोः, राजहंसमानसारयोः वेतिभावः, तदा = तदानीम्, तदालोकनकुतूहलागतगगनचराश्चर्यकारणे = तस्य युद्धस्य तयोर्वा आलोकने दर्शने यत्कुतूहलं कौतुकं तदर्थं आगताः समागताः ये गगनचराः सिद्धगन्धर्वदेवादयः आकाशचारिणः तेषां आश्चर्यस्य चाकचिक्यस्य कारणे निमित्ते, रणे = युद्धे वर्तमाने = प्रवर्तमाने, जयाकांक्षी = विजयाभिलाषी, मालवदेशरक्षी = मालवदेशरक्षकः । (मानसारः) विविधायुधस्थैर्यचर्याञ्चितसमरतुलितामरेश्वरस्य = विविधानि विभिन्नानि आयुधानि प्रहरणानि तेषां स्थैर्येण स्थिरतया याचर्या चालनं प्रयोगोवा तया अञ्चितं युक्तं यत्समरं युद्धं तस्मिन् तुलितः उपमितः अमरेश्वरः देवेन्द्रः येन तस्य, मगधेश्वरस्य = राजहंसस्य, उपरि = उपरिष्टात्, पुरा = प्राक्, पुरारातिदत्ताम् = शंकर प्रदत्ताम, गदाम् = आयुधविशेषम, प्राहिणोत् = अक्षिपत् । निशितशरनिकरशकलीकृतापि = निशाताः तीक्ष्णाश्च ते शराः बाणाः तेषां निकरेण समूहेन शकलीकृतापि खण्डशः कृतापि, सा = गदा, पशुपतिशासनस्य = पशुपतेः भगवतः शंकरस्य शासनस्य वचनस्य, अवन्ध्यतया = अव्यर्थतया, सूतम् = सारथिम्, निहत्य = हत्वा, रथस्थम् = स्यन्दनस्थम् । राजानम् = नृपम्, = मूर्च्छितम् = चैतन्यरहितं, मूर्च्छा

युक्तं, वा अकार्षीत्=अकरोत् । ततः=तदनन्तरंवीतप्रग्रहाः = वीताः मुक्ताः प्रग्रहा रश्मयः येषां ते, अक्षतविग्रहाः=अक्षतः क्षतिरहितः विग्रहः शरीरं येषां तं, वाहाः=अश्वाः, रथम्=स्यन्दनम्, आदाय=आकृष्य, दैवगत्या=दैवेन यदृच्छया वा, अन्तःपुरशरण्यम्=अन्तःपुरस्य राजस्त्रीणां शरणे साधुः इति शरण्यम् राजदारारक्षकमित्यर्थः । महारण्यम्=महावनम्, प्राविशन=प्रवेशं अकुर्वन् ।

टिप्पणी :—'मूलवलम्' कामन्दक नीति के अनुसार सेना का ६ प्रकार का विभाग किया गया है उनमें मूल वल सवसे अच्छा माना गया है ।

षड् विधं तु बलं व्यूह्य द्विषतोऽभिमुखं व्रजेत् ।
मौलं भृतं श्रेणि सुहृद् द्विषद् आटविकं बलम् ॥

पूर्वं पूर्वं गरीयस्तु—१३।२-३ ।

शकलीकृता=अशकलं शकलं सम्पद्यमानं कृतं इस अर्थ में='अभूत तद्भावे च्विः, इस सूत्र से च्वि आदि प्रत्यय होकर सिद्ध होता है । पशुपति शब्द शैव दर्शन से भी सम्बन्धित है । तदनुसार पदार्थ के पशु, पाश और पति तीन भेद है । अविद्या से बद्ध जीवपशु है, अविद्या को पाश तथा अविद्यापाश से मुक्त शिव को पति कहते हैं । प्राहिणोत् 'प्र+हि गतौ' धातु से लुङ् लकार का रूप है ।

मालवनाथो जयलक्ष्मीसनाथो मगधराज्यं प्राज्यं समाक्रम्य पुष्पपुरमध्यतिष्ठत् । तत्र हेतिततिहति श्रान्ताअमात्या दैवगत्याऽनुत्क्रान्तजीविता निशान्तवातलब्धसंज्ञाः कथंचिदाश्वस्य राजानं समन्तादन्वीक्ष्यानवलोकितवन्तो दैन्यवन्तो देवीमवापुः । वसुमती तु तेभ्यो निखिलसैन्यक्षतिं राज्ञोऽदृश्यत्वं चाकर्ण्योद्विग्ना शोकसागरमग्ना रमणानुगमने मतिं व्यधत्त ।

हिन्दी अर्थ—विजय को प्राप्त करके मालवराज मानसार ने विशाल मगधराज्य को आक्रान्त करके पुष्पपुर में अधिकार कर लिया । युद्ध में अस्त्र समुदाय के द्वारा प्रपीडित मन्त्रिगण, भाग्यवशात् जीवित होकर प्रातःकालीन वायु के द्वारा चेतना प्राप्त करके, धैर्य के साथ चारों को राजा को देखकर न प्राप्त करके दीनभाव युक्त होकर महारानी वसुमती

के पास पहुंचे। रानी वसुमती भी उनसे सम्पूर्ण सेना का विनाश श्रवणकर और राजा की अदृश्यता को सुनकर खिन्न होती हुई शोकसागर में डूबी हुई पति का अनुगमन करने की इच्छा की।

संस्कृतव्याख्या :—मालवनाथः=मालवेश्वर मानसारः, जयलक्ष्मी सनाथः=जयलक्ष्म्या विजयश्रिया सनाथः समेत इति, मगधराज्यम्= मगधदेशं, प्राज्यम्=प्रवृद्धम्, समाक्रम्य, अधिकृत्येतिभावः, पुष्पपुरम्= कुसुमनगरम्, पाटलिपुत्रमिति, अध्यतिष्ठत्=अधिकारमकरोत्। तत्र= युद्धे, हेतिततिहतिश्रान्ता=हेतीनां आयुधानां ततिभिः पंक्तिभिः हतिः ताडनं प्रहारो वा तया श्रान्ताः क्लान्ताः, अमात्याः=मन्त्रिणः, दैवगत्या= दैवयोगेन, अनुत्क्रान्तजीविता=न उत्क्रान्तं निर्गतं जीवितं प्राणाः येषां ते (मन्त्रिविशेषणम्) निशान्तवात लब्धसंज्ञाः-निशायाः रजन्याः अन्तः अवसानं तत्सम्बन्धि वातः पवनः तेन लब्धा प्राप्ता संज्ञा चैतन्यं यैस्ते, कथंचिद् =कथमपि, आश्वस्य=धैर्यं अवलम्ब्य, राजानं=नृपं राजहंसम्, समन्तात्=सर्वतः, अन्वीक्ष्य=अवलोक्य, अन्विष्येतिभावः अनवलोकितवन्तः =न दृष्टवन्तः, दैन्यवन्तः=खेदयुक्ताः, देवी=महाराज्ञीम्, अवापुः= आगतवन्तः। वसुमती=राजहंसस्य तन्नामिकापत्नी, तेभ्यः=मन्त्रिभ्यः, निखिल सैन्यक्षतिम्=निखिलं सम्पूर्णंच्चयत् सैन्यं बलं तस्य क्षतिं विनाशम्, राज्ञः=स्वस्वामिनोमानसारस्य, अदृश्यत्वम्=चक्षुर्भ्यामप्राप्यत्वम्, आकर्ण्य=श्रुत्वा, उद्विग्ना=खिन्ना, शोकसागरमग्ना=शोकः दुःखमेव सागरः समुद्रः तत्र मग्ना निमग्ना (सती) रमणानुगमने=रमणस्य पत्युः अनुगमने अनुमरणे, मतिं=बुद्धिं, व्यधत्त=अकरोत्।

टिप्पणी—रमण शब्द पति के अर्थ में करण में ल्युट् प्रत्यय हुआ है। रम्यते अनेन इति—"रवेर्रचिश्च शस्त्रं च वह्नि ज्वाला च हेतयः' इत्यमरः। 'आप्लृ व्याप्तौ' धातु से लिट् लकार का 'अवापुः' रूप है।

३६ "कल्याणि, भूरमणमरणमनिश्चितम्। किञ्च दैवज्ञकथितो मथितोद्धताराति: सार्वभौमोऽभिरामो भविता सुकुमारः कुमारस्त्वदुदरे वसति। तस्मादद्य तव मरणमनुचितम्' इति भूषित भाषितैरमात्यपुरोहितैरनुनीयमानया तया क्षणं क्षणहीनया तूष्णीमस्थायि।

हिन्दी अर्थ—मन्त्रियों ने उनके अनुमरण निश्चय को सुनकर कहा—हे कल्याणि ! पहले तो महाराज का मरना अनिश्चित है पुनश्च ज्योतिषियों के द्वारा बताया गया है कि आपके उदर में शत्रुओं को नाश करने वाला तथा चक्रवर्ती सुकुमार पुत्र है। इसलिए आपका मरणनिश्चय भी उचित नहीं है। इस प्रकार मनोहारी वचन सुनकर मन्त्रियों और पुरोहितों के द्वारा समझायी जाती हुई रानी क्षण भर के लिए उत्सवहीन होती हुई चुप रही।

संस्कृतव्याख्या :—कल्याणि = कल्याणशीले, भूरमणमरणम् = भुवः पृथिव्याः रमणस्य पत्युः मरणं मृत्युः, अनिश्चितम् = अनिर्णीतम्, दैवज्ञ-कथितः = दैवज्ञेन मौहूर्तिकेन दैवज्ञैः वा कथितः उक्तः, मथितोद्धरातिः = मथिताः मानविमर्दिताः उद्धताः धृष्टाः अरातयः शत्रवः येन सः, सार्वभौमः = चक्रवर्ती, अभिरामः = मनोज्ञः, सुकुमारः = कोमलः, कुमारः = राज-कुमारः पुत्रो वा उदरे = कुक्षौ, भविता = भविष्यतीत्यर्थः, तस्मात् = तस्मात् कारणात्, अद्य = इदानीम् तव = भवतः, मरणम् = अनुमरणम्, अनुचितम् = अयुक्तं अश्रेयस्करमित्यर्थः। भूषितभाषितैः = भूषितं सुष्ठु शोभनं वा भाषितं येषां तैः, अमात्यपुरोहितैः अमात्याश्च मन्त्रिणश्च पुरोहिताश्च पुरोधसश्चतैः, अनुनीयमानया = प्रणीयमानया, तया = वसुमत्या, क्षणम् = मुहूर्तम्, क्षणहीनया = उत्सवरहितया, तूष्णीम् = जोषम्। अस्थायि = स्थितम्।

टिप्पणी :—'क्षणम्' 'कालाध्वनोरत्यन्त संयोगे' इस कारक सूत्र से द्वितीया हो जाती है 'अस्थायि' स्था धातु से भाव में लुङ् लकार का रूप है। 'क्षणः उद्धर्षो मह उद्धवः उत्सवः' इति कोशः। अस्थायिः ष्ठा गतिनिवृत्तौ' धातु से कर्म में लुङ् लकार का रूप है।

३। अथार्धरात्रेनिद्रानिलीननेत्रे परिजने विजने शोकपारावारम-पारमुत्तर्तुमशक्नुवती सेनानिवेशदेशं निःशब्दलेशं शनैरतिक्रम्य यस्मिन् रथस्य संसक्ततया तदानयनपलायनश्रान्ता गन्तुमक्षमाः क्षमापतिरथ्याः पथ्याकुलाः पूर्वमतिष्ठंस्तस्य निकटवटतरोः शाखायां मृतिरेखायामिव क्वचिदुत्तरीयार्धेन बन्धनं मृतिसाधनं विरच्य मर्तुकामाभिरामा वाङ्माधुरीविरसीकृतकलकण्ठकण्ठा साश्रुकण्ठा

व्यलपत् 'लावण्योपमित पुष्पसायक, भूनायक, भवानेव भाविन्यपि जन्मनि वल्लभो भवतु' इति ।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् आधी रात में सभी नौकरों के सो जाने पर एकान्त में चुपके से धीरे-धीरे शोक सागर को पार करने में असमर्थ होती हुई रानी वसुमती वहाँ पर गयी जहाँ पर राजा के रथ को लाने में थके हुए घोड़े स्थित थे। वहाँ पर समीपस्थ बरगद वृक्षकी शाखा में मृत्यु रेखा के समान दुपट्टे से मृत्युदायक बन्धन बनाकर (फांसी लगाने की रस्सी बनाकर) मरने की इच्छा से, कोयल की ध्वनि को भी तिरस्कृत करने वाली मधुरध्वनि से गद्गद कण्ठ से विलाप करने लगी। 'हे सौन्दर्य में काम के तुल्य ! हे राजन् ! आप मेरे भावी जीवन में भी प्रिय बनें'।

संस्कृतव्याख्या :—अथ = तदनन्तरम्, अर्धरात्रे = निशीथकाले, निद्रानिलीननेत्रे = निद्रया प्रमीलया निलीने मीलिते नेत्रे नयने यस्य तस्मिन्,परिजने = भृत्यवर्गे,विजने = विविक्ते, निर्जने वा, शोकपारावारम् = दुखसागरम्, अपारम् = पारयितुमशक्यम्, उत्तर्तुम् = पारयितुम्, अशक्नुवती = असमर्था सती, सेनानिवेशदेशम् = सेनायाः सैन्यस्य निवेशः शिविरं तस्य देशः प्रदेशः तम्, निःशब्दलेशम् = निर्गतः शब्दस्यलेश यस्मात्तम्, शब्दरहितमिति भावः, शनैः = मन्दम् अतिक्रम्य = उल्लङ्घ्य, रथस्य = स्यन्दनस्य, संसक्ततया = संलग्नतया, तत्परतया वा, तदानयनपलायन श्रान्ताः = तस्य राज्ञः राजहंसस्य आनयनं समानयनं तस्मिन् पलायनं धावनं तेन श्रान्ताः क्लान्ताः, गन्तुम् = यातुम्, अक्षमाः = असमर्थाः क्षमापतिरथ्याः = क्षमापतेः भूपतेः रथ्याः अश्वाः इति, पथ्याकुलाः = पथि मार्गे आकुला व्याकुलाः इति, पूर्वम् = प्रथमम्, अतिष्ठन् = स्थिताः आसन्, निकटवटतरोः = निकटे समीपे यो वटतरुः वट वृक्षः तस्य, शाखायाम् = प्रशाखायाम्, मृतिरेखायामिव = मृत्युलेखायामिव, उत्तरीयार्धेन = उत्तरीयवस्त्रेण, बन्धनम् = पाशम्, मृतिसाधनम्, = मृत्युसाधकम्, विरच्य = कृत्वा, मर्तुकामा = मर्तुं कामः इच्छा यस्यास्य, अभिरामा = ललाम भूता, वाङ्माधुरीविरसीकृतकलकण्ठकण्ठा = वाचः वाण्याः माधुरी माधुर्यं तया विरसीकृतः नीरसीकृतः कलकण्ठस्य परभृतः कण्ठः ययासा, साश्रुकण्ठा = अश्रुपूर्णकण्ठा, गद्गदस्वरेतिभावः, व्यलपत् = विलापं प्रकरोत्, रुरोदेति भावः,लावण्योपमित पुष्पसायक = लावण्येन सौन्दर्येण उपमितः तुलितः

पुष्पसायकः कामः येन तत्सम्बुद्धौ, भूनायक = भुवः पृथिव्याः नायकः अधिपतिः तत्सम्बुद्धौ, भवानेव = त्वमेव, भाविनि = आगामिनि, जन्मनि जन्मकाले, वल्लभः = प्रियः, भवतु = अस्तु।

टिप्पणी—मृतिरेखायामिव = उपमा अलंकार है जो लेखक के हस्तरेखा ज्ञान की ओर संकेत करता है। 'निःशब्दलेशम्' को क्रियाविशेषण भी माना जा सकता है निर्गतः शब्दलेशः यस्मिन् तत् यथा स्यात्तथा इस प्रकार होगा 'उत्तर्तुम्' उत् + तॄ प्लवनतरणयोः धातु से ऋत् इच्छातोः 'सूत्र से इत्व एवं 'वृतोवा' सूत्र से विकल्प से दीर्घ होने से उत्तरितुम् या उत्तरीतुम्, प्रयोग शुद्ध। लेखक द्वारा प्रयुक्त 'उत्तर्तुम्' अशुद्ध है। 'अर्धरात्रनिशीथौ द्वौ' इतिकोशः, "समुद्रोऽब्धिरकूपारः पारावारः सरित्पतिः" इत्यमरः "संव्यानमुत्तरीयञ्च। इतिकोशः। 'रथ्यः' 'तद् वहति रथयुगप्रासंगम्' इस सूत्र से यत् प्रत्यय होगा। मतुंकामा- "तुं काम मनसोरपि" इससे अनुस्वार लोप हो जाता है।

३४ तदाकर्ण्य नीहारकरकिरणनिकरसंपर्कलब्धावबोधो मागधोऽगाघरुधिरविक्षरणनष्टचेष्टो देवीवाक्यमेव निश्चिन्वानस्तन्वानः प्रियवचनानि शनैस्तामाह्वयत्। 39 सा ससंभ्रममागत्यामन्दहृदयानन्दसंफुल्लवदनारविन्दा तमुपोषिताभ्यामिवानिमिषताभ्यां लोचनाभ्यां पिबन्ती विकस्वरेण स्वरेण पुरोहितामात्यजनमुच्चैराहूय तेभ्यस्तं अदर्शयत्। 40 राजानिटिलतटचुम्बितनिजचरणाम्बुजैः प्रशंसितदैवमाहात्म्यैरमात्यैरभाणि—'देव, रथ्यचयः सारथ्यपगमे रथं रभसादरण्यमनयत्' इति।

हिन्दी अर्थ—रानी के विलाप को सुनकर चन्द्रमा के किरण समुदाय के सम्पर्क से चेतना प्राप्त करके, जो मगधनरेश अत्यन्त खून के बहने के कारण चेतनाशून्य थे, इस प्रकार के राजाने रानी के ही वाक्यों को समझकर अर्थात् रानी को पहचान करके धीरे से उसको बुलाया। वह रानी वसुमती शीघ्र ही आकर के अत्यन्त हर्ष के कारण जिनका मुखकमल खिल गया था उनको निर्निमेष नेत्रों से देखती हुई उच्च स्वर से पुरोहित और मन्त्रियों को बुलाकर उन्हें दिखाया। मस्तक से अपने चरण कमलों का चुम्बन करते हुए तथा भाग्य की सराहना करके मन्त्रियों ने कहा—देव ! सारथी के निधन हो जाने पर भी घोड़ों ने जल्दी से रथ को इस जंगल में पहुंचा दिया।

संस्कृतव्याख्या :—तत् = विलापम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, नीहारकर किरण निकर संपर्क लब्धाववोधः = नीहाराः शैत्यप्रधाना (लक्षणया) कराः मयूखाः यस्य सः, चन्द्ररित्यर्थः तस्य किरणाः अंशवः तेषां निकरस्य समुदायस्य सम्पर्केण लब्धः प्राप्तः अववोधः संज्ञा येन सः, मागध = मगधनरेशः, अगाधरुधिर विक्षरण नष्ट चेष्टः = अगाधं अत्यधिकं यत् रुधिरं शोणितं तस्य विक्षरणेन प्रवाहेन नष्टा विनष्टा चेष्टा प्रयासः यस्य सः, देवीवाक्यमेव = राज्ञावचनान्येव, निश्चिन्वानः = निश्चयं कुर्वन्, तन्वानः = विस्तारयन्, प्रथयन् वा, प्रियवचनानि = मधुरवाक्यानि, शनैः = मन्दं मन्दम्, ताम् = राज्ञीम्, आह्वयत = आह्वानं अकरोत्। सा = महिषी वसुमती, ससंभ्रमम् = शीघ्रम्, आगत्य = समागत्य, अमन्द हृदयानन्द संफुल्लवदनारविन्दा = न मन्द इति अमन्दः, अमन्दश्चासौ अधिकश्चासौ आनन्दः हर्षः प्रमोदो वा तेन संफुल्लं विकसितं वदनारविन्दं मुखपद्मम् यस्याः सा, तम् = राजानं राजहंसं, उपोषिताभ्याम् = जातोत्कण्ठाभ्यां, अनिमिषताभ्याम् = निर्निमेषाभ्याम्, लोचनाभ्यां = नेत्राभ्याम्, पिबन्ती = सस्पृहं पश्यन्तीत्यर्थः, विकस्वरेण = सुस्पष्टेन, स्वरेण = ध्वनिना, पुरोहितामात्य जनम् = पुरोहितमन्त्रिगणं, उच्चैः = उच्चस्वरेण (क्रियाविशेषणम्), आहूय = आह्वानं कृत्वा, तम् = राजानं, अदर्शयत् = दर्शनं अकारयत्, राजा = नृपः, निटिलतटचुम्बित निजचरणाम्बुजैः = निटिलतटेन ललाटस्थलेन चुम्बितं स्पृष्टं निजचरणाम्बुजं स्वपादकमलं यैस्तैः, प्रशंसितदैवमाहात्म्यै = प्रशंसितं संस्तुतं दैवस्य भाग्यस्य अदृष्टस्य वा माहात्म्यं महिमा यैस्तैः, अमात्यैः = मन्त्रिभिः, अभाणि = कथितम्, देव = हे राजन्, रथ्यचयः = रथ्यानां अश्वानां चयः समुदायः इति, सारथ्यपगमे = सारथेः सूतस्य अपगमे नाशे सतीति शेषः, रभसात् = वेगेन, रथम् = स्यन्दनम्, अरण्यम् = काननम्, अनयत् = आनीत् इत्यर्थः।

टिप्पणी—'वदनारविन्दा' रूपक अलंकार है। 'उपोषिताभ्यामिव' क्रियोत्प्रेक्षा अलंकार है। 'विकस्वरेण' यहाँ पर स्थेशभासपिसकसो वरच्' इस सूत्र से वरच् प्रत्यय हो जाता है।

द्रष्टव्य पद्यों = निमेषालसपक्ष्मपंक्तिरुपोषिताभ्यामिवलोचनाभ्याम्" रघुवंश ११.१९- उपोषिताभ्यां से मिलाइये। अभाणि = भण धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है।

41 तत्र निहत सैनिकग्रामे संग्रामे मालवपतिनाऽराधितपुरारातिना प्रहितया गदया दयाहीनेन ताडितो मूर्च्छामागत्य वने निशान्तपवनेन बोधितोऽभवम्'' इति महीपतिरकथयत् ।62 ततो विरचितमहेन मन्त्रिनिवहेन विरचितदैवानुकूल्येन कालेन शिबिरमानीयापनीताशेषशल्यः विकसितनिजाननारविन्दो राजा सहसा विरोपितव्रणोऽकारि 63विरोधि दैवधिक्कृतपुरुषकारो दैन्यव्याप्ताकारो मगधाधिपतिरधिकाधिरमात्यसम्मत्या मृदुभाषितया तया वसुमत्या मत्या कलितया च समबोधि ।64 देव, सकलस्य भूपालकुलस्य मध्ये तेजोवरिष्ठो गरिष्ठो भवानद्य विन्ध्यवनमध्यं निवसतीति जलबुदबुद् समाना विराजमाना सम्पत्तडिल्लतेव सहसैवोदेति नश्यति च । तन्निखिलं दैवायत्तमेवावधार्य कार्यम् ।

हिन्दी अर्थ—राजा ने कहा-''सैनिक समुदाय के युद्ध में समाप्त हो जाने पर मालव-नरेश ने शंकर द्वारा प्रदत्त गदा का निर्ममप्रहार किया जिससे मैं मूच्छित हो गया और इस वनप्रदेश में प्रातःकालिक वायु के द्वारा चेतना प्राप्त हुई ।'' इसके पश्चात् मन्त्रियों ने उत्सव मनाकर तथा भाग्य की आराधना करके राजा को शिविर में लाकर उसके सम्पूर्ण घाव दूर किये । प्रसन्नमुखवाला राजा शीघ्र ही घावों से रहित हो गया (उपचार के कारण) प्रतिकूल भाग्य से अपमानित पौरुष वाला दीनता से व्यस्त तथा मानसिक रूप से पीडित राजा की सेवा आदि मन्त्रियों की सम्मति से मृदुभाषिणी वसुमती अपनी बुद्धि से करने लगी तथा सान्त्वनापूर्ण वचन कहे ।

हे राजन् ! आप सम्पूर्ण राजाओं के मध्य में श्रेष्ठ हैं किन्तु आज विन्ध्य जंगल में रहते हैं । अतः यह राजलक्ष्मी जल के बुद्बुदों के समान बिजली की तरह सहसा आती और नष्ट होती है । अतः सब कुछ भाग्य के ही आधीन है यह विचार करके कार्य करना चाहिए ।

संस्कृतव्याख्या :—तत्र = युद्धे, निहतसैनिकग्रामे = निहतः विनष्टः सैनिकानां ग्रामः समूहः यस्मिन्, संग्रामे = युद्धे, मालवपतिना = मालवराजेन, आराधितपुरारातिना = आराधितः पूजितः पुरारातिः शंकरः येन तेन, प्रहितया = प्रेरितया, गदया = तन्नामक प्रहरणेन, दयाहीनेन = निष्कृपेण, ताडितः = आहतः, मूर्च्छामागत्य = मूर्च्छां प्राप्य, अत्र = अस्मिन्

स्थाने, वने=कानने, निशान्तपवनेन=प्रातःकालिकवायुना, बोधितः= लब्धचेतनः, अभवम्=जातः, इति=इत्थं, महीपतिः=भूपतिः, अकथयन्=अवंदत् । ततः=तदनन्तरम्, विरचितमहेन=विरचितः विहितः महः उत्सवः सत्कारो वा येन तेन,मन्त्रिनिवहेन अमात्यगणेन, विरचितदैवानुकूल्येनकालेन=विरचितं कृतं दैवस्य अदृष्टस्य आनुकूल्यं अनुकूलता येनतेन, कालेन=समयेन, शिविरम्=स्कन्धावारम्, अनीय=आयनं कृत्वा, अपनीताशेषशल्यः=अपनीतानि उद्धृतानि अशेषाणि सर्वाणि शल्यानि बाणाग्राणि शंकवो वा यस्य सः, विकसितनिजाननारविन्दः=विकसितं विकचं निजाननारविन्दं स्वमुखकमलं यस्य सः, राजा=नृपः, सहसा=अकस्मात् विरोपितव्रणः=विरोपिताः पूरिताः व्रणाः क्षतयः यस्य सः, अकारि= कृतम्, विरोधिदैवधिक्कृतपुरुषाकारः=विरोधिना अननुकूलेन दैवेन अदृष्टेन धिक्कृतः त्यक्कृतः पुरुषाकारः पराक्रमः यस्य सः, दैन्यव्याप्ताकारः =दैन्येन दीनतया व्यस्तः परिव्याप्तः आकारः स्वरूपं यस्य सः, मगधाधिपतिः=मगधनरेशः, अधिकाधिः अतिशयेन अधिकाः आधिः मनोव्यथा यस्य सः, अमात्यसम्मत्या=मन्त्रिमन्त्रणया, मृदुभाषितया=मृदु मधुरं भाषितं भाषणं यस्याः तया, मञ्जुभाषिण्येत्यर्थः, मत्या=बुद्धया, कलितया=युक्तया, समबोधि=विज्ञापितः । देव=भो राजन् ! सकलस्य= सम्पूर्णस्य, भूपाल कुलस्य=भूपतिसमुदायस्य, मध्ये=अन्तः, तेजोवरिष्ठः =तेजसा प्रतापेन वरिष्ठः महत्तमः, गरिष्ठः=गुरुः, भवानद्य=त्वमद्य, विन्ध्यवनमध्यम् = विन्ध्यारण्यम्, निवसति = प्रतिवसति, जलबुद्बुदसमाना=जलस्य सलिलस्य बुद्बुदः विकारः तत्समाना तत्सदृशी, विराजमाना=शोभमाना, सम्पत=राज्यलक्ष्मीः, तडिल्लतेव=विद्युल्लतेव, सहसा=अकस्मात, उदेति=उद्गच्छति, आविर्भवति वा दृष्टिपथमायातीतिभावः,नश्यति= तिरोभवति । तन्निखिलम्=दैवायत्तम् तदाखिलम्, =दैवाधनिम् । अवधीर्य=विचार्य, कार्यम्=कर्तव्यम् ।

टिप्पणी—समबोधि=सम पूर्वक बुध धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है ।' वरिष्ठः तथा गरिष्ठः यहाँ पर क्रमशः उसका वर् आदेश तथा गुरु का गर् आदेश होकर अतिशय अर्थ में 'अतिशायने तमबिष्ठनौ' इस सूत्र से इष्ठन् प्रत्यय हो जाता है । वर आदि आदेश करने वाला सूत्र है—

प्रियस्थिरस्फिरोरुबहुलगुरुवृद्धतृप्रदीर्घवृन्दारकाणांप्रस्थस्फववंहिगर्वषित्रब्द्राघिवृन्दा." 'विन्ध्यवनं निवसति' यहाँ पर 'उपान्वध्याङ्वसः' इस सूत्र से उप, अनु, अधि और आङ् उपसर्ग पूर्व में होने पर ही वस् धातु से आधार की कर्म संज्ञा होकर द्वितीया होती है। किन्तु यहाँ पर उपर्युक्त उपसर्ग न होने के कारण सप्तमी होगी = विन्ध्यवने निवसति' ही व्याकरण की दृष्टि से शुद्ध है। 'अकारि' डुकृञ् करणे धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है। "वापुंसि शल्यं शङ्कुर्ना" इत्यमरः।

45 'किञ्च पुरा हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्या असंख्या महीन्द्राः ऐश्वर्येणोपमितमहेन्द्रा दैवतन्त्रं दुःखयन्त्रं सम्यगनभूय: पश्चादनेककालं निजराज्यमकुर्वन्। तद्वदेव भवान् भविष्यति। कंचन कालं विरचितदैवसमाधिर्गलिताधिस्तिष्ठतु तावत्'' इति।

वामदेवस्यसाक्षात्कारः—

46 ततः सकलसैन्यसमन्वितो राहंसस्तपो विभ्राजमानं वामदेवनामानं तपोधनं निजाभिलाषावाप्तिसाधनं जगाम।

हिन्दी अर्थ—(रानी ने कहा) हे राजन्! पहले हरिश्चन्द्र और रामचन्द्र इत्यादि असंख्य राजाओं ने जो इन्द्र के तुल्य थे, भाग्यवशात् पहले दुःख भोग करके बाद में बहुत समय तक राज्योपभोग किया। इसी प्रकार आप भी अर्थात् दुःख भोग करके सुख प्राप्त करेंगे। इसलिए भाग्य की आराधना करते हुए आप निश्चिन्त रहें। इसके पश्चात् अपनी सम्पूर्ण सेना के सहित राजहंस तपश्चरण से शोभित, अपनी अभिलाषा प्राप्ति के एकमात्र साधन तपस्वी वामदेव के पास गया।

संस्कृतव्याख्या :—किञ्च = अन्यच्च, पुरा = प्राचीनकाले, हरिश्चन्द्ररामचन्द्रमुख्याः = हरिश्चन्द्रश्च रामचन्द्रश्च तन्नामकौ मुख्यौ प्रमुखौ येषां ते, असंख्या = संख्यातीताः महीन्द्राः भूपतयः, ऐश्वर्येणोपमितमहेन्द्राः = ऐश्वर्येण समृद्धया उपमितः तुलितः महेन्द्र सुरेन्द्रः यैस्ते, दैवतन्त्रम् = दैवाधीनम्, दुःखयन्त्रम् = दुःखमेवतन्त्रम् कष्टवृन्दमिति भावः, सम्यक् = निपुणम्, अनुभूय = अनुभवं कृत्वा, पश्चात् = तदनन्तरम्, अनेककालम् = बहुसमयम्, निजराज्यम् = स्वराज्यम्, अकुर्वन् = शासनं कृतवन्त इत्यर्थः। भवान् = त्वम्, भविष्यति = सुखंप्राप्स्यति इति भावः, कंचन

कालम्=किञ्चित् समयम्, विरचितदैवसमाधिः=विरचितः विहितः दैव समाधि दैवाराधनं येन सः, गलिताधिः=गलितः दूरीभूतः आधि मनोव्यथा यस्य सः, तिष्ठतु तावत्=प्रतीक्षतामिति भावः। ततः=तदनन्तरम् सकल सैन्य समेतः=सकलेन समग्रेण सैन्येन बलेन समेनः सहितः, राजहंसः= भगवनरेशः, तपो विभ्राजमानम्=तपसा तपश्चरणेन विशेषेणः भ्राजमानं दीप्यमानं, वामदेव नामानम्=तन्नामकं ऋषिम्, तपोधनम्=तापसम्, निजाभिलाषावाप्ति साधनम्=निजः स्वकीयः अभिलाषः इच्छः कामो वा तस्य अवाप्तिः प्राप्तिः तस्य साधनं साधनभूतं, जगाम=ययौ।

५७ तं प्रणम्य तेन कृतातिथ्यस्तस्मै कथित कथ्यस्तदाश्रमे दूरीकृतः श्रमे कंचन कालमुषित्वा निजराज्याभिलाषी मितभाषी सोमकुलावतंसो राजहंसो मुनिमभाषत=‘भगवन्, मानसारः प्रबलेन दैवबलेन मां निर्जित्य मद्भोग्यं राज्यमनु=भवति। तद=वदहमप्युग्रं तप्रो विरच्य तमरातिमुन्मूलयिष्यामि लोकशरण्येन भवत्कारुण्येनेति नियमवन्तं भवन्तं प्राप्नवम्’ इति।

५८ ततस्त्रिकालज्ञस्तपोधनो राजानमवोचत्–‘सखे! शरीरकार्श्यकारिणातपसालम्। वसुमतीगर्भस्थः सकलरिपुकुलमर्दनो राजनन्दनो नूनं भविष्यति, कंचनकालं तूष्णीमास्व इति’।

हिन्दी अर्थ—उस मुनि को प्रणाम करके, उसके द्वारा आतिथ्य को स्वीकार करके तथा उसे आत्मकथ्य वताकर परिश्रम को दूर करने वाले उसके आश्रम में कुछ समय तक रहकर अपने राज्य की अभिलाषा करने वाले, स्वल्पभाषी, चन्द्रकुल के भूषण स्वरूप राजहंस ने मुनि से कहा ‘हे भगवन्! मानसार प्रवल दैवबल से मुझे जीत करके मेरे भोग्य राज्य का उपभोग कर रहा है। उसके समान मैं भी उग्र तपस्या करके उस शत्रु का नाश करूँगा। अतः लोगों को शरण देने वाले आपकी कृपा से ही आपके पास आया हूँ।

इसके पश्चात् भूत, वर्तमान एवं भविष्य ज्ञाता वह तपस्वी राजा से वोला—‘सखे! शरीर को दुर्बल वनाने वाली तपस्या मत करो। निश्चिन्त रूप से रानी वसुमती के गर्भ से सम्पूर्ण शत्रुओं का मर्दन करने वाला राज पुत्र पैदा होगा। अतः आप कुछ समय तक शान्त रहें।

संस्कृतव्याख्या :—तम्=महामुनिम्, प्रणम्य = नमस्कृत्य, तेन= मुनिना, कृतातिथ्य:=कृतं विहितं आतिथ्यं अतिथिसत्कार: यस्य स:, तस्मै=वामदेवायकथित कथ्य: कथितं उक्तं कथ्यंकथनीयं येन स:, तदाश्रमे=मुनिकुटीरे, दूरीकृतश्रमे=दूरीकृत: अपा कृत: श्रम: परिश्रम: यत्रतस्मिन्, कञ्चनकालम्=किञ्चित् समयम्, उषित्वा=निवासं कृत्वा, निजराज्याभिलाषी=स्व राज्याकांक्षी,मितभाषी=स्वल्पभाषी,सोकुमलावतंस: = चन्द्रकुलालंकार:, राजहंस: = मगधनरेश:, मुनिम्+ऋषिम्, अभाषत=अवदत्, भगवन् = भो मुने !, मानसार=मालवाधिपति:, प्रबलेन=प्रकृष्टेन, दैववलेन=दैव सामर्थ्येन, माम्=राजहंसम्, निर्जित्य=विजित्य, मद्भोग्यम्=मया भोग्यं सेव्यम्, राज्यम्=राजलक्ष्मीमितिभाव:, अनुभवति=सेवते,तद्वत्=तत्सदृशम्, अहमपि, उग्रम=उत्कटम्, तप:=तपश्चरणम्, विरच्य=कृत्वा, अरातिम्=शत्रुम्, उन्मूलयिष्यामि =उन्मूलनं करिष्यामि, लोक शरण्येन=लोकानां जनानां शरणे रक्षणे साधु: तेन, भवत्कारुण्येन=भवत: तव कारुण्येन करुणया, नियमवन्तम् =व्रतिनम्, भवन्तम्=त्वाम्, प्राप्नवम्=आगच्छम्। तत:=तदनन्तरम् त्रिकाल=भूत भविष्यत् वर्तमान काल ज्ञाता, तपोधन:=तापस:, राजानम्=नृपम्, अवोचत्=अवदत्, सखे=हे मित्र, शरीरकार्श्यकारिणा= शरीरस्य कायस्य कार्श्यं दौर्बल्यं तत् करोतीतितेन, तपसा=तपश्चरणेन, अलम्=माकुरु इति भाव:। वसुमतीगर्भस्थ:=राज्ञीगर्भस्थित:, सकल रिपुकुलमर्दन:=सकलानां समग्राणां रिपूणां शत्रूणां कुल समूहं मर्दयति विनाशयति य: स:, राजनन्दन: राजपुत्र: नूनम्=निश्चितम्, संभविष्यति =समुत्पन्नो भविष्यति। कञ्चनकालम्=किञ्चित् समयं, तूष्णीम्=जोषम् मौनं वा, आस्स्व=तिष्ठ।

टिप्पणी—'तपसालम्' यहाँ अलं शब्द का प्रयोग है यदि इस 'अलम्' शब्द का प्रयोग शक्त या समर्थ के अर्थ में होता है तो चतुर्थी विभक्ति प्रयोग "नम: स्वस्ति स्वस्ति स्वाहालं वषडयोगाच्च। इस सूत्र से चतुर्थी अन्यथा रोकने के अर्थ में तृतीया होती है। उषित्वा वसनिवासे धातु से क्त्वा प्रत्यय होता है। तथा 'ग्रहीज्यावयिव्यधि - सूत्र से सम्प्रसारण होगा" वसतिक्षुधोरिट्' इस सूत्र से इड् का आगम तथा "शासिवसिघसीनां च" इससे षत्व हो जायेगा।

49 गगनचारिण्यापि वाण्या 'सत्यमेतत्' इति तदेवा वाचि। राजापि मुनिवाक्यमङ्गीकृत्यातिष्ठत्।

राजवाहनस्य जन्म :—

50 ततः सम्पूर्णगर्भदिवसा वसुमती सुमुहूर्ते सकल लक्षणलक्षितं सुतमसूत। ब्रह्मवर्चसेन तुलितवेधसं पुरोधसं पुरस्कृत्य कृत्यविन्महीपतिः कुमारं सुकुमारं जात संस्कारेण बालालंकारेण च विराजमानं राजवाहन नामानं व्यधत्त।

मन्त्रिपुत्राणामुत्पत्ति :—

51 तस्मिन्नेव काले सुमतिसुमित्रसुमन्त्र सुश्रुतानां मन्त्रिणां प्रमतिमित्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुताख्या महाभिख्याः सूनवो नवोद्यदिन्दुरुचश्चिरायुषः समजायन्त। राजवाहनो मन्त्रिपुत्रैरात्ममित्रैः सह बालकेलीरभवन्नवर्धत।

हिन्दी अर्थ—इसी बीच आकाशवाणी ने भी कहा कि यह बात सत्य है राजा भी मुनि-वचनों को स्वीकार कर वहीं रहने लगा। इसके पश्चात् गर्भकाल समय पूर्ण होने पर वसुमती ने शुभ मुहूर्त में सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त पुत्र को जन्म दिया। अपने ब्रह्मतेज के द्वारा ब्रह्मोपम पुरोहित को आगे करके अर्थात् उनकी मन्त्रणा से ही कार्य को समझने वाले राजा राजहंस ने जातकर्म संस्कार के द्वारा तथा बालकोचित अलंकारों से शोभित सुकुमार राजकुमार का नाम राजवाहन रखा।

उसी समय सुमति, सुमित्र, सुमन्त्र और सुश्रुत नामक मन्त्रियों के प्रमति, मित्रगुप्त, मन्त्रगुप्त और विश्रुत नामक क्रमशः चार पुत्र अत्यन्त शोभा वाले तथा नूतन चन्द्र के समान कान्ति वाले, दीर्घजीवी उत्पन्न हुए।

संस्कृतव्याख्या :—गगनचारिण्यापि=आकाशचारिण्यापि, वाण्या=वाचा, सत्यमेतत्=अवितथमेतत्, अवाचि=अभाषि, राजापि=नृपोऽपि, मुनिवाक्यम्=तापसवाक्यम्, अङ्गीकृत्य=स्वीकृत्य, अतिष्ठत्= निवासं अकरोत्। ततः=तदनन्तरम्, सम्पूर्ण गर्भदिवसा=सम्पूर्णाः परिपूर्णाः गर्भदिवसाः गर्भकालावधिः यस्या सा, वसुमती=तन्नामिका राज्ञी, सुमुहूर्ते =शुभलग्नवेलायां, सकल लक्षणलक्षितम्=सकलैः समग्रैः लक्षणैः राजचिन्हैः लक्षितः युक्तः तम्, सुतम्=पुत्रम्, असूत=सुषुवे। ब्रह्मवर्चसेन=

ब्रह्मणः विधातुः वर्चः तेजः तेन, तुलितवेधसम् = तुलितः उपमितः वेधा ब्रह्मा येन तं, पुरोधस = पुरोहितं, उपाध्यायं वा, पुरस्कृत्य = अग्रे कृत्य, कृत्यवित् = कार्यज्ञः, महीपतिः = भूपतिः, कुमारम् = राजसूनुम्, सुकुमारम् = सुकोमलम्, जातसंस्कारेण = जातकर्म नाम्ना संस्कार विषेशेण, बालालंकारेण = बालकोचिताभूषणेनविराजमानम् = विशेषेण शोभमानम्, राजवाहननामानम् = तन्नामकं पुत्रम्, व्यधत्त = अकरोत् ।

तस्मिन्नेवकाले = तत्समये, सुमति सुमित्र सुमन्त्र सुश्रुतानां तन्नामकानाम्, मन्त्रिणाम् = अमात्यानाम्, प्रमति मित्रगुप्तमन्त्रगुप्तविश्रुताख्याः = तन्नामानः मन्त्रिपुत्राः, महाभिख्या = महती अभिख्या शोभा येषां ते, सूनवः = पुत्राः नवोद्यदिन्दुरुचः = नवः अभिनवः उद्यन् उद्गच्छन् आविर्भवनवा, इन्दुः विधुः तस्य रुक् इव रुक् कान्तिः येषां ते, चिरायुषः = चिर जीविनः, समजायन्त = उत्पन्नाः अभूवन् राजवाहनः = तन्नामकः, मन्त्रिपुत्रैः = अमात्यात्मजैः आत्ममित्रैः = स्वसुहृद्भिः, सह = साकम् बालकेलीः = बाल क्रीडाः अनुभवन् = कुर्वन्, अवर्धत = वृद्धिमगात् ।

टिप्पणी—(अवाचि) वच् धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है। 'आत्म मित्रैः सह' यहाँ पर 'सहयुक्तेऽप्रधाने' इस सूत्र से तृतीया विभक्ति होती है। ब्रह्मवर्चसेन "ब्रह्महस्तिभ्यां वर्चसः" इस सूत्र से अच् होगा। "स्रष्टा प्रजापतिर्वेधा" इत्यमरः ।

उपहारवर्मोत्पत्ति कथा—

अथ कदाचिदेकेन तापसेन रसेन राजलक्षणविराजितं कञ्चिन्नयनानन्दकरं सुकुमारं कुमारं राज्ञे समर्प्यावाचि—'भूवल्लभ ! कुश समिदानयनाय वनं गतेन मया, काचिदशरण्या व्यक्त कार्पण्याश्रु मुञ्चन्ती वनिता विलोकिता । "निर्जने वने किंनिमित्तं रुद्यते त्वया "इति पृष्टा सा कर सरोरुहैरश्रुप्रमृज्य सगद्गदं मामवोचत्—"मुने, लावण्यजितपुष्पसायके मिथिलानायके कीर्तिव्याप्त सुधर्मणि निजसुहृदो मगधराजस्य । सीमन्तिनीसीमन्तमहोत्सवाय पुत्रदारसमन्विते पुष्पपुरमुपेत्य कञ्चन कालमधिवसति समाराधित गिरीशो मालवाधीशो मगधराजं योद्धुमभ्यगात् ।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् एक वार किसी तपस्वी ने प्रेमपूर्वक राजा के चिन्हों से सुशोभित तथा नेत्रों को आनन्द देने वाले सुकुमार राजकुमार को राजा को देकर कहा हे राजन् ! कुश और समिधा लेने के लिए जंगल में गये हुए मैंने असहाय तथा दुःख के अश्रु प्रवाहित करती हुई एक औरत को देखा। निर्जन वन में तुम क्यों रोती हो' इस प्रकार पूंछी जाती हुई उसने अपने कर-कमलों से आंसुओं को पोंछकर गद् गद् स्वर में कहा हे मुने ! सौन्दर्य में काम को जीतने वाला मिथिलानायक प्रहारवर्मा, जिसकी कीर्ति देवसभा में भी व्याप्त थी, अपने मित्र मगधराज राजहंस को रानी के सीमन्तमहोत्सव के लिए, पुत्र और पत्नी सहित पुष्पपुर (राजहंस की राजधानी) आया और उसके कुछ समय वहाँ पर रहनेपर, भगवान् शंकर की आराधना करने मालवराज (मानसार) मगधराज से युद्ध करने के लिए आया।

संस्कृतव्याख्या :—अथ=तदनन्तरम्, कदाचित्=कस्मिन् समये एकेनः अज्ञातेन, तापसेन=ऋषिणा, रसेन=प्रेम्णा, राजलक्षणविराजितम्=राज्ञः भूपतेः लक्षणैः चिन्हैः विराजितं सुशोभितं, नयनानन्दकरम्=नयनयोः नेत्रयोः आनन्दकरं आनन्ददायिनं, सुकुमारम्=सुकोमलम्, कुमारम्=राजकुमारं पुत्रम् वा, राज्ञे=नृपाय, समर्प्य=दत्त्वा, अवाचि उक्तम्, भूवल्लभ्=पृथिवीप्रिय ! कुशसमिदानयनाय=कुशाश्च दर्भाश्च समिधश्च याज्ञिकेन्धनानिच तेषां आनयनं समानयनं तस्मै, वनम्=कानन्नम्, गतेन=यातेन, मया=तापसेन, अशरण्या=नास्ति शरण्यं रक्षकः यस्या सा, व्यक्तकार्पण्या=व्यक्तं प्रकटीकृतं कार्पण्यं दैन्य यया सा, अश्रु=नयनजलम्, वाष्पं वा, मुञ्चन्ती, त्यजन्ती, वनिता=स्त्री विलोकिता =अवलोकिता, निर्जन=विजने, वने=कानने, अरण्ये वा, किंनिमित्तम् किंकारणं, रुद्यते=रोदनं क्रियते, त्वया=भवता, इति=इत्थं, पृष्टा सा =वनिता, करसरोरुहैः=करकमलैः, अश्रु=वाष्पं, प्रमृज्य=अपाकृत्य, सगद्गदम्=गद् गद् स्वरेणेतिभावः, माम्=तापसम्, अवोचत्=अवदत्, मुने=ऋषे, लावण्यजितपुष्पसायके=लावण्येन सौन्दर्येण जितः विजितः पुष्पसायकः कामदेवः येन तस्मिन्, मिथिलानायके=मिथिलेश्वरे, कीर्तिव्याप्त सुधर्मणि=कीर्त्या=यशसा व्याप्ता व्यापृता सुधर्मा देवसभा येन

तस्मिन्, निजसुहृदः=स्वमित्रस्य, मगधराजस्य=राजहंसस्य, सीमन्तिनी सीमन्तमहोत्सवाय=सीमन्तिन्याः राज्ञ्याः सीमन्तमहोत्सवः सीमन्तोन्नयनसंस्कारविशेषः, तस्मै, पुत्रदारसमन्विते=पुत्राश्च आत्मजाश्च दाराश्च नार्यश्च तैः समन्विते युक्ते, पुष्पपुरम्=कुसुमनगरम्, उपेत्य=आगत्य, कञ्चनकालम्=कञ्चनसमयम्, अधिवसति=प्रवसति सति, समाराधित गिरीशः=समाराधितः समर्चितः गिरीशः शंकरः येन सः, मालवाधीशः= मालवेश्वरः, मगधराजम=राजहंसम, योद्धुम्=युद्धं कर्तुम, अभ्यगात् आगच्छत् ।

टिप्पणी—करसरोरुहैः यहाँ पर वनिता एकवचन है अतः तदनुसार 'करसरोरुहाभ्याम्, पाठ ही समीचीन प्रतीत होता है। किन्तु सौन्दर्यातिशय के कारण बहुवचन भी क्षम्य माना जा सकता है। 'मुञ्चन्ती' यह मुच्लृ मोक्षणे तुदादि धातु का रूप है शतृ प्रत्ययान्त स्त्रीलिङ्ग का रूप है। यहाँ पर 'आच्छीनद्योर्नुम्' इस सूत्र से विकल्प से नुम् होने के कारण मुञ्चन्ती तथा 'मुञ्चती' दोनों रूप बनते हैं। 'सुधर्मणि यहाँ पर=धर्मादनिष्केवलात्' इस सूत्र से अनिच् होकर धर्मन् शब्द से सप्तमी एक वचन में धर्मणि बनेगा। 'कालमधिवसति' यहाँ पर 'कालम्' में द्वितीया 'उपान्वध्याङ्वसः' इस सूत्र से कर्म संज्ञा होने के पश्चात् होती है। 'अधिवसति' यह रूप अधि+वस निवासे धातु का शतृ प्रत्ययान्त सप्तमी एकवचन का रूप है। नकि लट् लकार 'रसो गन्धरसे जले। शृङ्गारादौ विषे वीर्ये तिक्तादौ द्रवरागयोः' इतिमेदिनी। शरणं गृह रक्षित्रोः' इत्यमरः।

५५ तत्र प्रख्यातयोरेतयोरसंख्ये संख्ये वर्तमाने सुहृत्साहाय्यकं कुर्वाणो निजबले सति विदेहे विदेहेश्वरः प्रहारवर्मा जयवता रिपुणाभिगृह्य कारुण्येन पुण्येन विसृष्टो हतावशेषेण शून्येन सैन्येन सह स्वपुरगमनमकरोत्।

हिन्दी अर्थ—प्रसिद्ध उन दोनों (अर्थात् मालवराज मानसार तथा मिथिलानरेश प्रहारवर्मा) का युद्ध होने पर, मित्र की सहायता करते हुए अपनी सेना के नष्ट हो जाने पर प्रहारवर्मा को विजयशील शत्रु मानसार ने पकड़ लिया करुणावशात् या उसके पुण्यावशेष के कारण मुक्त प्रहारवर्मा अपनी बची हुई सेना के साथ अपने नगर को चला गया।

संस्कृतव्याख्या :—तत्र=तस्मिन् स्थाने, कुसुमपुर इत्यर्थः, प्रख्याततयोः=विख्याततयोः, एनयोः=द्वयोः, असंख्ये=संख्यातीते, संख्ये=युद्धे, वर्तमाने = भवने सति, सुहृत्साहाय्यकम् = सुहृदः मित्रस्य साहाय्यकं साहाय्यमेव साहाय्यकं सहायतामित्यर्थः, कुर्वाणः=कुर्वन्, निजबले= स्वसैन्ये, विदेहे=विगतः नाष्टः देहः शरीरं यस्य तस्मिन् मृते इत्यर्थः, विदेहेश्वरः = मिथिलाधिपः प्रहारवर्मा=तन्नामकः, जयवता=विजयशीलेन, रिपुणा=शत्रुणा, अभिगृह्य=आक्रम्य, कारुण्येन=दयया, पुण्येन =सुकृतेन, विसृष्टः = त्यक्तः, हतावशेषेण = निहतावशेषेण; शून्येन= =शस्त्रादिरिक्तेन, सैन्येन = बलेन, सह = सार्धम्, स्वपुरगमनम्= निजनगर प्रस्थानं, अकरोत्=अगच्छदित्यर्थः ।

टिप्पणी :—'साहाय्यकम्' यहाँ पर स्वार्थ में 'कप् होने से साहाय्य अर्थ ही बना रहता है । 'कारुण्येन' यहाँ पर गुणवचन ब्राह्मणादि—सूत्र से भाव अर्थ में ष्यञ् प्रत्यय होकर बनता है । 'कुर्वाणः' कृ धातु से शानच् प्रत्यय का रूप है ।

ततो वनमार्गेण दुर्गेण गच्छन्नधिकबलेन शबरबलेन रभसादभिहन्यमानोमूलबलाभिरक्षितावरोधः स महानिरोधः पलायिष्ट । तदीयार्भकयोर्यमयोर्धात्रीभावेन परिकल्पिताहं मद् दुहितापि तीव्रगति भूपतिमनुगन्तुमक्षमे अभूव । तत्र विवृतवदनः कोऽपि रूपी कोप इव व्याघ्रः शीघ्रं मामाघ्रातुमागतवान् । भीताहमुदग्रग्राविण स्खलन्ती पर्यपतम् । मदीयपाणिभ्रष्टो बालकः कस्यापि कपिलाशवस्य क्रोडमभ्यलीयत ।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् दुर्गम वनमार्ग से जाते हुए, अधिक बल वाली शबर सेना के द्वारा आक्रान्त होता हुआ, अपनी मूल सेना से रक्षित सपत्नीक वह प्रहारवर्मा (सेना से) रक्षित होकर भाग गया । उसके दोनों जुड़वाँ बच्चों का पालन करने वाला मैं तथा मेरी पुत्री तेजगति वाले राजा का पीछा करने में असमर्थ थी । उस जंगल में कोई साक्षात मूर्तिमान क्रोध की तरह कोई व्याघ्र शीघ्र ही मुझे सूंघने (खाने) के लिए आया । डरी हुई मैं ऊंचे नीचे पत्थरों पर लड़खड़ाती हुई गिरपड़ी । मेरे हाथ से गिरा हुआ बालक किसी मृत कपिला गाय की गोद में छिप गया ।

संस्कृतव्याख्या:—ततः = तदनन्तरम्, वनमार्गेण = काननपथा, दुर्गेण = दुःखेन गन्तुं शक्यः तेन दुर्गमेणेत्यर्थः, गच्छन् = व्रजन्, अधिकबलेन = अधिकं अत्यन्तं बलं पराक्रमः यस्य तेन, शबरबलेन = शबरसैन्येन, रभसात् = वेगात्, अभिहन्यमानः = आक्रम्यमाण इत्यर्थः, मूलबलाभिरक्षितावरोधः—मूलबलेन मूलसेनया अभिरक्षितः सुरक्षितः अवरोधः शुद्धान्तः यस्य सः, सः = प्रहारवर्मा, महानिरोधः = महान् अत्यधिकः निरोधः अवरोधः यस्य सः, पलायिष्ट = पलायितः, तदीयार्भकयोः = तस्य इमौ तदीयौ च तौ अर्भकौ तयोः तत्पुत्रयोरित्यर्थः, यमयोः = यमलयोः, धात्री भावेन = उपमातृभावेन, परिकल्पिता = निर्मापिता, मद् दुहिता = मत्पुत्री, तीव्रगतिम् = तीव्रा वेगवती गतिः गमनं यस्य तम्, भूपति = राजानं, अनुगन्तुम् = अनुयातुं, अक्षमे = असमर्थे, अभूव = अभवाव। तत्र = कानने, विवृतवदनः = विवृतं विस्तारितं वदनं आननं यस्य सः, रूपी = साक्षात् रूपधारी, शरीरीत्यर्थः, कोप इव = क्रोध इव, व्याघ्रः = शार्दूलः, मां, आघ्रातुम् = भक्षितुमित्यर्थः, आगतवान् = आगतः, भीता = भीत्युपेता, अहं, उदग्रगाणि = उद्गतानि अग्राणि पुरो भागाः यस्य एतादृशः ग्रावा प्रस्तरशकलं तस्मिन्, स्खलन्ती = स्खलनं कुर्वन्ती, पर्यपतम् = अपतम्, मदीयपाणिभ्रष्टः—मदीयहस्तच्युतः, बालकः = शिशुः, कपिलाशवस्य = कपिलाया धेन्वाः शवस्य मृतशरीरस्य, क्रोडम् = अङ्कम्, अभ्यलीयत = प्रच्छन्नोऽभूत।

टिप्पणी—अभिहन्यमानः = अभि + हन् धातु से कर्म में शानच् प्रत्यय हुआ है। पलायिष्ट = अय गतौ धातु से परि + अय उपसर्ग के रकार का 'उपसर्गस्यायतौ' सूत्र से लादेश होता है यह लुङ् लकार एकवचन का रूप है। 'अक्षमे अभूव' यहाँ 'ईदूदेद् द्विवचनं प्रगृह्यम्' से प्रगृह्य संज्ञा होने से प्रकृतिभाव हो जाने से अन्य कोई सन्धि नहीं हुई है। 'अभूव' भू धातु लङ् लकार उत्तम पुरुष द्विवचन का रूप है। क्योंकि इस वाक्य में कर्ता अहं तथा दुहिता दो हैं। अतः क्रिया में उत्तम पुरुष द्विवचन का रूप लगा है।

५८ तच्छवाकर्षिणोऽमर्षिणो व्याघ्रस्य प्राणान् बाणो बाणासन यन्त्र मुक्तोऽपाहरत्। लोलालको बालकोऽपि शबरैरादाय कुत्रचिदुपानीयत्। कुमारमपरमुद्वहन्ती मद्दुहिता कुत्र गता न जाने। साहं

मोहं गता केनापि कृपालुना वृष्णिपालेन स्वकुटीरमावेश्य विरोपित व्रणाऽभवम् । ततः स्वस्थीभूय भूयः क्ष्माभर्तुरन्तिकमुपतिष्ठासुरसहायतया दुहितुरनभिज्ञाततया च व्याकुलीभवामि" इत्यभिदधाना "एकाकिन्यपि स्वामिनं गमिष्यामि" इति सा तदैव निरगात् ।

हिन्दी अर्थ—उस शव की ओर आकृष्ट होने वाले क्रुद्ध बाघ के प्राणों को धनुष से मुक्त (किसी व्याध आदि के द्वारा बाण ने अपहरण कर लिया । चञ्चल बालों वाले उस बालक को कोई शबर कहीं पर ले गया । दूसरे बालक को मेरी पुत्री लेकर के न जाने कहाँ चली गयी है । इस प्रकार मोहभाव को प्राप्त मुझे कोई कृपाशील ग्वाला अपनी कुटीर में लाया और घावों की पूर्ति की । वहाँ से स्वस्थ होकर के मैं अपने महाराज के समीप जाना चाहती हूँ किन्तु असहाय होने से तथा पुत्री का पता न होने से दुःखी हूँ इस प्रकार कहती हुई मैं अकेली होती हुई भी स्वामी के पास जाऊँगी यह कह कर चली गयी ।

संस्कृतव्याख्या :—तच्छवाकर्षिणः = तस्य कपिलावेनोः शवस्य कुणपस्य मृतशरीरस्य वा आकर्षी लोलुपःतस्य,अमर्षिणः=क्रुद्धस्य, व्याघ्रस्य =शार्दूलस्य, प्राणान्=असून्, बाणः=शरः, बाणासनयन्त्र मुक्तः= कार्मुक क्षिप्तः, अपाहरत्=जहार,लोलालकः= लोलाः चञ्चलाः अलकाः चूर्णकुन्तलाः यस्य सः बालकोऽपि=शिशुरपि, शबरैः=वन्यजातिविशेषः, आदाय= गृहीत्वा, कुत्रचित्=कुत्रापि, उपानीयत्=उपनीतः,कुमारम्=राजकुमारं, अपरम्=द्वितीयम, उद्वहन्ती=धारयन्ती, मद्दुहिता=मत्पुत्री, कुत्र= क्व, गता=याता, न=नहि, जाने=अवगच्छामि, साहम्, मोहंगता= मोहभावं प्राप्ता, केनापि=अज्ञातेन, कृपालुना=दयालुना वृष्णिपालेन= मेषपालेन, स्वकुटीरम्=स्वनिवासस्थानम, आवेश्य=अनीय, विरोपितव्रणा =विरोपिताः पूर्तिगताः व्रणाः क्षतयः यस्याः सा, अभवम्=अभूवम्, ततः =तस्मात् स्थानात्, स्वस्थीभूयः स्वस्थचित्तीभूय, भूयः=पुनः क्ष्माभर्तुः= भूपतेः=अन्तिकम्=समीपम, उपतिष्ठासुः – उपस्थातुमिच्छुः, असहायतया =साहाय्यरहितया, दुहितुः=कन्यायाः, अनभिज्ञाततया=अपरिचिततया, व्याकुलीभवामिव्याकुलतां अनुभवामि, इति=इत्थम् । अभिदधाना= कथयन्ती, एकाकिनी=अद्वितीया सती, स्वामिनम्=महाराजम्, गमिष्यामि यास्यामि, सा=वनिता, तदैव=तस्मिन्काले एव, निरगात्=निर्ययौ ।

टिप्पणी :—आ + विश धातु से णिच् प्रत्यय के पश्चात् ल्यप् प्रत्यय का रूप है।

57 अहमपि भवन्मित्रस्य विदेहनाथस्य विपन्निमित्तं विषादमनुभवंस्तदन्वयाङ्कुरं कुमारमन्विष्यंस्तदैकं चण्डिकामन्दिरं सुन्दरं प्रागाम । तत्र संततमेवंविधविजयसिद्धये कुमारं देवतोपहारं करिष्यन्तः किराताः 'महीरुहशाखावलम्बितमेनमसिलतया वा, सैकततले खनननिक्षिप्तचरणं लक्षीकृत्य शितशरनिकरेण वा, अनेकचरणैः पलायमानं कुक्कुरबालकैर्वा दंशयित्वा संहनिष्यामः" इति भाषमाणा मया समभ्यभाष्यन्त—'ननु किरातोत्तमाः, घोरप्रचारे कान्तारे स्खलितपथः स्थविरभूसुरोऽहं मम पुत्रकं क्वचिच्छायायां निक्षिप्य मार्गान्वेषणाय किञ्चिदन्तरमगच्छम्।

हिन्दी अर्थ—मैं भी आपके मित्र विदेहराज की आपत्ति पर विषाद अनुभव करता हुआ उनके वंश के अंकुर स्वरूप राजकुमार को खोजता हुआ एक सुन्दर चण्डिका के मन्दिर में पहुंचा। वहाँ पर (अर्थात् उस मन्दिर में) इस प्रकार विजय की सिद्धि के लिए राजकुमार को देवबलि चढ़ाने की इच्छा से किरात कह रहे थे कि इसे पेड़ की शाखा में लटका कर तलवार से मार दो या बालू में इसके पैर गाड़ कर फिर तीक्ष्ण शरसमूह से लक्ष्य बनाओ या द्रुतगामी कुत्तों के पिल्लों से कटवाओ इत्यादि प्रकार से कहने वाले किरातों से मैंने कहा—हे किरातप्रवरो! इस भयंकर जंगल में मैं मार्ग भूलने वाला एक वृद्ध ब्राह्मण हूँ। मैं अपने एक पुत्र को वृक्ष की छाया में रखकर मार्ग ढूढ़ने को कुछ दूर चला गया।

संस्कृतव्याख्या :—अहमपि=तापसोऽपि, भवन्मित्रस्य=भवतः तव मित्रं सुहृद् तस्य, विदेहनाथस्य = मिथिलेश्वरः विपन्निमित्ताम्=विपद् आपद् निमित्तं कारणं यस्य तं, विषादम्=खेदम्, अनुभवन्=अनुभवं कुर्वन्, तदन्वयांकुरम्=तस्य अन्वयः वंशः तस्य अंकुरः प्ररोहः तम्, कुमारम्=राजपुत्रम्, अन्विष्यन् = अन्वेषणं कुर्वन्, चाण्डिकामन्दिरम् =कालीमन्दिरम्, सुन्दरम्=मनोहरं, प्रागाम=अगच्छम्, तत्र=मन्दिरे सन्ततम्=निरन्तरम्, एवंविधविजय सिद्धये=एवं विधः एतादृशः विजयः जयः तस्य सिद्धिः प्राप्तिः तस्यै, कुमारम्=राजसूनम्, देवतोपहारम्=

देवतायै देवाय उपहारः बलिः तम्, करिष्यन्तः = करिष्यमाणाः, किराताः = भिल्लाः, महीरुह शाखावलम्बितम् = महीरुहः वृक्षः तस्य शाखायां प्रकाण्डे अवलम्बितं निबद्धं, एनम् = कुमारम्, असिलतया = खड्गलतया, वा = अथवा, सैकततले = वालुकामयप्रदेशे, खननिक्षिप्तचरणम् = खनने गर्ते निक्षिप्तौ प्रक्षिप्तौ चरणौ = पादौ यस्य तम् लक्षीकृत्य = उद्दिश्य, शितशरनिकरेण = शिताः तीक्ष्णाश्च ये शराः बाणाश्च तेषां निकरेण समूहेन, अनेकचरणैः = अनेक पादैः, पलायमानम् = धावन्तम्, कुक्कुरबालकैः = शुनां शिशुभिः, 'पिल्ला' इति भाषायाम् ? दंशयित्वा = दंशनंकारयित्वा, संहनिष्यामः = हननं करिष्यामः, इति = इत्थं, भाषमाणाः = कथयन्तः। समभ्यभाष्यन्त = कथिताः, किरातोत्तमाः = किरातप्रवराः, घोरप्रचारे = घोरः भयंकरः प्रचारः सञ्चारः यस्मिन् तस्मिन्, कान्तारे = कानने, स्खलितपथः = स्खलितः भ्रष्टः पन्था मार्गः यस्य सः, स्थविर भूसुरः = स्थविरश्च वृद्धश्चासौ भूसुरः ब्राह्मणः, मम = अस्माकम्, पुत्रकम् = आत्मजम, क्वचित् = कुत्रचित्, छायायाम् = वृक्षच्छायायाम्, निक्षिप्य = संस्थाप्य, मार्गान्वेषणाय = मार्गस्य पथः अन्वेषणं गवेषणं तस्मै, किञ्चिदन्तरम = किञ्चिद्दूरम्, अगच्छम् = अव्रजम्।

टिप्पणी :—'स्खलितपथः' यहाँ पर 'ऋक्' पूरब्धूः पथामानक्षे, इस सूत्र से पथिन् का पथ आदेश हो जाता है।

59 स कुत्र गतः, केन वा गृहीतः, परीक्ष्यापि न वीक्ष्यते, तन्मुखावलोकनेन विनानेकान्यहान्यतीतानि। किं करोमि, क्व यामि, भवद्भिः किमदर्शि इति। 'द्विजोत्तम कश्चिदत्र तिष्ठति। किमेष तव नन्दनः सत्यमेवं। तदेनं गृहाण' इत्युक्त्वा दैवानुकूल्येन मह्यं तं व्यतरन्। 61 तेभ्यो दत्ताशीरहं बालकमङ्गीकृत्य शिशिरोदकादिनोपचारेणास्वास्य निःशङ्कं भवदङ्कं समानीतवानस्मि। एनमायुष्मन्तं पितृरूपो भवानभिरक्षतात् इति। 62 राजा सुहृदापन्निमित्तं शोकं तन्नन्दन विलोकनसुखेन किञ्चिदधरीकृत्य तमुपहारवर्मनाम्नाहूय राजवाहनमिव पुपोष।

हिन्दी अर्थ—(आनेपर) वह कहाँ चला गया, किसने उसे पकड़ लिया, खोजने पर भी उसे नहीं पाया, उसके मुख को देखे बिना कई दिन व्यतीत हो गये। क्या करूँ ? कहाँ जाऊँ ? क्या आप लोगों ने तो उसे नहीं

देखा ? (वे बोले) हे ब्राह्मण, एक बालक यहाँ पर है। क्या यह यथार्थतः आपका ही पुत्र है ? इसे आप लें, यह कह कर उन्होंने भाग्य के अनुकूल होने के कारण मुझे दे दिया। उनको आशीर्वाद देकर मैं बालक को लेकर, शीतल जल आदि से उपचार के द्वारा स्वस्थ करके निःशंक होकर आपकी गोद में लाया हूँ। इस आयुष्मान पुत्र की आप पिता के रूप में रक्षा करें। (यह सुनकर) राजहंस ने मित्र के विपत्ति जनित दुःख को उसके पुत्र को देखने के सुख से कुछ हलका करके और उसका नाम उपहारवर्मा रखकर राजवाहन के समान पालन करने लगे।

संस्कृतव्याख्या:—एषः=बालकः, कुत्र=क्व, गतः=यातः, केन=केन पुरुषेण, वा=अथवा, गृहीतः=धृतः, परीक्ष्यापि=निरीक्ष्यापि, न=नहि, वीक्ष्यते=दृश्यते, तन्मुखावलोकनेन=तस्य बालकस्य मुखं आननं तस्य अवलोकनेन दर्शनेन, विना=ऋते, अनेकानि=बहूनि, अहानि=दिनानि, अतीतानि=व्यतीतानि, किंकरोमि=किंकार्यं करोमि, क्व=कुत्र, यामि=गच्छामि, भवद्भिः=युष्माभिः, अदर्शि=दृष्टः, द्विजोत्तम=द्विजप्रवर, कश्चित्=अज्ञातः, अत्र=अस्मिन् स्थाने, तिष्ठति=अस्तीतिभावः, किमेषः=पुरोवर्तमानः, तव=भवतः, नन्दनः=पुत्रः, सत्यमेव=अवितथमेव, तदेनम्=पुत्रम्, गृहाण=स्वीकुरु, इत्युक्त्वा=इत्थं कथयित्वा, दैवानुकूल्येन=दैवस्य भाग्यस्य अदृष्टस्य वा आनुकूल्येन अनुग्रहेण, मह्यम=ब्राह्मणाय, व्यतरन्=दत्तवन्तः। तेभ्यः=किरातेभ्यः, दत्ताशीः=दत्ता प्रदत्ता आशिषः आशीर्वादाः येन सः, बालकम्=पुत्रम्, अङ्गीकृत्य=स्वीकृत्य, शिशिरोदकादिना=शिशिरं शीतश्च तदुदक जलं च तदादि यस्मिन् तेन, उपचारेण=चिकित्सया, आश्वास्य=स्वस्थं विधाय, निःशङ्कम्=निर्विशङ्कम्, भवदङ्कम्=भवतः तव अङ्कं क्रोडम्, समानीतवान्=आनीतवान्, एनम्=बालकम्, आयुष्मन्तम्=चिरंजीविनं, पितृरूपः=जनक तुल्यः, भवान्=त्वम्. अभिरक्षतात्=रक्षतु। राजा=नृपः, सुहृदापन्निमित्तम्=सुहृदः मित्रस्य आपद् विपद् निमित्तं कारणं यस्यतम्, शोकम्=दुःखम् तन्नन्दनविलोकनसुखेन=तस्य मित्र नन्दनः तन्नन्दनः तस्य यत् विलोकनं दर्शनं तस्मात् यत्सुखं आनन्दः तेन, किञ्चिद्=स्वल्पम्, अघरीकृत्य=लघूकृत्य, उपहारवर्मनाम्ना=तदभिधानेन, आहूय=आकर्ण्य राजवाहनमिव=स्वपुत्रमिव, पुपोष=वृद्धिं निनाय।

टिप्पणी—'मुखावलोकनेन विना' पृथक् विनानानाभिस्तृतीयान्यतरस्याम्, इस सूत्र से तृतीया विभक्ति हुई है। 'अदर्शि' 'दृशिर' प्रेक्षणे धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है। 'अभिरक्षतात्' अभि+रक्ष धातु से 'तुह्योस्तातङ्ङाशिष्यन्यतरस्याम्' इस सूत्र से विकल्प से तातङ् प्रत्यय हो जाता है।

अपहारवर्मोत्पत्तिकथा—

63 जनपतिरेकस्मिन् पुण्यदिवसे तीर्थस्नानाय पक्वणनिकटमार्गेण गच्छन्नबलया कयाचिदुपलालितमनुपमशरीरं कुमारं कञ्चिदवलोक्य कुतूहलाकुलस्तामपृच्छत्—"भामिनि ! रुचिरमूर्तिः सराजगुणसंपूर्तिसादर्भको भवदन्वयसंभवो न भवति। कस्य नयनानन्दनः, निमित्तेन केन भवदधीनो जातः, कथ्यतां याथातथ्येन त्वया' इति। 64 प्रणतया तया शबर्या सलीलमलापि–'राजन् ! आत्मपल्ली समीपे पदव्यां वर्तमानस्य शक्रसमानस्य, मिथिलेश्वरस्य सर्वस्वमपहरति शबरसैन्ये मद्दयितेनापहृत्य कुमार एष मह्यमर्पितो व्यवर्धत इति। 65 तदवधार्य कार्यज्ञो राजा मुनिकथितं द्वितीयं राजकुमारमेव निश्चित्य सामदानाभ्यां तामनुनीयापहारवर्मेत्याख्याय देव्यै 'वर्धय' इति समर्पितवान्।

हिन्दी अर्थ–एकबार राजा ने किसी पुण्य दिन पर तीर्थस्नान के लिए शबर बस्ती के निकट से गुजरते हुए किसी औरत के द्वारा लालित तथा अद्वितीय शरीर वाले कुमार को देखकर कुतूहल से युक्त होते हुए पूछा "हे भामिनि ! सुन्दर मूर्तिवाला तथा राजचिन्हों से भूषित यह बालक आपके वंश का नहीं हो सकता। यह किसके नेत्रों का आनन्द देने वाला है और किस कारण से तुम्हें मिला, इस वृतान्त को यथार्थ रूप से कहो'।

उस शबरी ने प्रणाम करके कहा हे राजन् ! अपनी बस्ती के निकट मार्ग से जाते हुए इन्द्र के समान मिथिलाधीश्वर का सर्वस्व-शबर सेना ने अपहरण कर लिया। उस समय मेरे प्रियतम ने इस कुमार का अपहरण करके मुझे अर्पित कर दिया और मैंने इसे बढ़ाया। इस वृत्तान्त को सुन

कर कार्यज्ञाता राजा ने मुनि द्वारा बताये हुए द्वितीय राजकुमार का निश्चय करके साम तथा दान नीति के द्वारा उस भीलिनी को समझाकर उस बालक का नाम अपहारवर्मा रखकर रानी को पालन करने के लिए दे दिया।

संस्कृतव्याख्या:—जनपतिः=नरपतिः, एकस्मिन्=कस्मिंश्चित्, पुण्यदिवसे=पुण्य दिने, तीर्थस्नानाय=तीर्थाभिषेकाय, पक्वणनिकट मार्गेण=पक्वणः शबरवसतिः तस्य निकटमार्गेण समीपपथा, गच्छन्=व्रजन्, अबलया=स्त्रिया, उपलालितम्=स्नेहेनधृतम्, अनुपमशरीरम्=अनुपमं अद्वितीयं शरीरं कायः यस्य तम्, कुमारम्=राजपुत्रम्- अवलोक्य =दृष्ट्वा, कुतूहलाकुलः=कुतुकाकुलः, ताम्=शबरीम्, अपृच्छत्=पृष्टवान्, भामिनि=कोपने, रुचिरमूर्तिः=रुचिरा रमणीया मूर्तिः शरीरम् यस्य सः, सराजगुणसंपूर्तिः=राज्ञः गुणाः तेषां संपूर्तिः तत्सहितः राजलक्षणोपेत इत्यर्थः, असौ=पुरो वर्तमानः, अर्भकः=बालकः, भवदन्वय सम्भवः=भवतः तव अन्वये वंशे सम्भवः उत्पत्तिः यस्य सः, न भवति=न सम्भवति, कस्य, नयनानन्दनः=नयनाभिरामः, केननिमित्तेन=केनकारणेन, भवदधीनः=भवदायत्तः, जातः=भूतः, कथ्यताम्=उच्यताम्, याथातथ्येन=यथार्थरूपेण, त्वया=भवता। प्रणतया=प्रकर्षेण नता तया कृतनमस्कारयेति भावः, शबर्या=किरात्या, सलीलम्=सविलासम्, अलापि=अवाचि, राजन्=नृप, आत्मपल्लीसमीपे=आत्मनः स्वस्य पल्ली घोषः वसतिर्वा तस्याः समीपे निकटे, पदव्याम्=मार्गे, वर्तमानस्य =स्थितस्य, शक्रसमानस्य=इन्द्रतुल्यस्य, मिथिलेश्वरस्य=मिथिलाधिपस्य, सर्वस्वम्=सर्वद्रव्यम्, अपहरति=अपहरणं कुर्वति सति, शबरसैन्य =किरातबले, मद्दयितेन=मत्वल्लभेन, अपहृत्य=गृहीत्वा, एषः=अयम्, कुमारः=राजसूनुः, मह्यं, अर्पितः=प्रदत्तः, व्यवर्धत=वृद्धिप्राप्तः। तद् अवधार्य=विमृश्य, सुचिन्त्यवा, कार्यज्ञः=कार्यवित्, राजा=नृपः, मुनिकथितम्=तापसोक्तम्, द्वितीयं, राजकुमारम्=राजपुत्रम्, एव, निश्चित्य=सुविचार्य, सामदानाभ्याम्=साम च सान्त्वनं च, दानञ्च प्रदानञ्च ताभ्याम्, अनुनीय=संतोष्य, अपहारवर्मेति, आख्याय=नामकृत्वा, देव्यै=राज्यै, वर्धय=पालयेति भावः, समर्पितवान्=दत्तवान्।

टिप्पणी—'कोपना सैव भामिनी' इत्यमरः यहाँ पर इस शब्द का प्रयोग साधारण स्त्री के अर्थ में ही किया गया है। यों तो यह कोप युक्त स्त्री के लिए प्रयोग होता है। 'सामदानाभ्याम्' राजा के लिए साम (समझाना-बुझाना) दान (कुछ देकर कार्य करना या कराना,) दण्ड (सजादेना) भेद (तोड़-फोड़ करना) ये चार नीतियाँ कहीं गयी हैं।

शक्रसमानस्य–लुप्तोपमा अलंकार है। 'पन्थानः पदवी सृतिः" स्वोऽस्त्रियांधने'' इत्यमरः।

पुष्पोद्भवोत्पत्तिकथा—

६६ कदाचिद्वामदेवशिष्यः सोमदेवशर्मा नामकञ्चिदेकं बालकं राज्ञः पुरो निक्षिप्याभाषत् देव! रामतीर्थे स्नात्वा प्रत्यागच्छता मया काननावनौ वनितया कयापि धार्यमाणमेनमुज्ज्वलाकारं कुमारं विलोक्य सादरमभाणि—"स्थविरे! का त्वम्? एतस्मिन्नटवीमध्ये बालकमुद्वहन्ती किमर्थमायासेन भ्रमसि' इति वृद्धयाप्यभाषि—'मुनिवर! कालयवननाम्नि द्वीपे कालगुप्तो नाम धनाढ्यो वैश्यवरः कश्चिदस्ति। तन्नन्दिनीं नयनानन्दकारिणीं सुवृत्तां नामैतस्माद् द्वीपादागतो मगधनाथमन्त्रिसंभवो नामरत्नोद्भवो रमणीय गुणालयो भ्रान्तभूवलयो मनोहारी व्यवहार्युपयम्यसुवस्तुसंपदा श्वसुरेण संमानितोऽभूत् कालक्रमेण नताङ्गी गर्भिणी जाता।

६७ ततः सोदरविलोकन कौतूहलेन रत्नोद्भवः कथञ्चिच्छ्वशुरमनुनीय चपललोचनया सह प्रवहणमारुह्यपुष्पपुरमभिप्रतस्थे। कल्लोलमालिकाभिहतः पोतः समुद्राम्भस्यमज्जत्।

हिन्दी अर्थ—एक बार वामदेव का शिष्य सोमदेव शर्मा एक बालक को राजा के सामने रखकर बोला 'हे राजन्! रामतीर्थ में स्नान के पश्चात् लौटते हुए मैंने जंगल में एक स्त्री के द्वारा धारित इस सुन्दर राजकुमार को देख करके कहा हे वृद्धे! तुम कौन हो? और इस जंगल में बालक को ढोती हुई क्यों घूमती हो? इस प्रकार पूछने पर वृद्धा ने कहा-'हे मुनिवर! कालयवन नामक एक द्वीप में कालगुप्त नामक एक धनाढ्य वैश्य रहता है। उसकी नेत्रों को आनन्द देने वाली सुवृत्ता नाम की कन्या से इस द्वीप से आया हुआ मगधराज के मन्त्री के पुत्र रत्नोद्भव ने जो

सुन्दर गुणों का भण्डार, पृथ्वी पर घूमने वाला, मनोहर तथा व्यापारी था। (ये रत्नोद्भव के विशेषण हैं) शादी की और उसके ससुरने सम्पत्ति से उसका स्वागत किया और कालक्रमात् वह कन्या गर्भवती हो गयी।

इसके पश्चात् भाइयों को देखने की उत्कण्ठा से रत्नोद्भव अपने ससुर की अनुनय करके, चञ्चलनेत्रों वाली पत्नी के साथ नौका पर चढ़कर पुष्पपुर की ओर चला। संयोगवशात् वह नौका तरंगों के थपेड़ों से सागर में डूब गयी।

संस्कृतव्याख्या :- कदाचिद् = कदापि, वामदेवशिष्यः = वामदेवस्य तन्नामक तापसस्य शिष्यः अन्तेवासी, सोमदेवशर्मानाम = तन्नामकः, एकम् = अज्ञातं, बालकं = शिशुम्, राज्ञः = नृपस्य, पुरः = अग्रे, निक्षिप्य = संथाप्य, अभाषत = अवदत् --'देव = राजन्! रामतीर्थे = तन्नामकतीर्थस्थाने स्नात्वा = स्नानं कृत्वा, प्रत्यागच्छता = प्रतिनिवर्तमानेन, काननावनौ = काननस्य वनस्य आवनौ भूमौ, वनितया = प्रमदया, धार्यमाणम् = अवधार्यमाणम्, उज्ज्वलाकारम् = उज्ज्वलः मनोहरः प्रदीप्तिमान् वा आकारः आकृतिः यस्य तम्, कुमारम् = राजपुत्रम्, विलोक्य = अवलोक्य, सादरम् = समानम्, अभाषि = उक्तम्, अभापि वा स्थविरे = वृद्धे। का त्वं, अटवीमध्ये = अरण्यप्रदेशे, उद्वहन्ती = धारयन्ती, किमर्थम् = किं प्रयोजनमवलम्ब्य, आयासेन कष्टेन, भ्रमसि = विहरसि, वृद्धयापि = स्थविरयापि, अभाषि = अभाषि, मुनिवर = मुनिप्रवर, कालयवननाम्नि = कालयवननामकेद्वीपे, कालगुप्तः नाम, धनाढ्यः = धनधान्यसमृद्धः, वैश्यवरः = वणिक् श्रेष्ठः, अस्ति = वर्तते, तन्नन्दिनीम् = तत्पुत्रीम्, नयनानन्दकारिणीम् = नयनयोः नेत्रयोः आनन्दः हर्षः तं करोति विधत्ते ताम् सुवृत्ताम् = तन्नामिकां, द्वीपादागतः = द्वीपात् समागतः, मगधनाथ मन्त्रिसम्भवः = मगधनाथस्य मगधेश्वरस्य मन्त्रिणः अमात्यात् सम्भवः उत्पत्तिः यस्य सः, रत्नोद्भवनाम, रमणीयगुणालयः रमणीयानां मनोहराणां गुणानां सद्गुणानां आलयः निवासस्थानम्, भ्रान्तभूवलयः भ्रान्तं पर्यटितं भुवः मेदिन्याः वलयं मण्डलं चक्रं वा येन सः, मनोहारीः = अभिरामः, व्यवहारी = वाणिज्य कुशलः, उपयम्य = विवाह्य, सुवस्तुसंपदा = सुवस्तूनां शोभनद्रव्याणां संपदा समृद्धया, श्वशुरेण = पत्नी पित्रा, सम्मानितोऽभूत् = सत्कृतोऽभवत्, कालक्र-

मेण=क्रमवशेन, नताङ्गी=नतानि नम्राणि अङ्गानि शरीराङ्गानि यस्या सा, गर्भिणी=गर्भवती, जाता=अभवत्।

ततः=तदनन्तरम्, सोदर विलोकन कौतूहलेन=सोदरणां सहोदराणां विलोकने अवलोकने यत्कौतूहलं कौतुकं तेन, रत्नोद्भवः कथंचिद्, यथा कथमपि, अनुनीय=अनुनयं विधाय, चपललोचनया=चपले चञ्चले लोचने नयने यस्याः सा तया, सह=साकम्, प्रवहणम्=नावम्, आरुह्य=समारुह्य, पुष्पपुरम्=कुसुमपुरम् अभिप्रतस्थे=प्रस्थानं अकरोत्। कल्लोल-मालिकाभिहतः=कल्लोलानां महातरंगाणां मालिकाभिः मालाभिः अभिहतः प्रताडितः, पोतः=प्रवहणम्, समुद्राम्भसि=समुद्रस्य सागरस्य अम्भसि जले, अमज्जत्=बुडितः निमग्नो वा अभवत्।

टिप्पणी :—प्रत्यागच्छता = प्रति+आ+गम् धातु से शतृ प्रत्यय होकर तृतीया विभक्ति का रूप है। 'कालयवन' ह्वूलर के अनुसार अरविया के जञ्जीवार द्वीप का संकेत है। नताङ्गी=इसका भावार्थ सुन्दर अङ्गों वाली है। 'चपललोचनया सह' सहयुक्तेऽप्रधाने' इस सूत्र से तृतीया हुई है। अभिप्रतस्थे=अभि+प्र+स्था धातु से समवप्रविभ्यः स्थः' इस सूत्र से आत्मनेपद हो जाता है।

69 गर्भभरालसां तां ललनां धात्रीभावेन कल्पिताहंकराभ्यामुद्वहन्ती फलकमेकमधिरुह्य दैवगत्या तीरभूमिमगमम्। सुहृज्जनपरिवृतो रत्नोद्भवस्तत्र निमग्नो वा केनोपायेन तीरमगमद्वा न जानामि। क्लेशस्य परां काष्ठामधिगता सुवृत्तास्मिन्नटवीमध्येऽद्य सुतमसूत। प्रसववेदनया विचेतना सा प्रच्छायशीतले तरुतले निवसति। विजने वने स्थातुमशक्यतया जनपदगामिनं मार्गमन्वेष्टुमुद्युक्तया मया विवशायास्तस्याः समीपे बालकं निक्षिप्य गन्तुमनुचितमिति कुमारोऽप्यनायि' इति।

हिन्दी अर्थ—दैव संयोग से मैं धात्रीभाव से गर्भ के कारण आलस्य युक्त उस स्त्री को हाथों से सम्हाले हुए एक लकड़ी के तख्ते पर बैठकर किनारे पर आ गयी। मित्रों से घिरे हुए रत्नोद्भव उसमें डूब गये या किनारे पर जा लगे यह मुझे मालूम नहीं। कष्ट की चरम सीमा को प्राप्त हुई सुवृत्ता ने इस जंगल में एक पुत्र को जन्म दिया। प्रसववदेना के कारण

मूर्च्छित होती हुई वह छाया के कारण शीतल वृक्ष के नीचे बैठी है। इस नर्जन जंगल में रहना (अकेले) अनुचित जानकर नगर की ओर जाने वाले मार्ग के अन्वेषण में तत्पर मैं उस विवशा के समीप बालक को छोड़ना अनुचित समझ कर के इसे अपने साथ लायीं हूँ।

संस्कृतव्याख्या :—गर्भभरालसाम्=गर्भभरेण गर्भभारेणालसां जडां आलस्ययुक्तां वा, ताम्=पूर्वोक्ताम्, ललनाम्=प्रमदाम्, धात्रीभावेन=उपमातृत्वेन, धात्रीरूपेण वा,कल्पिता: परिकल्पिता,कराभ्याम्=हस्ताभ्याम्, उद्वहन्ती=वहनं कुर्वन्ती, फलकम् = काष्ठखण्डम्, अधिरुह्य=आरुह्य, दैवगत्या=दैवसंयोगेन, तीर भूमिम्=तटमित्यर्थः, अगमम्=अगच्छम्, सुहृज्जनपरिवृतः=सुहृज्जनैर्मित्रसमुदायैः परिवृतः आवृतः रत्नोद्भवः=तन्नामकः, निमग्नः=ब्रुडितः, वा=अथवा, केनोपायेन=केन प्रयासेन, तीरम् = कूलम्, अगमत् = अगच्छत् न = नहि, जानामि= अवगच्छामि। क्लेशस्य = दुःखस्य परां काष्ठाम् = अतिशयम, असूत= प्रसूतवती, प्रसववेदनया=गर्भविमोचनपीडया, विचेतना=चेतना रहिता, निःसंज्ञा वा, सा = सुवृत्ता, प्रच्छायशीतले = प्रच्छायेन प्रचुरच्छायया शीतले शिशिरे, तरुतले=वृक्षतले, निवसति=प्रतिवसति, विजने=निर्जने, वने=कानने, स्थातुम्=उषितुम्, अशक्यतया=असमर्थतया, जनपदगामिनम्=नगरगामिनम्, मार्गम्=अध्वानम्, अन्वेष्टुम्, अन्वेषणं कर्तुम् उद्युक्तया=तत्परया विवशायाः=विकलायाः, तस्याः स्त्रियः, समीपे=सविधे, बालकम् = कुमारम्, निक्षिप्य = संस्थाप्य, गन्तुम् = यातुम्, अनुचितम्=अशोभनम् इति,विचार्य कुमारः=बालकः, अनायि=आनीतः।

टिप्पणी—असूत षूङ् प्राणिगर्भविमोचने धातु से लङ् लकार का रूप है। प्रच्छाय शीतले 'गोस्त्रियोरुपसर्जनस्य' इस सूत्र से ह्रस्व हो जाने से छाय रूप हो जाता है। आनायि=णीञ् प्रापणे धातु से आङ् पूर्वक कर्म में लुङ् लकार हुआ है। "कूलं रोधश्च तीरञ्च प्रतीरञ्च तटं त्रिषु" इत्यमरः।

१०तस्मिन्नेव क्षणे वन्यो वारणः कश्चिददृश्यत। तं विलोक्य भीता सा बालकं निपात्य प्राद्रवत्। अहं समीपलतागुल्मके प्रविश्य परीक्षमाणोऽतिष्ठम्, निपतितं बालकं पल्लवकवलमिवाददति गजपतौ

कण्ठीरवो भीमरवो महाग्रहेण न्यपतत्। भयाकुलेन दन्तावलेन झटिति वियति समुत्पात्यमानो बालको न्यपतत्। चिरायुष्मत्तया स चोन्नततरु शाखासमासीनेन वानरेण केनचित्पक्वफल बुद्धया परिगृह्य फलेतरतया विततस्कन्धमूले निक्षिप्तोऽभूत् सोऽपि मर्कटः क्वचिदगात्।

हिन्दी अर्थ—उसी समय एक जंगली हाथी दिखाई पड़ा। उसे देख करके वह वृद्धा भयभीत होकर बालक को डालकर भाग गयी। मैं समीप के लता कुञ्ज में प्रवेश करके देखने लगा। उस त्यक्त बालक को पल्लव के कौर के समान ज्यों ही हाथी ग्रहण करने लगा त्यों ही एक भयंकर शब्द करने वाले सिंह ने रोष के साथ उसपर आक्रमण किया। भयाक्रान्त हाथी के द्वारा शीघ्र ही आकाश में उछाला हुआ बालक नीचे गिरपड़ा। दीर्घायु होने के कारण उसको, एक ऊंची शाखा पर बैठे हुए वन्दर ने पका फल समझ करके पकड़ लिया तथा फल न होने से इसे वृक्ष की चौड़ी डाल पर रख दिया। वह वन्दर भी कहीं चला गया।

संस्कृतव्याख्या :—तस्मिन्नेव क्षणे=तदानीम्, वन्यः=आरण्यकः, वारणः=हस्ती, कश्चित्=अज्ञातः, अदृश्यत=दृष्टिपथमायातः, तम्=हस्तिनम, विलोक्य=अवलोक्य, भीता=भयाकुला, सा=धात्री, बालकम्=कुमारम्, निपात्य=अधः पातयित्वा, प्राद्रवत्=प्रधावत्, समीपलतागुल्मके=समीपस्य सकाशस्य लतागुल्मके लताकुञ्जे, प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, परीक्षमाणः=परितः ईक्षमाणः, अतिष्ठम्=स्थितोऽभवम्, निपतितम्=अधः पतितं, बालकम्=शिशुम्, पल्लवकवलमिव=पल्लव ग्रासमिव, आददति=ग्रहणं कुर्वति सति, गजपतौ=गजराजे, कण्ठीरवः=सिंहः, भीमरवः=भीमः भयंकरः रवः गर्जनं यस्य सः, महाग्रहेण=महतावेशेन, न्यपतत् = आक्रमणमकरोदित्यर्थः, भयाकुलेन = भयभीतेन, दन्तावलेन=हस्तिना करिणा वा, झटिति=द्रुतम्, वियति=आकाशे, समुत्पात्यमानः=समुत्क्षिप्यमाणः, बालकः=कुमारः, न्यपतत्=अधोऽपतत्, चिरायुष्मत्तया = दीर्घजीविततया, उन्नततरुशाखासमासीनेन= उन्नतस्य उच्छ्रितस्य तरोः वृक्षस्य शाखायां प्रशाखायां समासीनेन उपविष्टेन वानरेण = कपिना, पक्वफलबुद्धया = परिपक्वफलमिति मत्वा, परिगृह्य

=धृत्वा, फलेतरतया=फलात् इतरत इति दृष्ट्वा, विततस्कन्धमूले= वितते विस्तृते स्कन्धस्य प्रकाण्डस्य मूले मूलप्रदेशे, निक्षिप्तोऽभूत्=सुरक्षितोऽभवदित्यर्थः, मर्कटः=वानरः शाखामृगो वा, क्वचित्=क्वापि, अगात् अगच्छत् ।

टिप्पणी—अदृश्यत=दृशिर् प्रेक्षणे धातु से कर्म में लङ् लकार का रूप है। "कुञ्जरो वारणः करी" इत्यमरः ग्रासस्तुकवलः पुमान्" "कण्ठीरवो मृगरिपुः" इत्यमरः । गुल्मके=गुल्म शब्द से स्वार्थ या अल्पार्थ में कन् हो जाता है। बन्दर का शिशु को पका फल समझना 'भ्रान्तिमान्' अलंकार है।

71 बालकेन सत्वसम्पन्नतया सकलक्लेशसहेनाभावि। केसरिणा करिणं निहत्य कुत्रचिदगामि। लतागृहान्निर्गतोऽहमपि तेजः पुञ्जं बालकं शनैरवनीरुहादवतीर्य वनान्तरे वनितामन्विष्याविलोक्यैनमानीय गुरवे निवेद्य तन्निदेशेन भवन्निकट मानीतवानस्मि इति।

72 सर्वेषां सुहृदामेकदैवानुकूलदैवाभावेन महदाश्चर्यं बिभ्राणो राजा रत्नोद्भवः "कथमभवत्" इति। चिन्तयंस्तन्नन्दनं पुष्पोद्भवनामधेयं विधाय तदुदन्तं व्याख्याय सुश्रुताय विषाद संतोषावनुभवं स्तदनुजतनयं समर्पितवान्।

हिन्दी अर्थ—उस बालक ने सत्व युक्त होने के कारण सम्पूर्ण दुःखों को सहा। सिंह हाथी को मार करके कहीं चला गया। लताकुञ्ज से मैं भी निकल करके तेजोराशि बालक को धीरे वृक्ष से उतार करके और जंगल में उस औरत को खोजते हुए न प्राप्त करके, इसे लाकर के और गुरु को यह सब बता करके, उन्हीं के आदेश से आपके समीप लाया हूँ। सभी मित्रों के ऊपर एक बार ही अनुकूल दैव के अभाव से (विपदायें आयीं) महान् आश्चर्य को धारण करते हुए राजा हंसवाहन ने कहा कि रत्नोद्भव का क्या हुआ इस प्रकार सोंचते हुए उसके पुत्र का नाम पुष्पोद्भव रखकर और सम्पूर्ण वृतान्त सुश्रुत को बताकर विषाद और सन्तोष का अनुभव हुए, उसके छोटे भाई के पुत्र को सुश्रुत को सौंप दिया।

संस्कृतव्याख्या :—बालकेन=कुमारेण, सत्व सम्पन्नतया=सत्वेन बलेन सम्पन्न युक्तः तस्य भावः तया, सकलक्लेशसहेन=सम्पूर्णदुःखसहिष्णुना, अभावि=भूतः, केसरिणा=सिंहेन, करिणम्=हस्तिनम्, निहत्य

=हत्वा, कुत्रचित्=क्वापि, अगाधि=गतः, लतागृहात्=लताकुञ्जात्, निर्गतः=वहिरागतः, अहमपि, तेजः पुञ्जम्=तेजोराशिम, वालकम्=कुमारम्, शनैः=मन्दम् मन्दम्, अवनीरुहात्=अवन्यां पृथिव्यां रोहतीति अवनीरुह वृक्षः तस्मात्, अवतार्य=अवतारणं कृत्वा, वनान्तरे=अन्यद् वनमिति वनान्तरं तस्मिन् वनान्तरे अन्यस्मिन् कानने, वनिताम्=ललनाम् अन्विष्यन्=अन्वेषणं कुर्वन्, अविलोक्य=अदृष्ट्वा, एनम् = बालकम्, अनीय=आनयनं कृत्वा, गुरवे=स्वकीय आचार्याय, निवेद्य=उक्त्वा, तन्निदेशेन=तस्य गुरोः निदेशेन आदेशेन, भवन्निकटम्=भवत्सकाशम्, आनीतवाम्=आनयनं कृतवान्, सर्वेषाम=समेषाम, सुहृदाम्=मित्राणाम्, एकदैव=युगपदेव, एकस्मिन्नेव समये इत्यर्थः, अनुकूलदैवाभावेन=भाग्यस्य प्रातिकूल्येनेत्यर्थः, महत्=भृशम् अधिकम्वा, आश्चर्यम्=विस्मयम् विभ्राणः = धारयन्, राजा=नृपोराजहंसः, रत्नोद्भवः=तन्नामकः, कथमभवत् = तस्य किं जातमिति भावः इति, चिन्तयन् = विचारयन्, तन्नन्दनम्=तत्पुत्रम्, पुष्पोद्भव नामधेयम्=पुष्पोद्भवः नामधेयं नाम यस्यतम्, विधाय=कृत्वा, तदुदन्तम्=तत्वृत्तान्तम्, व्याख्याय=विनिवेद्य सुश्रुताय = तज्ज्येष्ठभ्रात्रे, विषादसन्तोषौ = विषादश्च अवसादश्च सन्तोषश्च परितोषश्च तां, रत्नोद्भवस्य ज्ञानं विना विषादः परश्च तत्पुत्रलाभेन सन्तोष इति भावः, अनुभवन्=अनुभवं कुर्वन्, तदनुजतनयम्=तत्कनिष्ठ भातृपुत्रम्, समर्पितवान् दत्तवान् ।

टिप्पणी :—अभावि=भू सत्तायां धातु से कर्म में लुङ् लकार हुआ है। अवतार्य = अव+तॄ प्लवनतरणयोः धातु से णिजन्त के बाद ल्यप प्रत्यय हुआ। 'एनम्' बालक को संकेत करता है यह अन्वादेश का रूप है इदम् या एतत् शब्द से निष्पन्न होता है। जिसका किसी कार्य के लिए ग्रहण किया गया हो और उसी का अन्य कार्य के लिए पुनः ग्रहण करना अन्वादेश कहलाता है अर्थात् जिसके सम्बन्ध में पहले चर्चा की जा चुकी है पुनः अन्य किसी बात के लिये उसी को चर्चा करने का नाम अन्वादेश है (किञ्चित कार्यं विधातुमुपात्तस्य कार्यान्तरं विधातुं पुनरुपादानं अन्वादेशः) द्वितीया टौस्स्वेनः' सूत्र से एन आदेश होता है।

बिभ्राण.=डुभृञ् धारणपोषणयोः धातु से कर्ता में शानच् प्रत्यय। नामधेयः=''भागरूप नामभ्योधेयः' इससे धेय प्रत्यय। ''वार्ता प्रवृत्तिर्वृत्तान्तः उदन्तः स्यात्'' इत्यमरः।

अर्थपालोत्पत्तिकथा—

7 अन्येद्युः कंचन बालकमुरसि दधती वसुमती वल्लभमभिगता। तेन 'कुत्रत्योऽयम्' इति पृष्टा समभाषत-''राजन्! अतीतायां रात्रौ काचन दिव्यवनिता मत्पुरतः कुमारमेनं संस्थाप्य निद्रामुद्रितां मां विबोध्य विनीताब्रवीत्-'देवि! त्वन्मन्त्रिणो धर्मपालनन्दनस्य कामपालस्य वल्लभा यक्षकन्याहं तारावली नाम, नन्दिनी मणिभद्रस्य। यक्षेश्वरानुमत्या मदात्मजमेतं भवत्तनूजस्याम्भोनिधिवलयवेष्टितक्षोणीमण्डलेश्वरस्य भाविनोविशुद्ध यशोनिधे राजवाहनस्य परिचर्याकरणायानीतवत्यस्मि। त्वमेनं मनोजसन्निभमंभिवर्धय'' इति विस्मयविकसितनयना मया सविनयं सत्कृता स्वक्षी यक्षी साप्यदृश्यतामयासीत्'' इति।

हिन्दी अर्थ—दूसरे दिन किसी बालक को गोद में लिए हुए रानी वसुमती अपने प्रिय राजहंस के पास गयीं। राजा ने पूछा यह बालक कहाँ से मिला' इस प्रकार पूंछी जाती हुई रानी ने कहा-हे राजन्! गत रात्रि में किसी दिव्य स्त्री ने निद्रित मुझे जगाकर और इस बालक को मेरे सामने विनय पूर्वक बोली—'हे देवि! मैं मणिभद्र नामक यक्ष की कन्या हूँ और आपके मन्त्री धर्मपाल के पुत्र कामपाल की पत्नी हूँ और मेरा नाम तारावली है। यक्षराज की आज्ञा से ही मैं अपने पुत्र को आपके पुत्र राजवाहन की सेवा के लिए लायी हूँ जो राजवाहन समुद्र से युक्त पृथ्वी का कीर्तिशाली राजा होगा। अतः तुम कामदेव के तुल्य सुन्दर इस कुमार का पालन-पोषण' करो इस प्रकार आश्चर्य से युक्त नेत्रों वाली मैंने उसका स्वागत किया। इसके पश्चात् सुन्दर नेत्रों वाली वह यक्षकन्या भी अदृश्य हो गयी।

संस्कृतव्याख्या:—अन्येद्युः=अपरेद्युः, कञ्चन=अपरिचितम्, बालकम्=कुमारम्, उरसि=वक्षसि, दधती=धारयन्ती, वसुमती=राजहंस महिषी, वल्लभम्=दयितम्, अभिगता=अभियाता, प्राप्तेत्यर्थः, तेन=

राज्ञा, कुत्रत्योऽयम् = अयं पुत्र कुतः आसादित इतिभावः, इति = इत्थम्, पृष्टा = संपृष्टा सममाषत = अवदत्, राजन् = हे नृप, अतीतायाम् = गतायाम, रात्रौ = निशायां, काचन = अपरिचिता, दिव्य वनिता = दिवि स्वर्गे भवा दिव्या सा चासौ वनिता ललनेति दिव्यवनिता, मत्पुरतः = अस्माकं समक्षे, कुमारम् = बालकम्, संथाप्य = निधाय, निद्रामुद्रिताम् = निद्रया प्रमीलया मुद्रिता निमीलितातान्, निमीलितनेत्रामित्यर्थः, माम् = वसुमतीम्, विबोध्य = प्रबोध्य, विनीता = विनम्रा, अब्रवीत् = अकथयत्, देवि = राज्ञि, त्वन्मन्त्रिणः = भवदमात्यस्य, धर्मपालनन्दनस्य = धर्मपालपुत्रस्य, कामपालस्य = तन्नामकस्य, वल्लभा = प्रिया, पत्नीत्यर्थः, यक्षकन्या = यक्षपुत्री, तारावली = तन्नामिका, मणिभद्रस्य = तन्नामकस्य, नन्दिनी = पुत्री, यक्षेश्वरानुमत्या = यक्षेश्वरस्य कुबेरस्य अनुमत्या आज्ञया आत्मजम् = पुत्रम्, भवत्तनूजस्य = त्वत्पुत्रस्य, अम्भोनिधिवलयवेष्टित क्षोणीमण्डलेश्वरस्य = अम्भसां निधिः अम्भोनिधिः सागरः स एव वलय कटकः तेन वेष्टितम् परिवेष्टितं क्षोणीमण्डलं भूमण्डल तस्य ईश्वरः स्वामी तस्य, भाविनः = भविष्यतः, नाद्यापि भूतस्येत्यर्थः विशुद्ध यशोनिधेः = विशेषेण शुद्धस्य निर्मलस्य यशसः कीर्तेः निधिः आकरः तस्य, राजवाहनस्य = त्वत्पुत्रस्य, परिचर्याकरणाय = शुश्रूषा करणाय सेवार्थ इति भावः, आनीतवती = आनयनं कृतवतीविस्मयविकसित, नयना = विस्मयेन आश्चर्येण विकसितेप्रफुल्ले नयने नेत्रे यस्य सा, सविनयम् = सानुरागमिति भावः, सत्कृता = सम्मानिता, स्वक्षी = सु शोभने अक्षिणी नेत्रे यस्या सा, यक्षी = यक्षवंशोद्भवा यक्षकन्या, अदृश्यताम् = अलोचनविषयताम्, अयासीत् = गतेत्यर्थः।

टिप्पणी—अन्येद्युः = सद्यः परुत्परार्यैषमः—इत्यादि सूत्र के द्वारा निपातन से सिद्ध होता है। कुत्रत्यः = 'अव्ययात्त्यप्' इससे त्यप् प्रत्यय। भवत्तनूजस्य = तनुज और तनूज दोनो प्रयोग होते हैं। 'तनुजस्तनूजः' इति द्विरुपकोशः। यक्ष = कोश के अनुसार आठ प्रकार के देवों में एक देव योनि विशेष। "विद्याधराऽप्सरोयक्षरक्षोगन्धर्वकिन्नराः पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतोऽमी देवयोनयः" इसकी विभिन्न व्युत्पत्तियाँ विद्वानों के द्वारा प्रस्तुत की गयी हैं। सामान्य रूप से यह शब्द यक्ष् धातु से निष्पन्न है

यक्ष्यते पूज्यते इति यक्षः, कोई यज्धातु से भी सिद्ध करते हैं। इः कामोऽ-क्ष्णोर्यस्य स यक्षः अर्थात् जिसकी आँखों में काम का वास है। या इः कामः तस्य अक्षिणीव अक्षिणी यस्य स यक्षः अर्थात् कामदेव के तुल्य नेत्रों वाला। कुछ लोग जक्षन्ति खादन्ति शिशून् इति जक्षाः, जक्षाः एव यक्षाः इस प्रकार से भी मानते हैं। इन व्युत्पत्तियों में 'यक्ष पूजायाम्' धातु से निष्पन्न व्युत्पत्ति अधिक उचित प्रतीत होती है।

यक्षी = इस शब्द से यक्ष की पत्नी का भाव नहीं ग्रहण करना चाहिए क्योंकि कामपाल यक्ष नहीं था यक्षस्य स्त्री इस अर्थ में 'पुंयोगादाख्यायाम्, इस सूत्र से ङीष् नहीं हुआ है। किन्तु 'यक्षस्य गोत्रापत्यं स्त्री' इस अर्थ में ङीप् हुआ है।

74 कामपालस्य यक्षकन्यासंगमे विस्मयमानमानसोराजहंसो रञ्जि-तमित्रं सुमित्रं मन्त्रिणमाहूय तदीयभ्रातृपुत्रमर्थपालं विधाय तस्मै सर्वं वार्तादिकं व्याख्यायादात्।

सोमदत्तोत्पत्तिकथा—

75 ततः परस्मिन् दिवसे वामदेवान्तेवासी तदाश्रमवासी समारा-धितदेव कीर्तिः निर्भर्त्सितमारमूर्तिं कुसुम सुकुमारं कुमारमेकम-वगमय्य नरपतिमवादीत्-'देव ! तीर्थयात्राप्रसंगेन कावेरीतीरमाग-तोऽहं–विलोलालकं बालकं निजोत्संगतले निधाय रुदतीं स्थविरामेका विलोक्यावोचम्–'स्थविरे ! का त्वम्, अयमर्भकः कस्य नयनान-न्दकरः, कान्तारं किमर्थमागता, शोककारणं किम्' इति।

हिन्दी अर्थ—कामपाल का यक्ष कन्या के साथ संगम होने पर राजा राजहंस अत्यन्त विस्मित होकर मित्रों को प्रसन्न करने वाले सुमित्र नामक मन्त्री को बुलाकर और उसके भाई के पुत्र का नाम अर्थपाल रखकर, उसे सारा वृतान्त बता दिया।

इसके पश्चात् दूसरे दिन उसी आश्रम का निवासी, वामदेव का शिष्य, देवों के समान कीर्तिशाली, काम के समान सुन्दर फूल के समान सुकुमार एक कुमार को लाकर राजा से बोला 'हे राजन् ! तीर्थ यात्रा करते हुए कावेरी नदी के किनारे पर चञ्चल केश वाले बालक को अपनी गोद में रखकर रोती हुई एक वृद्धा को देखकर मैंने पूंछा–'हे वृद्धे ! तुम

कौन हो और यह बालक किसके नेत्रों को आनन्द देने वाला है अर्थात् किसका पुत्र है, और तुम जंगल में क्यों आयीं और तुम्हारे दुःख का क्या कारण है।"

संस्कृतव्याख्या :—कामपालस्य = तन्नामकस्य, यक्षकन्यसंगमे = यक्षस्य देवयोनिविशेषस्य कन्या पुत्री तया संगमः सम्पर्कः तस्मिन्, विस्मयमानमानसः = विस्मयमानं साश्चर्यं मानसं मनः यस्य सः, राजहंसः = तन्नामकः, रञ्जितमित्रम् = रञ्जितानि आराधितानि मित्राणि सुहृदः येन तम्, सुमित्रम् = तन्नामकम्, मन्त्रिणम् = अमात्यम्, आहूय = आकार्य तदीय भ्रातृपुत्रम् = तस्यबन्धुसूनुम्, अर्थपालम् = तन्नामकं विधाय, तस्मै मन्त्रिणे, वार्तादिकम् = सर्वं वृतान्तम्, व्याख्याय: = उक्त्वा, अदात् = दत्तवान्, ततः = तदनन्तरम्, परस्मिन् = अपरस्मिन्, दिवसे = दिने, वामदेवस्य = तन्नामकस्य महर्षेः, अन्तेवासी = अन्ते समीपे वसतीति अन्ते वासी शिष्य इत्यर्थः, तदाश्रमवासी = तत्कुटीरवास्तव्यः, समाराधित देव कीर्तिम् = समाराधिता संसेविता लब्धेत्यर्थः देवानां सुराणां कीर्तिः यशः येन तम्, निर्भर्त्सितमारमूर्तिम् = निर्भर्त्सिता तिरस्कृता (सौन्दर्येण) अधरीकृतावा मारस्य कामदेवस्य मूर्तिः स्वरूपम् येन तम्, कुसुमसुकुमारम् = कुसुममिव पुष्पमिव सुकुमारं सुकोमलं, कुमारम् = बालकम्, अवगमय्य = प्रापय्य, नरपतिम् = राजानम्, अवादीत = अवोचत्, देव = हे राजन् ! तीर्थयात्राप्रसंगेन = तीर्थपर्यटन क्रमेण, कावेरीतीरम् = तन्नामिकानदीतटम्, आगतः = समागतः समायातः वा, विलोलालकम् = विलोलाः चञ्चलाः अलकाः केशाः यस्यतम्, बालकम् = कुमारम्, निजोत्संगतले = स्वकीयक्रोडे, निधाय = संस्थाप्य, रुदतीम्, = विलपन्तीम्, स्थविराम् = वृद्धाम्, विलोक्य = दृष्ट्वा, अवोचम् = अवदम्, अपृच्छमित्यर्थः, स्थविरे = भो वृद्ध ! का, त्वम् = भवती, अयम् = पुरोवर्तमानः, अर्भकः = बालकः, कस्य, नयनानन्दकाः = नयनयो नेत्रयोः आनन्दकरः आनन्ददायीत्यर्थः, कान्तारम् = महावनम्, किमर्थम् = किम्प्रयोजनम् आगता = समायाता, किम् = इति प्रश्ने, शोककारणम् = दुःखनिमित्तम् ।

टिप्पणी—अन्तेवासी = "शयवासवासिष्वकालात्' इससे अलुक् हो जाता है। "छात्रान्तेवासिनौ शिष्ये" इत्यमरः। भ्रातृपुत्रम् = यहाँ पर

'ऋतो विद्या योनि सम्बन्धेभ्यः" सूत्र से अलुक् हो जाने के कारण 'भ्रातुष्पुत्रः ही उचित है। नकि समस्त "भ्रातृपुत्रम्"

"कान्तारं वर्त्मदुर्गमम्' इत्यमरः।

76 सा करयुगन बाष्पजलमुन्मृज्यनिजशोक शङ्कूत्पाटनक्षममिव मामवलोक्य शोकहेतुमवोचत्—"द्विजात्मज! राजहंसमन्त्रिणः सितवर्मणः कनीयानात्मजः सत्यवर्मा तीर्थयात्रामिषेण देशमेनमागच्छत्। स कस्मिंश्चिदग्रहारे कालीं नाम कस्यचिद् भूसुरस्य नन्दिनीं विवाह्य तस्या अनपत्यतया गौरींनाम तद्भगिनीं काञ्चनकान्ति परिणीय तस्यामेकं तनयमलभत। काली सासूयमेकदा धात्र्या मया सह बालमेनमेकेन मिषेणानीय तटिन्यामेतस्यामक्षिपत्। करेणैकेन बालमुद्धृत्यापरेण प्लवमाना नदीवेगागतस्य कस्यचित् तरोः शाखामवलम्ब्य तत्र शिशुं निधाय नदीवेगेनोह्यमाना केनचित्तरुलग्नेन कालभोगिनाहमदंशि। मदवलम्बीभूतो भूरुहोऽयमस्मिन् देशे तीरमगमत्। गरलस्योद् दीपनतया मयि मृतायामरण्ये कश्चनशरण्यो नास्तीति मया शोच्यते" इति।

हिन्दी अर्थ :—(मेरे पूंछने पर) उस वृद्धा ने दोनों हाथों से आंसू पोंछकर के और आपने शोक रूपी कंटक को निकालने में समर्थ मुझे समझकरके अपने शोक के कारण को बताया।—ब्राह्मण। राजहंस के मन्त्री सितवर्मा का छोटा लड़का सत्यवर्मा तीर्थाटन करने हुए इस देश में आया। उसने किसी ग्राम में कालीनामक एक ब्राह्मण कन्या से शादी की, किन्तु उसके सन्तान न होने के कारण, स्वर्ण के समान कान्ति वाली उसकी छोटी बहन गौरी नाम वाली से शादी करके उससे एक पुत्र प्राप्त किया। एक बार काली ईर्ष्यावशात् मुझ धात्री के सहित किसी बहाने से इस बालक को लाकर (हम दोनों को) इस नदी में फेंक दिया। मैं एक हाथ से बालक को पकड़े हुए और दूसरे हाथ से तैरती हुई नदी वेग के कारण आये हुए किसी वृक्ष की शाखा का सहारा पाकर, उसपर बालक को रख कर और नदीवेग से बहती हुई, उसी वृक्ष में चिपके हुए सांप ने मुझे काट लिया। मेरा आश्रयभूत यह वृक्ष इस देश में यहां किनारे पर आ

लगा। विष के प्रभाव के कारण मेरे मर जाने पर इस जंगल में इसका कोई रक्षक नहीं है इसीलिए रो रही हूँ।

संस्कृतव्याख्या :—सा=वृद्धा, करयुगेन=करयोः हस्तयोः युगेन युगलेन, बाष्पजलम्=अश्रुसलिलम्, उन्मृज्य=अपनीय, निजशोकशङ्कूत्पाटनक्षममिव=निजस्य स्वकीयस्य शोकः क्लेशः एव शंकुः शल्यं तस्य उत्पाटने उद्धरणे क्षमं समर्थं माम्=शिष्यम्, अवलोक्य=दृष्ट्वा, शोकहेतुम् = दुःखकारणम्, अवोचत् = अवदत्, द्विजात्मज=हे विप्रसुत !, राजहंसमन्त्रिणः = राजहंसामात्यस्य, सितवर्मणः=तन्नामकस्य, कनीयान =कनिष्ठः, आत्मजः= पुत्रः, सत्यवर्मा=तन्नामकः, तीर्थयात्रामिषेणतीर्थपर्यटनव्याजेन, देशम्=प्रदेशम्, आगच्छत्=आगमनं अकरोत् समायात इत्यर्थः, सः=सत्यवर्मा, कस्मिश्चित्=अज्ञाते अग्रहारे=ग्रामे, कालींनाम =तन्नामिकाम् कस्यचिद्=अज्ञातस्य, भूसुरस्य=ब्राह्मणस्य, नन्दिनीम् =पुत्रीम्, विवाह्य=परिणीय, तस्या=भार्यायाः अनपत्यतया=सन्तानाभावतया, गौरीं नाम=तन्नामिकाम्, तद् भगिनीम्=तत् स्वसारम्, काञ्चनकान्तिम्=काञ्चनस्य स्वर्णस्येव कान्तिः प्रभायस्याः सा ताम् परिणीय=विवाह्य, तस्याम्=गौर्याम्, एकंतनयम्=एकंपुत्रम्, अलभत =लब्धवान्। काली=तन्नामिका गौरी भगिनी, सासूयम् = सेर्ष्यम्, एकदा=एकस्मिन् दिने, धात्र्या=उपमात्रा, मयासह=वृद्धया साकम्, बालक्=कुमारम् मिषेण=व्याजेन, आनीय=आनयनं कृत्वा, तटिन्याम् =नद्याम्, एतस्याम्=पुरोवर्तमानायाम् अक्षिपत्=प्रक्षिप्तवती, करेण= हस्तेन, बालम्=बालकम् उद्धृत्य=धारयित्वा, अपरेण=द्वितीयेनप्लवमाना = तरन्ती, नदीवेगागतस्य नद्याः सरितः वेगेन जवेन आगतस्य समागतस्य, कस्यचित्= अज्ञातस्य, तरोः वृक्षस्य, शाखाम्=प्रशाखाम्, अवलम्ब्य=गृहीत्वा, तत्र: वृक्षे, शिशुम्=बालम् निधाय: संस्थाप्य, नदीवेगेन = सरिज्जवेन उह्यमाना=नीयमाना, केनचित्, तरुलग्नेन= विटपारूढेन, कालभोगिना=सर्पेण, अहम्=वृद्धा, अदर्शि=दष्टा, मदवलम्बीभूतः=मदाश्रयीभूतः, भूरुहः=वृक्षः, अस्मिन्=एतस्मिन्, देशे= प्रदेशे, तीरम्=प्रतीरम्, अगमत्=प्रापत्, गरलस्य=विषस्य, उद्दीपनतया=प्रबलतरतया, उत्कटतयेत्यर्थः, मयि=वृद्धायाम्, मृतायाम्=मृत्यु-

मपगतायां सत्याम्, अरण्ये = वने, शरण्यः = रक्षकः, न = नहि, अस्ति = वर्तते, इति = इतिनिमित्तेन, मया = वृद्धया, शोच्यते = रुद्यते।

टिप्पणी—अग्रहार=ब्राह्मणको राजा द्वारा प्रदत्त ग्राम, या भूमि आदि अग्रं ब्राह्मणभोजनं तदर्थं ह्रियन्ते राजधानात् पृथक् क्रियन्ते क्षेत्रादयः कनीयान् = "युवाल्पयोः कनन्यतरस्याम्" सू० से कन् प्रत्यय। प्लवमाना = प्लव + शानच् + टाप्। अदंशि = दशि दंशने से कर्म में लुङ् लकार।

77 ततो विषमविष ज्वालावलीढावयवा, सा धरणीतलेऽन्यपतत्। दयाविष्टहृदयोऽहं मन्त्रबलेन विषव्यथामपनेतुमक्षमः समीपकुञ्जेष्वोषधिविशेषमन्विष्य प्रत्यागतो व्युत्क्रान्त जीवितां तां व्यलोकयम्। 78 तदनु तस्याः पावकसंस्कारं विरच्य शोकाकुलचेता बालमेनमगतिमादाय सत्यवर्मवृतान्तवेलायां तन्निवासाग्रहारनामधेयस्याश्रुततया तदन्वेषणमशक्यमित्यालोच्य भवदमात्यतनयस्य भवानेवाभिरक्षितेति भवन्तमेनमनयम इति 79 तन्निशम्य सत्यवर्म स्थितेः सम्यगनिश्चिततया खिन्न मानसो नरपतिः सुमतये मन्त्रिणे सोमदत्तं नाम तदनुजतनयमर्पितवान्। सोऽपि सोदरमागतमिव मन्यमानः विशेषेण पुपोष।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् भयंकर विष की ज्वाला से व्याप्त अवयवों वाली वह वृद्धा पृथिवी पर गिर पड़ी। दया द्रवित होता हुआ मैं उसकी पीड़ा को मन्त्रवल से दूर करने में असमर्थ होता हुआ, अतः समीपस्थ झाड़ियों में औषधिविशेष को ढूढ़ कर लौटा, तो उसे मरा हुआ देखा।

इसके पश्चात् उसका दाहसंस्कार करके शोकाकुल चित्त वाला मैं इस असहाय वालक को लेकर, सत्यवर्मा के वृत्तान्त के समय उसके निवास स्थान ग्रामादि का नाम न सुनने के कारण अतः उसे ढूढ़ने में असमर्थ जान कर, अपने मन्त्री के पुत्र के आप ही रक्षक हैं यह सोंचकर आपके पास लाया हूँ।

यह सब सुनकर तथा सत्यवर्मा की अनिश्चितता से खिन्न चित्त वाले राजा राजहंस ने सुमति नामक मन्त्री को उसका सोमदत्त नाम रखकर, उसके भाई के पुत्र को उसे (सुमति को) सौंप दिया। वह भी (सुमति) अपने भाई के आगमन की तरह मान करके विशेषरूप से उसका पालन-पोषण करने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—ततः = तदनन्तरम्, विषमविषज्वालावलीढावयवा = विषम दुर्धरं विषं गरलं तस्य ज्वालाभिः शिखाभिः अवलीढा। व्याप्ताः अवयवाः अङ्गानि यस्याः सा, सा = वृद्धा, धरणीतले = पृथिवीतले, न्यपतत् = अपतत्, पपात वा, दयाविष्टहृदयः = दयया करुणया आविष्टं व्याप्तं आक्रान्तं वा हृदयं चेतः यस्य सः, अहं, मन्त्रबलेन = मन्त्र प्रभावेण, विषव्यथाम् = विषपीडाम्, अपनेतुम् = दूरीकर्तुम्, अक्षमः = असमर्थः समीपकुञ्जेषु = निकटस्थ लतागृहेषु, ओषधिम् = औषधम्, अन्विष्य = अन्वेषणं कृत्वा, प्रत्यागतः = पुनः समायातः, व्युत्क्रान्त जीविताम् = व्युत्क्रान्तं उद्गतं जीवितं जीवनं यस्याः सा तां मृतामित्यर्थः, ताम् = वृद्धाम्, व्यलोकयम् = अवलोकयम्, तदनु = तदनन्तरम्, तस्याः = वृद्धायाः, पावक संस्कारम् = अग्निसंस्कारम् दाहसंस्कारमित्यर्थः, विरच्य = कृत्वा, शोकाकुल चेता = शोकेन दुःखेन आकुलं समाकुलं चेतः मनः यस्य स ।

एनम् = पुरोवर्तमानम्, बालकम् = बालम्, अगतिम् = अशरण्यम् अनाथं वा, आदाय = गृहीत्वा, सत्यवर्मवृतान्त वेलायाम् = सत्यवर्मणः तन्नामकस्य वृत्तान्तस्य उदन्तस्य वेलायाम् श्रवणकाले, तन्निवासाग्रहारनामधेयस्य = तस्य सत्यवर्मणः निवासाग्रहारस्य = निवासभूतस्य ग्रामस्य यन्नामधेयं नाम तस्य, अश्रुततया = अश्रवणेन, तदन्वेषणम् = तद्गवेषणम्, अशक्यम् = असम्भवम्, इति, आलोच्य = अवलोक्य, विचार्येत्यर्थः भवदमात्यतनयस्य = त्वमन्त्रिपुत्रस्य, भवानेव = त्वमेव, अभिरक्षिता = रक्षकः, इति इत्थम्, भवन्तम् = त्वाम्, अनयम् = नीतवानस्मि । तन्निशम्य = तच्छ्रुत्वा, सत्यवर्मस्थितेः = सत्यवर्मणः स्थितेः अवस्थानस्य सम्यक् = सुष्ठु, अनिश्चिततया = सन्दिग्धतया खिन्नमानसः = खिन्नं व्याकुलं मानसम् मनः यस्य सः, नरपति = नृपतिः, सुमतये = तन्नामकाय मन्त्रिणे = अमात्याय, सोमदत्तं नाम = तन्नाम कृत्वेत्यर्थं, तदनुजतनयम् = तदनुजपुत्रम्, अर्पितवान् = समर्पितवान्, सोऽपि = सुमतिरपि, सोदरम् = भ्रातरम्, आगतमिव = समागतमिव, मन्यमानः = स्वीक्रियमाणः, विशेषेण = वैशिष्ट्येन, पुपोष = वर्द्धयामास ।

टिप्पणी—अनयम् = णीञ् प्रापणे लङ् लकार का रूप, कुञ्जेषु = निकुञ्जकुञ्जौ वा क्लीबे लतादिपिहितोदरे" इत्यमरः । सुमतये = 'कर्मणा

यमभिप्रैति स सम्प्रदानम्' सूत्र से सम्प्रदान संज्ञा, 'चतुर्थी सम्प्रदाने' से चतुर्थी विभक्ति। अगति = अनाथ या असहाय, अभिरक्षिता = अभि + रक्ष धातु से कर्ता के अर्थ में ण्वुल्तृचौ" सूत्र से तृच् प्रत्यय।

80 एवं मिलितेन कुमारमण्डलेन सह बालकेलीरनुभवन्नधिरूढानेकवाहनो राजवाहनोऽनुक्रमेण चौलोपनयनादि संस्कार जातमलभत। ततः सकललिपिज्ञानं निखिलदेशीयभाषा पाण्डित्यं षडंग सहितवेदसमुदायकोविदत्वं काव्यनाटकाख्यानकाख्यायिकेतिहासचित्रकथासहितपुराणगणनैपुण्यं धर्म शब्द ज्योतिस्तर्कमीमांसादि समस्त शास्त्र निकरचातुर्यं कौटिल्यकामन्दकीयादिनीति पटलकौशलं वीणाद्यशेषवाद्यदाक्ष्यंसंगीत साहित्यहारित्वं मणि मन्त्रौषधादिमायाप्रपञ्चचुञ्चुत्वं मातङ्गतुरङ्गादि वाहनारोहणपाटवं विविधायुधप्रयोगचणत्वं चौर्यदुरोदरादिकपटकलाप्रौढत्वं च तत्तदाचार्येभ्यः सम्यग्लब्ध्वा यौवनेन विलसन्तं कृत्येष्वनलसतं कुमारनिकरं निरीक्ष्य महीवल्लभः सः "अहं शत्रुजनदुर्लभः" इति परमानन्दममन्दमविन्दत।

हिन्दी अर्थ - इस प्रकार मिले हुए कुमार समुदाय के साथ बालक्रीडा करता हुआ तथा अनेक सवारियों पर आरोहण करते हुए राजवाहन ने क्रमशः चौल एवं उपनयनादि को प्राप्त किया अर्थात् उसके ये संस्कार किये गये। इसके पश्चात् सम्पूर्ण लिपियों का ज्ञान, सम्पूर्ण देशों की भाषाओं का पाण्डित्य, छः अङ्गों सहित वेद समुदाय का चातुर्य, काव्य, नाटक आख्यान, आख्यायिका इतिहास चित्रकथा सहित पुराणों की निपुणता धर्मशास्त्र शब्दशास्त्र (व्याकरण) ज्योतिः शास्त्र न्याय (तर्कशा०) मीमांसादि समस्त शास्त्रों की चतुरता कौटिल्य (चाणक्य) कामन्दकीय आदि नीति शास्त्रों की कुशलता वीणा आदि सम्पूर्ण वाद्यों में दक्षता संगीत और साहित्य की रमणीयता मणि-मन्त्र-औषधादि माया प्रपञ्चों में चातुर्य हाथी और घोड़ों पर चढ़ने की पटुता विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्र आदि चलाने में विज्ञता चोरी, जुआ आदि कपटपूर्ण कलाओं में पटुता तत् तत् विशिष्ट गुरुओं से प्राप्त करके युवावस्था से शोभित कार्यों में उद्योगी कुमार समूह को देखकर महाराज हंसवाहन अपने को शत्रुजनों से अजेय समझकर अत्यन्त आनन्द प्राप्त करने लगा।

संस्कृतव्याख्या:—एवम् = इत्थम् मिलितेन = सम्मिलितेन कुमार मण्डलेन = कुमार समुदायेन सह = साकम् बालकेली: = बालक्रीडा अनुभवन् = अनुभवंकुर्वन् अधिरूढानेकवाहन: = अधिरूढानि समारूढानि अनेकानि विभिन्नानि वाहनानि अश्वादीनि येन स:, राजवाहन: = तन्नामक: अनुक्रमेण = यथाक्रमम् चौलोपनयनादि संस्कार जातम् = चौलंच-चूड़ाकर्म च उपनयनञ्च यज्ञोपवीतञ्चेति चौलोपनयने एते आदी यस्यतत् संस्कार जातम् संस्कारसमूहम् अलभत = प्राप्तवान् तत: = तदनन्तरम् सकललिपिज्ञानम् = सम्पूर्णाक्षर संस्थानपरिचयम् निखिलदेशीयभाषा पाण्डित्यं = अखिलदेशीयभाषा वैदुष्यम् षडङ्गसहितवेदसमुदाय कोविद-त्वम् = षडङ्गसहितस्य शिक्षा व्याकरणादि युक्तस्य वेदसमुदायस्य ऋक् सामादि सहितस्य कोविदत्वं ज्ञातृत्वं चातुर्यं वा, काव्यनाटकाख्यानका ख्यायिकेतिहासचित्रकथासहित पुराणनैपुण्यम् = काव्यानि रामायणरघुवं-शादीनि नाटकानि शाकुन्तलादीनि रूपकाणि आख्यानकानि चूर्णकानि आख्यायिका: कादम्बरीहर्षचरितादय: इतिहास: पुरावृत्तकथनम्। चित्रकथा: = रमणीयकथा:, एतै: सहिते पुराणगणे अग्न्यादि पुराण समुदाये अष्टादश पुराणे इत्यर्थ. नैपुण्यं पटुत्वम् धर्मशब्द ज्योतिस्तर्क-मीमांसादिसमस्त शास्त्रनिकरचातुर्यम् = धर्मशास्त्रं स्मृतय: शब्द शास्त्रं व्याकरणं ज्योति:शास्त्रं शुभाशुभज्ञापकशास्त्रं तर्कशास्त्रं न्याय: मीमांसाशास्त्रं पूर्वोत्तरभेदेन द्विविधं जैमिनीयदर्शनं वेदान्तदर्श-नञ्चेत्यादिषु शास्त्रनिकरेषु शास्त्रसमूहेषु चातुर्यं कौशलं कौटिल्य कामन्दकीयादिनीतिपटलकौशलम् = कौटिल्य: चाणक्य: तेन प्रणीतं कौटिल्यं कामन्दक रचितं कामन्दकीयं आदिपदेन शुक्रनीत्यादिसंग्रह:, इत्यादीनि नीतिपटलानि नीतिशास्त्रवृन्दानि तेषु कौशलं नैपुण्यं वीणाद्यशेषवाद्य-दाक्ष्यम् = वीणादिषु वीणावेणुप्रभृतिषु अशेषेषु सम्पूर्णेषु वाद्येषु संगीतशास्त्रा-पकरणेषु दाक्ष्यं पारङ्गतत्वं संगीतसाहित्य हारित्वम् = संगीतसाहित्येषु नृत्यगीतादिकलासु हारित्वं मनोहारित्वं, मणिमन्त्रौषधादि माया प्रपञ्च-चुञ्चुत्वम् = मणिमन्त्रौषधादिभि: यो माया प्रपञ्च कपटप्रबन्ध: तेन चुञ्चु-त्वं कौशलं, मातङ्गतुरङ्गादि वाहनारोहणपाटवम् = मातङ्गतुरङ्गादिषु हस्त्यश्वादिषु वाहनेषु यात्रा साधकेषु आरोहण पाटवं समारोहण चातुर्यम्,

विविधायुध प्रयोगचणत्वम्=विविधानां विभिन्नां आयुधानां अस्त्राणां प्रयोगेण चणत्वं कुशलत्वं, चौर्यदुरोदरादि कपटकलाप्रौढत्वम् = चौर्यं स्तेयं दुरोदरं द्यूतं तदादि कपटकलासु छलछद्मादिकलासु प्रौढत्वं प्रवीणत्वं, तत्तदाचार्येभ्यः = तत्तच्छास्त्रगुरुभ्यः, सम्यक्=सुष्ठु, लब्ध्वा = प्राप्य, यौवनेन=युवावस्थया, तारुण्येन वा, विलसन्तम्=शोभमानम्, कुमार निकरम्=कुमार समुदायम्, निरीक्ष्य = दृष्ट्वा, महीवल्लभः=नृपः, कृत्येषु=कार्येषु, अनलसं=उद्यमशीलं (कुमारनिकरं दृष्ट्वा), अहम्= राजहंसः, शत्रुजनदुर्लभः=शत्रु जनेन दुर्लभः इति शत्रु जनदुर्लभः अपरा-जेय इति भावः, अविन्दत=अलभत।

टिप्पणी—चौल=एक संस्कारविशेष जिसमे केशकर्तन किया जाता है यह संस्कार बालक का तीसरे वर्ष होता है। "तृतीये वर्षे चौलं यथाकुल धर्मं वा" इति सूत्रम्। उपनयन=इसे यज्ञोपवीत संस्कार कहते हैं। मनु के अनुसार ब्राह्मण का आठवें वर्ष, क्षत्रिय का ग्यारहवें वर्ष तथा वैश्य का बारहवें वर्ष में यह संस्कार होना चाहिए।

षडङ्ग—शिक्षा कल्पो व्याकरणं निरुक्तं ज्योतिषां गणः।
छन्दसां विचितिश्चैव षडङ्गो वेद उच्यते।

पुराण = १८ पु० एवं १८ उपपुराण माने गये हैं। चुञ्चुत्वं, चणत्वम् = "तेन वित्तश्चञ्चुप् चणपौ" इस सूत्र से चञ्चुप और चणप् प्रत्यय होते हैं। कौटिल्य = महाराज चन्द्रगुप्त मौर्य के मन्त्री का नाम जो चाणक्य के नाम से विख्यात है इनका मूल नाम विष्णुगुप्त था। इनका "अर्थशास्त्र" ग्रन्थ प्रसिद्ध है।

॥ प्रथम उच्छ्वास समाप्त ॥

द्वितीय उच्छ्वासः

वामदेवस्य सम्मति :—

अथैकदा वामदेवः सकलकलाकुशलेन कुसुमसायकसंशयितसौन्दर्येण कल्पितसोदर्येण साहसापहसितकुमारेण सुकुमारेण जयध्वजातपवारणकुलिशाङ्कितकरेण कुमारनिकरेण परिवेष्टितं राजानमानतशिरसं समभिगम्य तेन तां कृतां परिचर्यामङ्गीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षं विदलिष्यमाणविपक्षं कुमारचयं गाढमालिङ्ग्य मितसत्यवाक्येन विहिताशीरभ्यभाषत—"भूवल्लभ, भवदीयमनोरथफलमिव समृद्धलावण्यं तारुण्यं नुतमित्रो भवत्पुत्रोऽनुभवति। सहचरसमेतस्य नूनमेतस्य दिग्विजयारम्भसमय एषः। तदस्य सकलक्लेश सहस्यराजवाहनस्य दिग्विजयप्रयाणं क्रियताम्' इति।

शब्दार्थ :- कुसुमसायक=कामदेव। सोदर्य = भ्रातृत्व (समानम् एकम् उदरं यस्य सः सोदरः(सगा भाई)तस्य भाव=सोदर्यम्। आतपवारण=छाता। कुलिश=वज्र। निकर=समूह। परिचर्या=सेवा, पूजा। चय=समूह।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् एकबार वामदेव मुनि, सम्पूर्ण कलाओं में चतुर, सौन्दर्य से कामदेव का सन्देह उत्पन्न करनेवाले, साहस में कार्तिकेय का उपहास करने वाले, सुकुमार, जिनके हाथों से जयध्वज, छत्र और वज्र के चिह्न हैं इस प्रकार के कुमार-समुदाय से घिरे हुए नतमस्तक राजा के पास जाकर उनके (राजा) के द्वारा सेवा को ग्रहण करके, अपने (मुनि के) चरणकमलों में प्रणाम में तत्पर, अतः जिनके काकपक्ष भ्रमरों की शोभा धारण करते थे तथा जो भविष्य में शत्रुओं का दमन करने वाले थे इस प्रकार के कुमार-समुदाय को भलीभाँति से आलिङ्गन करके परिमित तथा सत्य वचनों से आशीर्वाद देकर बोले—

"हे राजन्। प्रशंसित मित्रों वाला आपके मनोरथों के फल के तुल्य समृद्ध सौन्दर्य वाला आपका पुत्र राजवाहन युवावस्था का अनुभव करता है। अर्थात् जवान हो गया है सभी सहचरों से युक्त इसके (राजवाहन) दिग्विजय का यही समय है। अतः आप सम्पूर्ण क्लेशों को सहन करने में समर्थ राजवाहन का दिग्विजय प्रयाण करें।

संस्कृतव्याख्या :—अथ = तदनन्तरम्, एकदा = एकस्मिन् दिने, वामदेवः = तन्नामकः मुनिः, सकलकलाकुशलेन = सकलासु समग्रासु कलासु नृत्यगीतादिचतुष्षष्ठिकलासु कुशलः चतुरः तेन, कुसुमसायकसंशयित सौन्दर्येण = कुसुमसायकः कामः संशयितः संशयंप्रापितः यस्मात् तथाभूतं सौन्दर्यं लावण्यं यस्यतेन, कल्पितसोदर्येण = कल्पितं रचितं सोदर्यं बन्धुत्वं येन तेन, साहसापहसितकुमारेण = साहसेन शौर्येण अपहसितः तिरस्कृतः कुमारः षडाननः येन तेन, सुकुमारेण = कोमलेन, जयध्वजातपवारण कुलिशाङ्कितकरेण = जयध्वजः विजयध्वजः आतपवारणं छत्रं कुलिशं वज्रं एतैः अङ्कितौ चिह्नितौ करौ हस्तौ यस्य तेन, कुमारनिकरेण = कुमार समुदायेन, परिवेष्टितं = परिवृतम्, राजानम् = नृपम्, आनतशिरसम् आनतं शिरः यस्य तम्, कृतप्रणाममित्यर्थः, समभिगम्य = उपगम्य, तेन = राज्ञा कृताम् = विहिताम्, परिचर्याम् = सेवाम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य निजचरणकमलयुगलमिलन्मधुकरायमाणकाकपक्षम् = निजौ (वामदेवस्य इत्यर्थः) चरणौ पादौ तावेव कमले पद्मे तयोर्युगलं तस्मिन् मिलन्तः समापतन्तः भ्रमरः द्विरेफाः इव आचरन्तः काकपक्षाः शिखण्डकाः यस्य तम्, विदलिष्यमाणविपक्षम् = विदलिष्यमाणाः उद्धरिष्यमाणाः विपक्षाः शत्रवः येन तम्, कुमारचयम् = कुमारसमुदायम्, गाढम् = निर्भरम्, आलिङ्ग्य = आलिङ्गनं कृत्वा, मित सत्यवाक्येन = मितञ्च स्वल्पञ्च सत्यंचअवितथञ्च यद्वाक्यं वचनं तेन विहिताशीः = विहिता प्रदत्ताः आशीः आशीर्वादः येन सः (एतन्मुनिविशेषणम्) अभ्यमाषत् = अवदत् । भूवल्लभ = भुवः पृथिव्याः वल्लभः प्रियः यः तत्सम्बुद्धौ भवदीय मनोरथफलमिव = भवदीयानां त्वदीयानां भावत्कानां वा मनोरथानां मनोऽभिलाषाणां फलमिव, समृद्ध लावण्यम् = समृद्धं परिपूर्णं लावण्यं सौन्दर्यं यस्मिन् तत्, तारुण्यम् = यौवनम्, नुतमित्रः = नुतानि प्रशंसितानि मित्राणि यस्य सः, भवत्पुत्रः = भवदात्मजः, अनुभवति = अनुभवं करोति । सहचरसमेतस्य = समित्रस्येत्यर्थः, नूनम् = निश्चयेन, एतस्य = राजवाहनस्य, दिग्विजयारम्भसंभवः दिशां दिक्चक्रवालानां विजयः पराभवः तस्य आरम्भः प्रारम्भः उद्योगो वा तस्य समयः कालः, अस्य = राजवाहनस्य सकलक्लेश सहस्य = सम्पूर्ण दुःख सहिष्णोः, राजवाहनस्य = त्वत्पुत्रस्य, दिग्विजयप्रयाणम् = दिग्विजयप्रस्थानं, क्रियताम् = विधीयताम् ।

टिप्पणी—अंकुशे कुलिशं छत्रं यस्य पाणितले भवेत् ।
तस्यैश्वर्यं विनिर्दिष्टं अशीत्यायुर्भवेद्ध्रुवम् ॥
धनुर्यस्य भवेत् पाणौ पंकजंवाथ तोरणम् ।
तस्यैश्वर्यं च राज्यं च अशीत्यायुर्भवेदध्रुवम् ॥

(सामुद्रिकशास्त्र)

चरणकमल=रूपक अलंकार है ।

समभिगम्य=सम्+अभि+गम्+ल्यप् । नुत=स्तुत 'णु'स्तुतौ+क्त ।

कुमाराणां दिग्विजययात्रा—

कुमारा माराभिरामा रामाद्यपौरुषा रुषा भस्मीकृतारयो रयोपहसितसमीरणा रणाभियानेन यानेनाभ्युदयाशंसं राजानमकार्षुः । तत्साचिव्यमितरेषां विधाय समुचितां बुद्धिमुपदिश्य शुभे मुहूर्ते सपरिवारं कुमारं विजयाय विससर्ज ।

मातङ्गस्य साक्षात्कार :—

राजवाहनो मंगलसूचकं शुभशकुनं विलोकयन् देशं कंचिदतिक्रम्य विन्ध्याटवीमध्यमविशत् । तत्र हेतिहतिकिणाङ्कं कालायसकर्कशकायं यज्ञोपवीतेनानुमेयविप्रभावं व्यक्तकिरातप्रभावं लोचनपरुषं कमपि पुरुषं ददर्श ।

मातङ्गं प्रति राजवाहनस्य प्रश्न :—

तेन विहितपूजनो राजवाहनोऽभाषत 'ननु मानव, जनसंगरहिते मृगहिते घोरप्रचारे कान्तारे विन्ध्याटवीमध्ये भवानेकाकी किमिति निवसति । भवदंसोपनीतं यज्ञोपवीतं भूसुरभावं द्योतयति । हेतिहतिभिः किरातरीतिरनुमीयते । कथय किमेतत्' इति ।

शब्दार्थ :—माराभिरामाः = कामदेव (मार) के समान सुन्दर (अभिराम) । रय=वेग । साचिव्यं=मित्रत्व,सहायक । हेतिहतिकिणाङ्कं = हथियारों (हेति) के प्रहारों (हति) के चिह्नों (किण) से युक्त कालायस= काला लोहा । कान्तार=वन । अंसोपनीतं=कन्धे (अंस) पर धारण किया हुआ । भूसुरभावं = ब्राह्मणत्व । किरातरीतिः = भीलों का सा आचरण ।

हिन्दी अनुवाद :—कामदेव के समान सुन्दर, भगवान् रामचन्द्र के समान पौरुष वाले एवं क्रोध से शत्रुओं को नष्ट कर देने वाले वेग में वायु का उपहास करने वाले राजकुमारों ने अपनी रणयात्रा से राजा को अभ्युदय युक्त कर दिया। अर्थात् राजहंस उनकी इस यात्रा से रणविजय में आश्वस्त हो गया। राजहंस ने दूसरे राजकुमारों को उसका (राजवाहन) का सहयोगी बनाकर उचित उपदेश देकर, शुभ मुहूर्त में परजिनों सहित राजवाहन को विजय के लिये विदा किया।

राजवाहन मंगलसूचक शुभ शकुनों को देखता हुआ कुछ मार्ग तय करके विन्ध्याटवी में प्रविष्ट हुआ। वहाँ पर उसने किसी पुरुष को देखा, जो अस्त्रों के घावों से युक्त, काले लोहे के तुल्य कठोर शरीर वाला, यज्ञोपवीत से ब्राह्मण प्रतीत होने वाला, किरात के प्रभाव वाला था, तथा जिसके नेत्र कठोर थे। उस पुरुष के द्वारा सत्कार प्राप्त करके राजवाहन बोला "हे पुरुष ! आप इस निर्जन तथा पशुओं के लिए उपयोगी, भयंकर मार्गवाली विन्ध्याटवी के मध्य में अकेले क्यों रहते हैं ? आपके कन्धों पर पड़ा हुआ यज्ञोपवीत आपके ब्राह्मणत्व को व्यक्त करता है किन्तु अस्त्रों के आघात चिन्हों से आप किरात प्रतीत होते हैं। बतायें, इसका क्या कारण है ?

संस्कृतव्याख्या :—कुमाराः = राजकुमाराः, माराभिरामाः = मारः इव काम इव अभिरामाः सुन्दराः मनोहराः वा, रामाद्यपौरुषाः = रामः रामचन्द्रः आद्यः येषां तेषां पौरुषमिव पौरुषं पराक्रमः येषां ते, रुषा = क्रोधेन, भस्मीकृतारयः = भस्मीकृताः विनाशिताः अरयः अरातयः यैस्ते, रयोपहसित समीरणाः = रयेन वेगेन उपहसितः न्यक्कृतः समीरणः वायुः यैस्ते, रणाभियानेन = युद्धाभियानेन, यानेन = यात्रया, अभ्युदयाशंसम् = अभ्युदयस्य उन्नतेः आशंसा आशंसनं (आशा इत्यर्थः) विद्यते यस्यतम्, राजानम् = नृपम्, अकार्षुः = कृतवन्तः। तत्साचिव्यम् = तस्य राजवाहनस्य साचिव्यं मन्त्रित्वं 'साहाय्यमित्यर्थः' इतरेषाम् = अन्येषां कुमाराणाम्, विधाय = कृत्वा, समुचिताम् = सुयोग्याम् बुद्धिम् = मतिम्, उपदिश्य = उपदेशं कृत्वा, शुभे = मङ्गले, मुहूर्ते = काले, सपरिवारम् = सपरिजनम्, विजयाय = रणजयाय, विजयंकुर्तमित्यर्थः विससर्ज = विसृष्टवान् राजवाहनः

=राजहंसपुत्रः, मङ्गलसूचकम्=कल्याणविधायकम्, शुभशकुनम्=सुनिमित्तम्, विलोकयन्=अवलोकयन्, देशम्=स्थानम्, अतिक्रम्य=गत्वा, विन्ध्याटवीमध्यम्=विन्ध्यारण्यमध्यम्, प्रविशत्=प्राविशत्। तत्र=अरण्ये, हेतिहतिकिणाङ्कम्=हेतीनां आयुधानां हतिभिः प्रहारैः ये किणाः व्रणजचिह्नानि तेषां अङ्का चिन्हानि यस्मिन् तम्, कालायसकर्कश कायम्=कालायसं लोहमिव कर्कशः कठिनः कठोरो वा कायः शरीरं यस्यतम्। यज्ञोपवीतेनानुमेयविप्रभावम्=यज्ञोपवीतेन यज्ञसूत्रेण अनुमेयः अनुमातुं योग्यः विप्रभावः ब्राह्मणत्वं यस्यतम्, व्यक्तकिरातप्रभावः=व्यक्तः प्रकटितः किरातस्य वनेचरस्येवप्रभावः सामर्थ्यं येनतम्, लोचनपरुषम्=लोचनयोः नेत्रयोः परुषं कठोरं भयावहमित्यर्थः, पुरुषम्=मनुष्यम् ददर्श=दृष्टवान्। तेन=पुरुषेण, विहितपूजनः=विहितं कृतं पूजनं समादरः यस्य सः, राजवाहनः=राजहंससूनुः, अभाषत=अवदत्, मानव=भोपुरुष, जनसंगरहिते=पुरुषसम्पर्कशून्ये, निर्जने ईत्यर्थः मृगहिते=मृगाणां हरिणानां वन्यपशूनामित्यर्थः हिते हितकरे, घोर प्रचारेः=घोरः भयंकरः प्रचारः सञ्चारः यस्मिन् तस्मिन्, कान्तारे=कानने, विन्ध्याटवीमध्ये=तन्नामकेऽरण्ये, भवान्=त्वम्, एकाकी=अद्वितीयः, किमिति=कथम्, निवसति=प्रतिवसति, भवदंसोपनीतम्=भवतः तव अंसं स्कन्धप्रदेशमुपनीतं प्राप्तं स्थितमित्यर्थः, यज्ञोपवीतम्=यज्ञसूत्रम्, भूसुरभावम्=द्विजत्वम्, द्योतयति=व्यनक्ति, प्रकटयति वा, हेतिहतिभिः=आयुधप्रहारैः, किरातरीतिः=वनेचराचारः, अनुमीयते=ऊह्यते, कथयवद, किमेतत्=किंकारणम्।

टिप्पणी :—विजयाय = 'तुमर्थाच्च भाववचनात्" सूत्र से चतुर्थी विभक्ति। एकाकी = "एकादाकिनिच्चासहाये" सूत्र से आकिनि च् प्रत्यय' कालायस—इत्यादि में वाचक शब्द लुप्तोपमालंकार है। कालं तदयश्च—यहाँ "अनोश्यामः सरसां जातिसंज्ञयोः" सूत्र से=टच्।

मातङ्गस्य स्ववृत्तान्त कथनम्—

"तेजोमयोऽयं मानुषमात्रपौरुषो नूनं न भवति" इति मत्वा स पुरुषस्तद्वयस्यमुखान्नाम जनने विज्ञाय तस्मै निजवृत्तान्तमकथयत्—'राजनन्दन, केचिदस्यामटव्यां वेदादिविद्याभ्यासमपहाय

निजकुलाचारं दूरीकृत्य सत्यशौचादि धर्मव्रातं परिहृत्य किल्विषमन्विष्यन्तः पुलिन्दपुरोगमास्तदन्नमुपभुञ्जाना ब्राह्मणब्रुवा निवसन्ति, तेषु कस्यचित् पुत्रो निन्दापात्रचारित्रो मातङ्गो नामाहं सह किरातबलेन जनपदं प्रविश्य ग्रामेषु धनिनः स्त्रीबालसहितानानीयाटव्यां बन्धने निधाय तेषां सकलधनमपहरन्नुद्धत्य वीतदयो व्यचरम्। कदाचिदेकस्मिन् कान्तारे मदीय सहचरगणेन जिघांस्यमानं भूसुरमेकमवलोक्य दयायत्तचित्तोऽब्रवम् 'ननु पापाः, न हन्तव्यो ब्राह्मणः' इति।

शब्दार्थ :—व्रात=समूह। ब्राह्मणब्रुव=नीचब्राह्मण। वीतदस्यः= निर्दय। जिघांस्यमानं=मारे जाते हुए। दयायत्तचित्तः=दया के वशीभूत चित्त वाला अर्थात् द्रवित हुआ।

हिन्दी अर्थ—"यह तेजस्वी व्यक्ति साधारण पुरुष के तुल्य पराक्रम वाला नहीं है" यह मान करके उस पुरुष ने (किरात) उसके (राजवाहन के) मित्रों से नाम और उत्पत्ति ज्ञात करके अपने वृतान्त को कहा—हे राजपुत्र ! इस जंगल में वेद आदि के अभ्यास को छोड़कर तथा अपने कुल के आचार को एवं सत्य शौच आदि धर्मसमूह को त्यागकर पाप का अनुसरण करने वाले किरातों के अनुयायी तथा उन्हीं का अन्न खाने वाले बहुत से अपने को ब्राह्मण कहने वाले रहते हैं अर्थात् अधम ब्राह्मण मैं भी उन्हीं में से किसी का निन्दित चरित्रवाला (ब्राह्मण) पुत्र हूँ। मेरा नाम मातङ्ग है। मैं भी किरातसेना के साथ ग्रामों में प्रवेश करके, ग्रामों के धनियों को स्त्री तथा बच्चों सहित जंगल में लाकर बांध करके, उनके सम्पूर्ण धन को छीनता हुआ उद्धत तथा दयाभाव से शून्य होकर घूमा करता था' एक वार किसी जंगल में मेरे साथियों द्वारा मारे जाते हुए एक ब्राह्मण को देखकर मुझे दया आ गयी और मैं वोल उठा—'अरे पापियों ! इस ब्राह्मण को मत मारो।'

संस्कृतव्याख्या :—तेजोमयः = ओजोमयः, मानुषमात्रपौरुषः = मानुषमात्रं मनुजमात्रं पौरुषं विक्रमः यस्य सः, नूनम्=निश्चये, न= नहि, भवति=अस्ति, मत्वा=स्वीकृत्य, सः=किरातवेशधारी ब्राह्मणः, तद्वयस्यमुखात्=राजवाहनमित्राननात्, नामजनने=नाम च अभिधानं

च जननं च जनिश्चेतिनामजनने, विज्ञाय=ज्ञात्वा, तस्मै=राजवाहनाय, निजवृत्तान्तम्=स्वकीयोदन्तम्,अकथयत्=अवदत्,राजनन्दन=राजपुत्र!, केचिद्=केचन, अटव्याम्, अरण्याम्=कानने, वेदादिविद्याभ्यासम्=निगम शास्त्रपुराणादि विद्याध्ययनम्, अपहाय=परित्यज्य, निजकुलाचारम्=निजस्य स्वकीयस्य कुलस्य वंशस्य आचारं व्यवहारमाचरणं वा, दूरीकृत्य=अपाकृत्य, सत्यशौचादिधर्मव्रातम् = सत्यशुचित्वादिधर्मसमूहम्, परिहृत्य=त्यक्त्वा, किल्बिषम्=पापम्, अन्विष्यन्तः=अन्वेषणं कुर्वन्तः, पुलिन्दपुरोगमा=पुलिन्देषु किरातेषु पुरोगमाः अग्रगामिनः, तदन्नम्=किरातान्नम्, उपभुञ्जानाः = भक्षयन्तः, ब्राह्मणब्रुवाः ब्राह्मणाधमाः, निवसन्ति=प्रतिवसन्ति, तेषु=ब्राह्मणेषु कस्यचित्पुत्रः=कस्यचिन्नन्दनः, निन्दापात्रचारित्रः=निन्दापात्रं गर्ह्यं चारित्रं चरितं यस्य सः, मातङ्गः=तन्नामधेयः, सह = साकम्, किरातबलेन = किरातसेनया, जनपदम्=नगरम्, प्रविश्य=गत्वेत्यर्थः, ग्रामेषु=निवास प्रदेशेषु, धनिनः=धनाढ्यान्, स्त्रीबालसहितान् = पुत्रकलत्रादि सहितान्, आनीय = आनयनं कृत्वा, अटव्याम्=वने, बन्धने=कारागृहे, निधाय=संथाप्य, तेषाम्=धनिनाम्, सकलधनम्=सम्पूर्णद्रव्यजातम्, अपहरन्=वलात् स्वीकुर्वन्, उद्धतस्य=उद्धतस्वभावः, वीतदयः=वीता व्यतीता दया करुणा यस्य सः, व्यचरम्=अभ्रमम्, कान्तारे=कानने, मदीयसहचरगणेन = अस्माकं व्यस्यसमूहेन, जिघांस्यमानम् = हन्तुमिष्यमाणम्, भूसुरम् = ब्राह्मणम्, अवलोक्य=विलोक्य, दयात्तचित्तः=दयया करुणया आयत्तं व्याप्तं चित्तं हृदयं यस्य सः, अब्रवम्=अवदम्, ननुपापाः=भो पापकर्माणः, नहन्तव्यः=नवधो विधेयः, ब्राह्मण=भूसुरः इति।

टिप्पणी :—ब्राह्मणब्रुवा=कुत्सा के अर्थ में ब्रुव पद का प्रयोग, तेजोमयः = 'तत्प्रकृतवचने मयट्' सूत्र से मयट् मानुषमात्र—प्रमाणे द्वयसज्दघ्नञ्मात्रच् सूत्र से मात्रच् प्रत्यय, किल्बिषम् = "पापं किल्बिषं कल्मषं" इत्यमरः जिघांस्यमानम् हन्—सन्—यक् स्य—शानच् (कर्मवाच्य)।

ते रोषारुणनयना मां बहुधा निरभर्त्सयन्। तेषां भाषणपारुष्यमसहिष्णुरहमवनिसुररक्षणाय चिरं प्रयुध्यतैरभिहतो गतजीवितोऽभवम्। ततः प्रेतपुरीमुपेत्य तत्रदेहधारिभिः पुरुषैः परिवेष्टितं

सभामध्ये रत्नखचितसिंहासनासीनं शमनं विलोक्य तस्मै दण्डप्रणाममकरवम्। सोऽपि मामवेक्ष्य चित्रगुप्तं नाम निजामात्यमाहूय तमवोचत्–'सचिव !, नैषोऽमुष्य मृत्युसमयः। निन्दितचरितोऽप्ययं महीसुरनिमित्तं गतजीवितोऽभूत्। इतः प्रभृति विगलितकल्मषस्यास्य पुण्यकर्मंकरणे रुचिरुदेष्यति। पापिष्टैरनुभूयमानमत्र यातनाविशेषं विलोक्य पुनरापि पूर्वशरीरमनेन गम्यताम्' इति।

शब्दार्थं :—शमन = यमराज।

हिन्दी अर्थ—(यह सुनकर) उन्होंने (किरातों ने) क्रोध से लाल नेत्र वाले होकर मुझे बहुत डाटा फटकारा। उनके इस कटुभाषण को न सहन करता हुआ मैं उस ब्राह्मण की रक्षा के लिए उनसे बहुत देर तक लड़कर, उन्हीं के द्वारा निहत हुवा(मारा गया)। उसके पश्चात् यमराज की नगरी में गया और वहाँ पर शरीर धारी पुरुषों से घिरे हुए सभा के बीच में रत्नों से जड़े सिंहासन पर बैठे हुए यमराज को देखकर उन्हें दण्ड प्रणाम किया। उन्होंने मुझे देखकरके अपने मन्त्री चित्रगुप्त को बुलाकर कहा–हे मन्त्रिन्। अभी इसके मरने का समय नहीं है। यद्यपि इसका आचरण निन्दित है फिर भी ब्राह्मण के लिए इसने अपने प्राणों का त्याग किया है। अब इसके पाप क्षीण हो जाने से इसकी रुचि पुण्य कर्म करने के लिए जाग्रत होगी अतः पापियों के द्वारा अनुभव की जाने वाली यातना विशेष को देखकर पुनः यह अपने पहले के शरीर को प्राप्त करें।

संस्कृतव्याख्या :– ते = किराताः, रोषारुणनयनां = रोषेण कोपेन अरुणानि रक्तवर्णानि नयनानि नेत्राणि येषां ते, माम् = किरातवेशधारिणम्, बहुधा = विविध प्रकारेण, निरभर्त्संयन् = तर्जितवन्तः, तेषाम् = किरातानाम्, भाषणपारुष्यम् = कर्कशवचांसि, असहिष्णुः = सोढुमसमर्थः, अहम् = विप्रः, अवनिसुररक्षणाय = ब्राह्मणसंरक्षणाय, चिरम् = चिरकालम्, प्रयुध्य = युद्धं कृत्वा, तैः = पुलिन्दैः, अभिहतः ताडितः, गतजीवितः = मृतः इतिभावः अभवम् = जातः, ततः = तदनन्तरम्, प्रेतपुरीम् = यमराजनगरीम्, उपेत्य = प्राप्य, तत्र = नगर्याम् देहधारिभिः शरीरधारिभिः, पुरुषैः = मनुष्यैः, परिवेष्टितम् = आवेष्टितम्, सभामध्ये = आस्थानमण्डपे, रत्नखचितसिंहासनासीनम् = रत्नैः इन्द्रनीलादिमणिभिः खचिते व्याप्ते

सिंहासने राज्यासने आसीनं उपविष्टं, शमनम्=यमराजम् विलोक्य= दृष्ट्वा, तस्मै=यमराजाय, दण्डप्रणामम्=नमस्कारमित्यर्थः, अकरवम्= कृतवान्, सोऽपि=कृतान्तोऽपि, माम्=विप्रम्, अवेक्ष्य=अवलोक्य, चित्रगुप्तंनाम=तन्नामधेयम्, निजम्=स्वकीयम्, अमात्यम्=मन्त्रिणम्, आहूय =आकर्ण्य, अवोचत्=अवदत, सचिव=भो मन्त्रिन्! अमुष्य=विप्रस्य, मृत्यु समयः = मरणकालः, निन्दितचरितोऽपि = निन्दितंगर्हणीयं चरितं आचरणं यस्य सः, दुश्चरित्रः इत्यर्थः, अयम्=ब्राह्मणः, महीसुरनिमित्तम् ब्राह्मणकारणम्, गतजीवितः=गतप्राणः, अभूत=अभवत्, इतः प्रभृति =अतः आरभ्य, विगलितकल्मषस्य=विगलितं नष्टं कल्मषं किल्विषं यस्य तस्य, अस्य=ब्राह्मणस्य, पुण्यकर्मकरणे=शुभकर्मानुष्ठाने, रुचिः= अभिरुचिः, उदेष्यति=उत्पत्स्यते, पापिष्ठैः=पापानुरक्तैः, अनुभूयमानम्= उपभुज्यमानम्, अत्र=पुर्याम्, यातनाविशेषम्=तत्तत्पीडास्वरूपम् विलोक्य =अवलोक्य, पुनरपि=भूयोऽपि, पूर्वशरीरम्=प्राथमिकविग्रहम्, गम्यताम् =प्राप्यताम्।

टिप्पणी :—असहिष्णुः = अलंकृञ्निराकृञ्प्रजनोत्पचोत्पतोन्मद सूत्र इष्णुच् प्रत्यय। शमनम्= "शमनो यमराड्यमः" इत्यमरः। पापिष्ठैः= अतिशयेन पापाः इति पापिष्ठाः="अतिशायतेतमबिष्ठनौ" सूत्र से इष्ठन् प्रत्यय। यातनाविशेष=विष्णु पु० एवं भागवत पु० द्रष्टव्य है।

चित्रगुप्तोऽपि तत्र तत्र संतप्तेष्वायसस्तम्भेषु बध्यमानान्, अत्युष्णीकृते विततशरावे तैले निक्षिप्यमाणान्, लगुडैर्जर्जरीकृतावयवान्, निशितटंकैः, परितक्ष्यमाणानपि दर्शयित्वा पुण्यबुद्धिमुपदिश्य माममुञ्चत्। तदेव पूर्वशरीरमहं प्राप्तो महाटवीमध्ये शीतलोपचारं रचयता महीसुरेण परीक्ष्यमाणः शिलायां शयितः क्षणमतिष्ठम्। तदनु विदितोदन्तो मदीयवंशबन्धुगणः सहसागत्य मन्दिरमानीय मामपक्रान्तव्रणमकरोत्। द्विजन्मा कृतज्ञो मह्यमक्षरशिक्षां विधाय विविधागमतन्त्रमाख्याय कल्मषक्षयकारणं सदाचारमुपदिश्य ज्ञानेक्षणगम्यमानस्य शशिखण्डशेखरस्य पूजाविधानमभिधाय पूजां मत्कृतामङ्गीकृत्य निरगात्। तदारभ्याहं किरातकृतसंसर्गं बन्धुवर्गमुत्सृज्य सकललोकैकगुरुमिन्दुकलावतंसं चेतसि स्मर

न्नस्मिन् कानने दूरीकृतकलङ्को वसामि। 'देव, भवते विज्ञापनीयं रहस्यं किञ्चिदस्ति। आगम्यताम्' इति।

शब्दार्थ :—शराव = कड़ाह: इन्दुकलावतंसं = भगवान् चन्द्रशेखर (शंकर)।

हिन्दी अर्थ—चित्रगुप्त ने भी वहाँ पर (ले जाकर) तपे हुए लोहे के खम्भों में बाँधे जाते हुए, अत्यन्त उष्णतेल के कड़ाहों में फेंके जाते हुए, दण्डों की मार से भंग अवयवों वाले, तीक्ष्ण छेनियों के, द्वारा वेधे जाते हुए (अथवा आरों द्वारा चीरे जाते हुए) लोगों को मुझे दिखाकर तथा मुझे पुण्य बुद्धि के लिए उपदेश देकर छोड़ दिया। फिर उसी पूर्व शरीर को प्राप्त करके उसी जंगल में वहीं शीतल उपचार करते हूए उसी ब्राह्मण के द्वारा परीक्षण किया जाता हुआ मैं शिलापर शयनावस्था में कुछ क्षण पड़ा रहा।

इसके पश्चात् मेरे बन्धु-बान्धव गण ने मेरे समाचार को जानकर वहाँ पर सहसा आकर तथा मुझे घर लाकर घाव आदि की पूर्ति करके ठीक कर दिया। वह कृतज्ञ ब्राह्मण मुझे अक्षरज्ञान कराके तथा विविध आगमों तथा तन्त्रों की शिक्षा देकर पाप को दूर करने वाले सदाचार का उपदेश देकर, ज्ञान-नेत्र के द्वारा ज्ञातव्य भगवान् शंकर की पूजा का विधान बताकर और मेरे द्वारा की गयी पूजा को स्वीकार करके चला गया। उसी समय से मैं किरातों के साथ संसर्ग करने वाले अपने बन्धु समुदाय को छोड़कर सम्पूर्ण संसार के एकमात्र गुरु भगवान् शंकर का हृदय में स्मरण करते हुए इस जंगल में पापादि कलंकों से रहित होकर रहता हूँ। 'हे राजन्! आप से कुछ गोपनीय बात कहनी है' आप आयें (और सुने)।

संस्कृतव्याख्या :—चित्रगुप्तोऽपि = यमराजसचिवोऽपि, तत्रतत्र = यमपुर्यां यथोचित स्थानेषु, संतप्तेषु = अग्निनापरितप्तेषु, आयसस्तम्भेषु = अयसः इमे आयसाश्चते स्तम्भाः तेषु, लौहस्तम्भेषु इत्यर्थः, बध्यमानान् = बन्धनं प्राप्यमाणेन्ति, अत्युष्णीकृते = अतिसंतप्ते, विततशरावे = विशालकटाहे, तैले = सर्षपादीनां तैले, निक्षिप्यमाणान् = प्रक्षिप्यमाणान्, लगुडैः = दण्डैः, जर्जरीकृतावयवान् = जर्जरीकृताः प्रहारैः भग्नाः अवयवाः अङ्गानि येषां तान्, निशितटंकैः = निशिताः प्रखराः टंकाः पाषाणदारणाः

तैः, परितक्ष्यमाणान्=तनूक्रियमाणान्, दर्शयित्वा=प्रदर्श्य, पुण्यबुद्धिम्=पुण्या पवित्रा पुण्यकर्माणि व्यापृता वा साचासौ बुद्धिश्च मतिश्च ताम्, उपदिश्य=उपदेशं कृत्वा, अमुञ्चत्=अत्यजत् । तदेव=पूर्वोक्तम्, पूर्वशरीरम् = प्राथमिकतनुम्, प्राप्तः=उपागतः, महाटवीमध्ये = महावने, शीतलोपचारम्=शीतलश्चासौ उपचारः ओषधिः उपायो वा तम, रचयता=कुर्वता, महीसुरेण=ब्राह्मणेन्, परीक्ष्यमाणः=निरीक्ष्यमाणः, शिलायाम्=प्रस्तरखण्डे, शयितः=शयनं प्राप्तः, अतिष्ठम्=अभवमित्यर्थः, तदनु=तदनन्तरम्, विदितोदन्तः=ज्ञातवृत्तान्तः, मदीयवंश बन्धुगणः=अस्माकं बन्धुवर्गः, सहसा=अकस्मात्, आगत्य=आगम्य, मन्दिरम्=गृहम्, आनीय=आनयनं कृत्वा, माम् = ब्राह्मणम्, अपक्रान्तव्रणम्—अपक्रान्ताः दूरीभूताः व्रणाः क्षतयः यस्य तं, अकरोत् = कृतवान्, द्विजन्मा=ब्राह्मणः, कृतज्ञः=कृतं परैः विहितं जानाति अवगच्छति इति कृतज्ञः, मह्यम्=ब्राह्मणाय, अक्षरशिक्षाम्=अक्षरपरिज्ञानम्, विधाय=कृत्वा, विविधागमतन्त्रम्=विभिन्न शास्त्रयन्त्रतन्त्रम्, आख्याय=उक्त्वा, कल्मषक्षयकारणम्=कल्मषाणां पापानां च क्षयनाशः तस्मिन् कारणं निमित्तम्, सदाचारम्= शोभनाचरणम्, उपदिश्य=उपदेशं कृत्वा, ज्ञानेक्षण गम्यमानस्य=ज्ञानमेव ईक्षणं तेन गम्यमानः आसाद्यः तस्य, शशिखण्डशेखरस्य=शशिनः चन्द्रमसः खण्डः कला एव शेखरं शिरोभूषणं यस्य तस्य, पूजाविधानम्=अर्चनविधिम्, अभिधाय=उक्त्वा, पूजाम्=बलिम्, मत्कृताम् = मत् विहिताम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, निरगात् = निर्गतः, तदारभ्य=तदा प्रभृति, अहम्=ब्राह्मणः, किरातकृत संसर्गम्=किरातैः वनेचरैः कृतः विहितः संसर्गः सम्पर्कः येन तम्, बन्धुवर्गम्=बान्धवगणम्, उत्सृज्य=परित्यज्य, सकललोकैकगुरुम्=सकलानां निखिलानां लोकानां भुवनानां जनानां वा एकः मुख्यः गुरुः आचार्यः तम्, इन्दुकलावतंसम्=इन्दोः चन्द्रस्य कला भागविशेषः अवतंसः शिरोभूषणं यस्य तम्, चेतसि=मनसि, स्मरन्=ध्यायन्, अस्मिन्=एतस्मिन्, कानने=अरण्ये, दूरीकृतकलंकः=दूरीकृतः अपाकृतः कलंकः दोषः पापं वा येन सः निष्पाप इत्यर्थः, वसामि=निवसामि, देव=राजन्, भवते=तुभ्यम्, विज्ञापनीयम्=कथनीयम्, रहस्यम्=गुह्यं गोप्यं वा, किञ्चिदस्ति=स्वल्पं अस्ति । आगम्यताम्=समागम्यताम् ।

टिप्पणी—वध्यमानान् वध बन्धने (भ्वादि) कर्मवाच्य—शानच् वध संयमने चुरादि नहीं। निक्षिप्यमाणान्=नि+क्षिप्+कर्म वा० शानच्। परितक्ष्यमाणान्=तक्षूतनूकरणे (भ्वादि) परि+तक्ष् कर्म वा० शानच्। परीक्ष्यमाणः=ईक्ष दर्शने (भ्वादि) परि+ईक्ष् कर्म वा० शानच्।

स वयस्यगणादपनीय रहसि पुनरेनमभाषत—'राजन्! अतीते निशान्ते गौरीपतिः स्वप्नसन्निहितो निद्रामुद्रित लोचनं विबोध्य प्रसन्नवदनकान्तिः प्रश्रयानतं मामवोचत्—'मातङ्ग, ! दण्डकारण्यान्तरालगामिन्यास्तटिन्यास्तीरभूमौ सिद्धसाध्याराध्यमानस्य स्फटिकलिङ्गस्य पश्चादद्रिपतिकन्यापदपंक्तिचिह्नितस्याश्मनः सविधे विधेराननमिव किमपि बिलं विद्यते। तत्प्रविश्य तत्र निक्षिप्तं ताम्रशासनं शासनं विधातुरिव समादाय विधिं तदुपदिष्टं दिष्टविजयमिव विधाय पाताललोकाधीश्वरेण भवता भवितव्यम्। भवत्साहाय्यकरो राजकुमारोऽद्य श्वो वा समागमिष्यति' इति। तदादेशानुगुणमेव भवदागमनमभूत्। साधनाभिलाषिणो मम तोषिणो रचय साहाय्यम्' इति। 'तथा' इति राजवाहनः साकं मातङ्गेन नमितोत्तमाङ्गेन विहायार्धरात्रे निद्रापरतन्त्रं मित्रगणं वनान्तरमवाप।

राजवाहनान्वेषणे कुमाराणां निर्गमनम्—

तदनु तदनुचराः कल्ये साकल्येन राजकुमारमनवलोकयन्तो विषण्णहृदयास्तेषु तेषु वनेषु सम्यगन्विष्यानवेक्षमाणा एतदन्वेषणमनीषया देशान्तरं चरिष्णवोऽतिसहिष्णवो निश्चितपुनः संकेत स्थानाः परस्परं वियुज्य ययुः।

हिन्दी अर्थ—उसने बन्धुसमुदाय से पृथक् करके राजवाहन से कहा—'हे राजन्! गत रात्रि के अन्तिम समय में प्रसन्नमुख भगवान् शंकर स्वप्न में आकर के मुझे निद्रा से जगाकर तथा विनयावनत मुझ से बोले हे मातङ्ग! दण्डकारण्य के बीच में बहने वाली नदी के किनारे सिद्ध एवं साध्यनामक देवयोनियों से सेवित स्फटिकमणि विरचित शिवलिङ्ग के पीछे भगवती पार्वती के चरण से चिह्नित पत्थर के समीप ब्रह्माजी के मुख के तुल्य एक बिल है। उस बिल में प्रवेश करके वहाँ पर रखे हुए

ताम्रपत्र को ब्रह्मा के आदेश के समान स्वीकार कर तथा उसी ताम्रपत्र में खुदी हुई उपदेशात्मक विधि को भाग्यविजय के समान स्वीकार करके आप पाताललोक के स्वामी होंगे। तुम्हारी सहायता करने वाला कोई राजकुमार आज या कल में आ जायेगा। उनके निर्देशानुसार ही आपका आगमन हुआ है। साधनाभिलाषी प्रसन्नचित्त मेरी अब आप सहायता करें। 'तथास्तु' यह कह कर राजवाहन अर्धरात्रि में सोते हुए मित्र-मण्डल को त्यागकर नतमस्तक मातङ्ग के साथ दूसरे जंगल में चला गया। उसके जाने के पश्चात् उसके सेवक प्रातः उसे न देखकर खिन्न हृदय होकर, उन उन जंगलों में अच्छी प्रकार से खो जाने पर भी न देखते हुए, इसें खोजने की बुद्धि से दूसरे देश में जाने वाले, के लिये उद्यत, अत्यन्त सहिष्णु (साहसी) वे पुनः (मिलने के) संकेत स्थान को निश्चित करके इधर उधर (खोजने के लिए) चले गये।

संस्कृतव्याख्या :—सः = मातङ्गः, वयस्यगणात् = मित्रमण्डलात्, अपनीय=दूरीकृत्य, रहसि=एकान्ते, पुनः=भूयः, एनम् = राजकुमारम्, अभाषत = अवोचत्, राजन्=भो नृप ! अतीते = व्यतीते, निशान्ते रात्र्यवसाने, चतुर्थप्रहरे इत्यर्थः, गौरीपतिः=भगवान् शङ्करः, स्वप्नसन्निहितः= स्वप्ने संवेशे सन्निहितः सन्निकर्षं प्राप्तः, स्वप्नसमागतः इत्यर्थः, निद्रामुद्रितलोचनम् = निद्रया प्रमीलया मुद्रिते निमीलिते लोचने नयने यस्य तम्, विबोध्य=प्रबोध्य, प्रसन्नवदनकान्तिः=प्रसन्ना मधुरा वदनस्य मुखस्य कान्तिः प्रभा शोभा वा यस्य सः, प्रसन्नवदनः इत्यर्थः, प्रश्रयानतम्= प्रश्रयेण विनयभावेन आनतं नम्रं, माम् = मातङ्गम्, अवोचत् = अवदत्, मातङ्ग = भो किरात, दण्डकारण्यान्तरालगामिन्याः = दण्डकारण्यस्य दण्डकवनस्ये अन्तराले मध्ये गामिनी गमनशीला तस्याः, तटिन्याः = सरितः, तीरभूमौ = तटस्थाने सिद्धसाध्याराध्यमानस्य = सिद्धाश्च साध्याश्च देवयोनिविशेषाः तैः आराध्यमानस्यसेव्यमानस्य पूज्यमानस्य वा, स्फटिकलिङ्गस्य = स्फटिकाख्यमणिर्मितशिवलिङ्गस्य, पश्चात् = पृष्ठदेशे, अद्रिपतिकन्यापदपंक्तिचिह्नितस्य = अद्रीणां नगानां पतिः स्वामीति अद्रिपतिः हिमालयः तस्य कन्या पुत्री पार्वतीत्यर्थः तस्याः पदयोः चरणयोः पंक्त्या पद्धत्या चिन्हितस्य अङ्कितस्य, अश्मनः = प्रस्तरस्य, सविधे = समीपे

विधेः=ब्रह्मणः, आननमिवः मुखमिव, किमपि=अज्ञातमकम्, विलम्=विवरम्, विद्यते=वर्तते, तत्=विलम् प्रविश्य=प्रवेशं कृत्वा, तत्र=विले, निक्षिप्तम्,संस्थापितम्, ताम्रशासनम्=ताम्र=पट्टम्, शासनम्=आदेशम्, विधातुरिव = ब्रह्मणः इव, समादाय=गृहीत्वा, विधिम् = ब्रह्माणम् तदुपदिष्टम् = तदुपरिलिखितम्, दिष्टविजयमिव = भाग्यविजयमिव, विधाय=कृत्वा, पातालकोकाधीश्वरेण=पाताललोकस्य अधोभुवनस्य अधीश्वरेण स्वमिना, भवता=त्वया, भवितव्यः=भवनीयः, भवत्साहायकरः =त्वत्सहयोगविधायकः, राजकुमारः=राजपुत्रः, अद्य=अस्मिन् दिने एव, श्वः=अग्रिमदिने, वा=अथवा, समागमिष्यति=आगमिष्यति, तदादेशानुगुणमेव=तस्य शंकरस्य आदेशस्य आज्ञायाः अनुगुणमेव अनुसारमेव, भवदागमनम् = त्वत्समागमनम्, अभूत्=अभवत्, साधनाभिलाषिणः= साहायाभिलाषुकस्य, मम=किरातस्य, तोषिणः=परितुष्टस्य, रचय=कुरु साहाय्यम्= सहयोगम्, तथा=एवमस्तु, राजवाहनः = राजहंसपुत्रः, साकम्=सार्धम्, मातङ्गेन=किरातेन, नमितोत्तमाङ्गेन= नमितं नतं उत्तमाङ्गं शिरः यस्यतेन, विहाय=परित्यज्य, अर्धरात्रे=निशीथे, निद्रापरतन्त्रम्= प्रमीलाकुलम्, मित्रगणम्= सुहृन्मण्डलम्, वनान्तरम्= अरण्यान्तरम्, अवाप=गत इत्यर्थः, तदनु=तस्य गमनानन्तरम्, तदनुचराः=तत्सेवकाः, कल्ये=प्रातः, साकल्येन=समग्ररूपेण, राजकुमारम्=राजवाहनम्, अनवलोकयन्तः = अनवेक्षमाणाः, विषण्णहृदयाः= विषण्णं खिन्नं हृदयं चितं येषां ते, वनेषु= काननेषु, सम्यक्=सुष्ठु, अन्विष्य=अन्वेषणं कृत्वा, अनवेक्षमाणाः=अनवलोकयन्तः अपश्यन्तो वा, अन्वेषणमनीषया=गवेषणधिया, देशान्तरम्=अपरं देशम्, चरिष्णवः= पर्यटनशीलाः, अतिसहिष्णवः = सहनशीलाः, साहसिनः इत्यर्थः। निश्चितपुनः संकेत स्थानाः=निश्चितं निर्णीतं पुनः संकेत स्थानं पुनः सम्मिलनस्थानं यैः ते, परस्परम्=मिथः, वियुज्य=वियुक्ताभूत्वा, ययुः=गतवन्तः।

टिप्पणी—चरिष्णवः=अलंकृन—इत्यादि सूत्र से इष्णुच् प्रत्यय। अपनीय=अप+नी। ल्यप् निशान्ते...स्वप्नसन्निहितः=निशावसान में दृष्ट स्वप्न प्रायः सफल होते हैं। अग्निपुराण अध्याय २२८।१६।१७ में प्रातः

कालिक स्वप्न को १० दिन में फलदायी कहा गया है। महाकवि सुबन्धु ने कन्दर्पकेतु के प्रातःकलिक स्वप्न का वासवदता प्राप्ति की बात 'वासवदत्ता' में आयी है। महाकवि बाण ने राजा तारापीड के स्वप्न वर्णन में "अवितथ फला हि प्रायोनिशावसानसमयदृष्टाः-भवन्ति स्वप्नाः" कादम्बरी पृ० २०४, १९६१, चौखम्बा प्र०। सिद्ध=यक्ष, 'पिशाचो गुह्यकः सिद्धः' इति कोशः, उत्तमाङ्ग=शिर=उत्तमाङ्गं शिरः शीर्षम्" इतिकोशः। कल्यं= प्रातः"प्रत्यूपोऽहर्मुखं कल्यमुषः प्रत्युषसी अपि' इतिकोशः, । मनीषा=बुद्धि "बुद्धिर्मनीपाधिषणाधीः' इतिकोशः। अन्वेक्षमाणा=अनु+ईक्ष+शानच्, स्त्रीलिङ्ग। ययुः=गये–या प्रापणे लिट् लकार बहु० व०, प्र० पु०। वियुज्य =वि+युज्–ल्यप्।

राजवाहनमातङ्गयोर्यात्रा—

लोकैकवीरेण कुमारेण रक्ष्यमाणः सन्तुष्टान्तरङ्गो मातङ्गोऽपि- बिलं=शशिशेखरकथिताभिज्ञानपरिज्ञातं निःशङ्कं प्रविश्य गृहीतताम्रशासनो रसातलं पथा तेनैवोपेत्य तत्र कस्यचित्पत्तनस्य निकटे केलीकाननकासारस्य विततसारसस्य समीपे नानाविधेनेशशासनविधानोपपादितेन हविषा होमं विरच्य प्रत्यूहपरिहारिणि सविस्मयं विलोकयति राजवाहने समिदाज्यसमुज्ज्वलिते ज्वलने पुण्यगेहं देहं मन्त्रपूर्वकमाहुतीकृत्य तडित्समानकान्ति दिव्यां तनुमलभत।

तदनु मणिमयमण्डनमण्डलमण्डिता सकललोकललनाकुलललामभूताकन्यका काचन विनीतानेकसखीजनानुगम्यमाना कलहंसगत्या शनैः आगत्यावनिसुरोत्तमाय मणिमेकमुज्ज्वलाकारमुपायनीकृत्य तेन 'का त्वम्' इति पृष्टा सोत्कण्ठाकलकण्ठस्वनेन मन्दं मन्दमुदञ्जलिरभाषत–'भूसुरोत्तम! अहमसुरोत्तमनन्दिनी कालिन्दी नाम। मम पितास्य लोकस्य शासिता महानुभावो निजपराक्रमासहिष्णुना विष्णुना दूरीकृतामरे समरे यमनगरातिथिरकारि। तद् वियोगशोकसागरमग्नां मामवेक्ष्य कोऽपि कारुणिकः सिद्धतापसोऽभाषत्।

हिन्दी अर्थ—संसार में अद्वितीय वीर कुमार राजवाहन के द्वारा रक्षित वह मातङ्ग सन्तुष्ट होता हुआ, भगवान् शंकर के द्वारा निर्दिष्ट चिह्नों से पहचान कर उस बिल में निश्शंक प्रवेश करके तथा ताम्रपत्र को लेकर

के उसी मार्ग से पाताल में प्रविष्ट हुआ। वहाँ पर किसी नगर के समीप सारस पक्षियों से व्याप्त, क्रीडावन के तालाब के पास, ईश्वर की (शिव) आज्ञानुसार विभिन्न प्रकार के हवनीय पदार्थों से हवन करके, विघ्नों के दूर करने वाले, आश्चर्य युक्त राजकुमार राजवाहन के देखते ही, समिधा और घी से प्रदीप्त वह्नि में पुण्यधाम शरीर को मन्त्रपूर्वक उसने (मातङ्ग) आहुति देदी। (इसके पश्चात्) बिजली की कान्ति के तुल्य उसने दिव्य शरीर प्राप्त किया।

इसके पश्चात् मणियों से जड़े आभूषणों से युक्त, सम्पूर्ण संसार की रमणियों में श्रेष्ठ किसी एक कुमारी ने विनम्र सखियों के साथ कलहंस की चाल से आकर एक सुन्दर मणि उस ब्राह्मण को दी। उस ब्राह्मण (मातङ्ग) ने पूछा तुम कौन हो ? इस प्रकार पूछी जाती हुई उस कन्या ने उत्कण्ठापूर्वक कोयल के समान मधुर स्वर से, धीरे-धीरे हाथ जोड़कर कहा—हे ब्राह्मण ! मैं एक असुर की पुत्री हूँ, मेरा नाम कालिन्दी है। इस लोक के शासक मेरे पिता के पराक्रम को न सहन करने वाले विष्णु ने युद्ध में जिसमें देवता पराजित हुए, मेरे पिता को यमराज के नगर का अतिथि बना दिया अर्थात् मेरे पिता को मार डाला। उन्हीं के वियोग के शोकसागर डूबी हुई मुझ को देखकर एक दयावान् सिद्ध तपस्वी ने कहा—

संस्कृतव्याख्या :—लोकैकवीरेण=लोकेषु भुवनेषु एकवीरः प्रधानशूरः तेन, कुमारेण=राजवाहनेन, रक्ष्यमाणः=संरक्ष्यमाणः, सन्तुष्टान्तरङ्गः=प्रहृष्टचेताः, मातङ्गोऽपि=मातङ्गवेशधारीब्राह्मणोऽपि, बिलम्=विवरम्, शशिशेखरकथिताभिज्ञानपरिज्ञातम् = शशिशेखरेण भगवता शंकरेण कथितैः उक्तैः अभिज्ञानैः चिन्हैः परिज्ञातं विज्ञातम्, निःशङ्कम्= =शङ्कारहितम्, निर्भयमित्यर्थः, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, गृहीतताम्रशासनः=गृहीतं स्वीकृतं ताम्रशासनं ताम्रपट्टं येन सः, रसातलम्=पातालमधोलोकं वा, तेनैव=पूर्वोक्तेनैव, यथा=मार्गेण, उपेत्य = गत्वा प्राप्यवा, तत्र=पाताले, कस्यचित् = अज्ञातस्य, पत्तनस्य = नगरस्य, निकटे=समीपे, केलीकाननकासारस्य = केलीनां क्रीडानां काननं वनं तत्र यः कासारः तडागः तस्य, विततसारसस्य=वितताः प्रसृताः यत्रत्र

स्थिताः वा सारसाः पक्षिविशेषाः यस्मिन् तस्य, समीपे = सविधे, नाना-विधेन = बहुप्रकारेण, ईशशासन विधानोपपादितेन = ईशस्य शंकरस्य शासनविधानं आज्ञानुसारमित्यर्थः तेन उपपादितेन विहितेन, हविषा = हूयते तत् हविः तेन, हवनीय द्रव्येण, होमम् = हवनम्, विरच्य = कृत्वा, प्रत्यूहपरिहारिणि = प्रत्यूहानां विघ्नानामपायानां वा परिहारिणि अपहा-रिणि, सविस्मयम् = साश्चर्यम्, विलोकयति = अवलोकयति, राजवाहने = राजहंसपुत्रे, समिदाज्यसमुज्ज्वलिते = समिधश्च यज्ञीयकाष्ठाश्च आज्य-श्च घृतंच तैः समुज्ज्वलिते प्रदीप्ते, ज्वलने = अग्नौ, पुण्यगेहम् = पुण्यस्य सुकृतस्य गेहं धाम वासस्थानं वा, देहम् = शरीरम्, मन्त्रपूर्वकम् = समन्त्रम्, आहुतीकृत्य = अग्नये समर्प्य, तडित्समानकान्ति = तडिता विद्युता समाना सदृशा कान्तिः प्रभा यस्याः सा ताम्, दिव्याम् = दिविभवः दिव्यः ताम्, स्वर्गीयामित्यर्थः, तनुम् = शरीरम्, अलभत = लब्धवान्, तदनु = तदनन्तरम्, मणिमय मण्डनमण्डलमण्डिता = मणिमयानि मणिप्रचुराणि मण्डनानि आभूषणानि तेषां मण्डलेन समूहेन मण्डिता भूषिता, सकललोक-ललनाकुलललाम भूतकन्यका = सकललोकस्य सम्पूर्णभुवनस्य ललनाकुलेषु कान्तासमुदायेषु ललामभूता भूषणभूता कन्यका कुमारी, काचन = अज्ञाता, विनीतानेकसखीजनानुगम्य माना = विनीता विनम्रा अनेकसखीजनैः बहु सहचरीसमुदायैः अनुगम्यमाना अनुषियमाणा, कलहंसगत्या = कलहंसगमनेन, मन्थर गत्येत्यर्थः, शनैः = मन्दम् मन्दम्, आगत्य आगम्य, अवनि-सुरोत्तमाय = महीसुर श्रेष्ठाय, मणिम् = रत्नम्, उज्ज्वलाकारम् = समुज्ज्वलमित्यर्थः, उपायनीकृत्य = उपायनरूपेण दत्त्वा, तेन = ब्राह्मणेन, का त्वमितिपृष्टा सती, सोत्कण्ठा = उत्कण्ठया सहिता कुतुकाकुलेत्यर्थः कल-कण्ठस्वनेन = कोकिलस्वरेण, काकलीत्यर्थः मन्दं मन्दम् = शनैः शनैः, उद-ञ्जलिः = प्रबद्धाञ्जलिः, अभाषत = अवदत् ।

'भूसुरोत्तम = भो ब्राह्मण श्रेष्ठ, अहं, असुरोत्तम नन्दिनी = दैत्यराज-पुत्री, कालिन्दीनाम = तन्नामधेयः, मम, पिता = जनकः लोकस्य = पाताललोकस्य, शासिता = रक्षकः, महानुभावः = महाप्रभावः, निज-पराक्रमासहिष्णुना = निजस्य स्वकीयस्य मज्जनकस्येत्यर्थः पराक्रमस्य विक्र-मस्य असहिष्णुना असहनशीलेन, जिष्णुना = पुरुषोत्तमेन, दूरीकृतामरे = दूरीकृताः तिरस्कृताः पराजिताः अमराः देवाः यस्मिन् तस्मिन्, समरे =

रणे, यमनगरातिथिः = यमनगरस्य कृतान्तालयस्य अतिथिः अभ्यागतः, अकारि = कृतः, हतः इतिभावः साकल्येन तद् वियोग-शोक-सागरमग्नाम् = तस्य जनकस्य वियोगशोकः विरहदुःखमेव सागरः समुद्रः तत्रमग्नां निमग्नां, माम् = कन्यकाम्, अवेक्ष्य = अवलोक्य, कोऽपि = अज्ञातनामा, कारुणिकः = दयावान्, दयालुर्वा, सिद्धतापसः = सिद्धतपस्वी, अभापत = अकथयत् ।

टिप्पणी—एकवीरः = "पूर्वापरप्रथमचरम जघन्य—इत्यादि सूत्र से "वीरैकः' ही उचित है । क्योंकि वीर का पूर्व प्रयोग होगा । रक्ष्यमाणः = कर्म वा. रक्ष + शानच्, प्रविश्य = प्र + विश + क्त्वा, ल्यप्, । रसातलम् = पाताल "अधोभुवनं पातालं बलिसद्मरसातलम्" इतिकोशः । पत्तन = नगर, 'पत्तनं पुटभेदनम्' इतिकोशः । कासार = तालाव = "कासारः सरसी सरः" इति कोशः । प्रत्यूह = विघ्न "विघ्नोऽन्तरायः प्रत्यूहः" इति कोशः । विरच्य = करके, वि + रच + क्त्वा, ल्यप् प्रत्यय । मणिमय = मणि शब्द से प्राचुर्य अर्थ में मयट् प्रत्यय 'तत्प्रकृतवचनेमयट्' अनुगम्यमाना = अनु + गम् + णिच् + शानच् (स्त्री. लि.) । शासिता = शासि + तृच् (कर्ता में) ।

'बाले' कश्चिद्दिव्यदेहधारी मानवो नवो वल्लभस्तव भूत्वा सकलं रसातलं पालयिष्यति' इति । तदादेशं निशम्य घनशब्दोन्मुखी चातकी वर्षागमनमिव तवालोकनकांक्षिणी चिरमतिष्ठम् । मनोरथफलायमानं भवदागमनमवगम्य मद् राज्यावलम्बभूतामात्यानुमत्या मदनकृत सारथ्येन मनसा भवन्तमागच्छम् । लोकस्यास्य राजलक्ष्मीमङ्गीकृत्य मां तत्सपत्नीं करोतु भवान् । मातङ्गोऽपि राजवाहनानुमत्या तां तरुणीं परिणीय दिव्याङ्गनालाभेन हृष्टतरो रसातलराज्यमुररीकृत्य परमानन्दमाससाद ।

राजवाहनस्य प्रत्यावर्तनं भ्रमणञ्च—

वञ्चयित्वा वयस्यगणं समागतो राजवाहनस्तदवलोकनकौतूहलेन भुवं 'गमिष्णुः कालिन्दीदत्तां क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनं मणिं साहाय्यकरणसन्तुष्टान्मातङ्गाल्लब्ध्वा कंचनाध्वानमनु वर्तमानं तं विसृज्य विलपथेन तेन निर्ययौ । तत्र च मित्रगणमनवलोक्य भुवं बभ्राम ।

हिन्दी अर्थ—(वह तापस बोला) हे बाले ! कोई नूतन दिव्यदेहधारी पुरुष तुम्हारा प्रियतम होकर सम्पूर्ण पाताल की रक्षा करेगा। उसके आदेश को सुनकर, वर्षागमन के लिए बादल की ओर उन्मुखी चातकी के समान तुम्हारे दर्शन की अभिलाषिनी बहुत काल से यहाँ स्थित हूँ। मेरे मनोरथ के फलस्वरूप आपके आगमन को जानकर मेरे राज्य के एकमात्र आश्रयभूत मन्त्रियों की अनुमति से कामदेव को सारथी करके मेरा मन आपके पास आया है। अतः आप इस पाताल लोक की राजलक्ष्मी स्वीकार करके मुझे उसकी सौत बनावे। अर्थात् आप मुझे अपनी पत्नी स्वीकार करें। मातङ्ग ने भी राजवाहन की आज्ञा से उस युवती से विवाह करके, उस दिव्याङ्गना के लाभ से अत्यन्त प्रसन्न होता हुआ, पाताल राज्य को स्वीकार करके अत्यन्त आनन्द को प्राप्त किया। राजकुमार राजकुमार राजवाहन अपने मित्रों को प्रवञ्चित करके आया अब वह उनको देखने की इच्छा से पृथिवी पर जाने के लिए इच्छा की तो भूख और प्यास को शान्त करने वाली कालिन्दी के द्वारा प्रदत्त एक मणि को सहायता से सन्तुष्ट मातङ्ग से प्राप्त करके, कुछ दूर तक (पहुँचाने) के लिए पीछे आये हुए (उस मातङ्ग) को विदा करके उसी विवर से वह (राजवाहन) बाहर आ गया। और वहाँ पर मित्रों को न प्राप्त करके (उनकी खोज में) पृथिवी पर घूमने लगा।

संस्कृतव्याख्याः—बाले = देवि !, दिव्यदेहधारी = दिव्यशरीरधारकः, मानवः = मनुजः, नवः = नूतनः, वल्लभः = प्रियः, तव = भवतः, भूत्वा, सकलम् = समग्रम्, रसातलम् = पातालम्, पालयिष्यति = रक्षिष्यति। तदादेशम् = तदाज्ञाम्, निशम्य = श्रुत्वा, घनशब्दोन्मुखी = घनशब्देन मेघध्वनिना उन्मुखी ऊर्ध्वमुखी, चातकी = स्तोककी, वर्षागमनमिव = प्रावृट्कालागमनमिव, तव = भवतः, अवलोकनकांक्षिणी = दर्शनाभिलाषिणी, चिरम् = बहुकालम्, अतिष्ठम् = प्रतीक्षमाणा अभवम्। मन्मनोरथफलायमानम् = ममाभिलाषस्य फलमिवा चरतीति तथा, भवदागमनम् = त्वत्समागमम, अवगम्य = ज्ञात्वा, मद्राज्यावलम्बभूतामात्यानुमित्या = ममराज्यस्य पाताललोकस्य अवलम्बभूतानां संरक्षकाणां अमात्यानां मन्त्रिणां अनुमित्या आदेशेन, मदनकृतसारथ्येन = मदनेन कामदेवेन

कृतं विहितं सारथ्यं सूतकर्म यस्य एतादृशेन, मनसा=हृदयेन, भवन्तम् =त्वाम्, आगच्छम्=समागच्छम्। अस्य लोकस्य = पाताललोकस्य, राजलक्ष्मीम्=राज्यश्रियम्, अङ्गीकृत्य=स्वीकृत्य, माम् = कन्यकाम्, तत्सपत्नीम्=तस्याः राजश्रियः समानः पतिः यस्याः सातां करोतु= विधीयताम्, भवान्=त्वम्, मातङ्गोऽपि=ब्राह्मणोऽपि, राजवाहनानुमित्या=राजवाहनाज्ञया, ताम्=पूर्वोक्ताम्, तरुणीम्=युवतीम्, परिणीय=विवाह्य, दिव्याङ्गनालाभेन=दिव्यपत्नीलाभेन, हृष्टतरः=प्रसन्नतरः, रसातलराज्यम्=पातालराज्यम्, उररीकृत्य=अङ्गीकृत्य, परमानन्दम्=परमप्रमोदम्, आससाद=अवाप। वञ्चयित्वा=विप्रलभ्य, प्रतार्य वा, वयस्यगणम् = सुहृन्मण्डलम्, समागतः = आगतः, राजवाहनः= राजकुमारः, तदवलोकनकौतूहलेने=मित्रदर्शनकुतुकाकुलेन, भुवम्=पृथ्वीम्, गमिष्णुः=चरिष्णुः, कालिन्दीदत्तम् = तन्नामिकयाकन्यकयाप्रदत्तम्, क्षुत्पिपासादि क्लेशनाशनम्=बुभुक्षातृष्णादिपीडाहारकम्, मणिम्=रत्नम्, साहाय्यकरणसन्तुष्टात् = साहाय्यकरणेन सहायतया सन्तुष्टात परितुष्टात्, लब्ध्वा=प्राप्य, अध्वानम्=मार्गम्, अनुवर्तमान्=अनुगच्छन्तम्, तम् मातङ्गम्, विसृज्य=त्यक्त्वा, बिलपथेन=विवरमार्गेण, निर्ययौ= निर्गतवान्। तत्र=पूर्वोक्त स्थाने, मित्रगणम्=सुहृद्वर्गम्, अनवलोक्य= अनवेक्ष्य, भुवम्=पृथ्वीम्, बभ्राम=भ्रमणं चकार,

टिप्पणी—अवगम्य=अव+गम् क्त्वा,+ल्यप् प्रत्यय। सारथ्येन= गुणवचन—सूत्र से ष्यञ् प्रत्यय। आससाद="षद्लृ' विशरणगत्यवसादनेषु, लिट् लकार। हृष्टतरः=हृष्ट+तरप् प्रत्यय, "द्विवचन विभज्य—सूत्र से गमिष्णुः=गम्+इष्णुच प्रत्यय, सूत्र पहले लिखा जा चुका है।

सोमदत्तस्य साक्षात्कारः—

भ्रमंश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य तत्र विशश्रमिषु रान्दोलिकारूढं रमणीसहितमाप्तजनपरिवृतमुद्याने समागतमेकं पुरुषमपश्यत्। सोऽपि परमानन्देन पल्लवितचेता विकसितवदनारविन्दः "मम स्वामी सोमकुलावतंसो विशुद्धयशोनिधी राजवाहनः एषः। महाभाग्यतयाकाण्ड एवास्य पादमूलं गतवानस्मि। सम्प्रति

महान्नयनोत्सवो जातः" इति ससंभ्रममान्दोलिकायां अवतीर्य सरभसपदविन्यासविलास हर्षोत्कर्षं चरितस्त्रिचतुरपदान्युद्गतस्य चरणकमलयुगलं गलदुल्लसन्मल्लिकावलयेन मौलिना पस्पर्श।

प्रमोदाश्रुपूर्णो राजा पुलकिताङ्गं तं गाढमालिङ्गय 'अये सौम्य सोमदत्तं, इति व्याजहार। ततः कस्यापि पुन्नागभूरुहस्य छाया-शीतले तले संविष्टेन मनुजनाथेन सप्रणयमभाणि—सखे ! कालमे-तावन्तं, देशे कस्मिन्, प्रकारेण केनास्थायि भवता, सम्प्रति कुत्र गम्यते, तरुणी केयम्, एष परिजनः सम्पादितः कथम् कथय', इति।

सोऽपि मित्रसंदर्शनव्यतिकरापगतचिन्ताज्वरातिशयो मुकुलित-करकमलः सविनयमात्मीय प्रचारप्रकारमवोचत्।

शब्दार्थ—उपशल्ये = समीप में। आक्रीड=उपवन। आन्दोलिका =झूला।

हिन्दी अर्थ—घूमते हुए राजवाहन ने एक विशाला नामक ग्राम के समीप एक उद्यान में विश्राम करने की इच्छा करते हुए, झूले पर स्त्री सहित समासीन तथा परिचारक वर्ग से युक्त बगीचे में आये हुए एक पुरुष को देखा। अत्यन्त हर्ष से प्रसन्न हृदय वाले तथा प्रफुल्ल मुख कमल वाले उस पुरुष ने कहा चन्द्रवंश के भूषण, विशुद्ध यश के भण्डार ये तो मेरे स्वामी राजवाहन हैं। बड़े ही सौभाग्य से अनवसर में ही इनके पास आ गया हूँ। इस समय नेत्रों को महान् आनन्द प्राप्त हो रहा है।" इस प्रकार कहता हुआ सहसा झूले से उतर कर, शीघ्रता से पैर रखते हुए हर्ष सहित तीन-चार कदम आगे से ही राजवाहन के पदकमल को गिरते हुए मल्लिका पुष्पों के वलय से युक्त शिर से प्रणाम किया। आनन्दा-श्रुओं से युक्त राजवाहन उसके रोमांचित शरीर से जोर से आलिङ्गन करके "अये सौम्य सोमदत्त' ऐसा कहा। फिर एक नागकेसर वृक्ष की ठंडी छाया के नीचे बैठकर राजा ने प्रेम पूर्वक कहा—'अरे मित्र ! इतने समय तक, किस देश में, किस प्रकार से रहे, इस समय कहाँ जाते हो, और यह तुम्हारे साथ स्त्री कौन है और यह परिजन वर्ग कैसे प्राप्त किया— इत्यादि बातें सभी बताओ—वह सोमदत्त भी मित्र के दर्शन से चिन्ता रहित होकर अपने कर कमलों की अंजलि बांधकर विनयपूर्वक अपने भ्रमण का हाल बतलाने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—भ्रमन् = अटन्, विशालोपशल्ये = विशालञ्च महच्च तत् उपशल्यं ग्रामान्तं तस्मिन्, आक्रीडम् = उपवनम्, आसाद्य = प्राप्य, तत्र = उद्याने, विशश्रमिषुः = विश्रमितुमिच्छुः, आन्दोलिकारूढम् = दोलोपविष्टम्, रमणीसहितम् = प्रमदोपेतम, आप्तजनपरिवृतम् = आप्त जनैः विश्वासपात्रैः परिवृतम् आवृतम, उद्याने = उपवने, समागतम् = आगतम्, पुरुषम् = मनुष्यम्, अपश्यत् = दृष्टवान्, सोऽपि = पुरुषोऽपि, परमानन्देन = परमश्चासौ आनन्दः परमानन्दः तेन प्रमोदनिर्भरेण, पल्लवितचेता = पल्लवितं विकसितं प्रफुल्लं वा चेतः चित्तं यस्य सः, विकसित वदनारविन्दः = विकसितं प्रफुल्लं वदनं मुखं अरविन्दमिव कमलमिव यस्त सः, मम = मदीयः, स्वामी = अधिपतिः, सोमकुलावतंसः = सोमकुलस्य चन्द्रवंशस्य अवतंसः भूषणम्, विशुद्धयशोनिधिः = विशुद्धः अतिशुद्धः यशसः कीर्तेः निधिः उदधिः यस्य सः, एषः = पुरो वर्तमानः, राजवाहनः = राजहंसपुत्रः, महाभाग्यतया = सौभाग्येन, अकाण्डे = अनवसरे, अस्य = राजवाहनस्य, पादमूलम् = समीपमित्यर्थः गतवानस्मि = गतोऽस्मि, सम्प्रति = इदानीम्, महान् = अत्यधिकः, नयनोत्सवः = नयनानन्दः, जातः = समुत्पन्नः, ससंभ्रमम् = सरभसम्, आन्दोलिकायाः = दोलायाः, अवतीर्य = अधः आगत्य, सरभसपदविन्यास विलासिहर्षोत्कर्ष चरितः = सरभसः सवेगः यो पदविन्यासः चरणक्रमः तेन विलसतीति विलासी तथाभूतश्चासौ हर्षोत्कर्षः हर्षाधिक्यं चरिते यस्य सः, त्रिचतुरपदानि = त्रीणि वा चत्वारि वा पदानि, उद्गतस्य = प्रचलितस्य, चरण कमल युगलम् = पादारविन्द द्वन्द्वम्, गलदुल्लसन्मल्लिका वलयेन = गलत् स्खलत् उल्लसत् विलसत् मल्लिका-वलयम् मल्लिकापुष्पवलयं यस्य तेन, मौलिना = शिरसा, पस्पर्श = स्पर्श-मकरोत् । प्रमोदाश्रुपूर्णः = आनन्दाश्रुनिर्भरः, राजा = राजवाहनः, पुलकिताङ्गम् = पुलकितं रोमाञ्चितं अङ्गं शरीरं यस्य तम्, गाढम् = सुदृढम्, आलिङ्ग्य = आलिङ्गनं कृत्वा अये = अरे, सौम्य = मनोहर, सोमदत्त, व्याजहार = अकथयत, ततः = तदनन्तरम्, पुन्नागभूरुहस्य = नागकेसरविट-पस्य, छायाशीतले = छायया अनातपेन शीतले शैत्यप्रधाने, तले = अधः संविष्टेन = उपविष्टेन, मनुजनाथेन = नरपतिना, सप्रणयम् = सस्नेहम्, अभाणि = कथितः, सखे = भो मित्र, कालम् = समयम्, देशे = प्रदेशे केन

प्रकारेण कथम्, अस्थायि = उषितः, भवता = त्वया, सम्प्रति = अधुना, कुत्र = क्व, तरुणी = युवती, परिजनः = परिचारकवर्गः, सम्पादितः = प्राप्तः लब्धो वा, कथय = ब्रूहि, सोऽपि = सोमदत्तोऽपि, मित्रसंदर्शनव्यतिकरापगतचिन्ता ज्वरातिशयः = मित्रस्य सख्युः संदर्शनव्यतिकरेण सुदर्शन व्यापारेण अपगतः व्यतीतः चिन्ता एव ज्वरस्यातिशयः यस्य सः, मुकुलितकरकमलः = मुकुलिते संयोजिते करकमले पाणि पक्षे यस्य सः, बद्धाञ्जलिरितिभावः, सविनयम् = विनय सहितम् आत्मीय प्रचार प्रकारम्, स्वकीय भूभ्रमणप्रकारम्, अवोचत् अवदत् ।

टिप्पणी—उपशल्य = "उपशल्यं ग्रामान्तं स्यात्" इत्यमरः, अक्रीडम् = बगीचाः "पुमानाक्रीड उद्यानम्" इत्यमरः व्यतिकर = व्यापार "व्यतिकरः समाख्यातो व्यसनव्यतिषङ्गयोः" विश्वः

॥ द्वितीय उच्छ्वास समाप्त ॥

"तृतीय उच्छ्वास प्रारम्भ"

सोमदत्तस्य चरितम्—

"देव, भवच्चरणकमलसेवाभिलाषीभूतोऽहं भ्रमन्नेकस्यां वनावनौ पिपासाकुलो लतापरिवृतं शीतलं नदसलिलं पिबन्नुज्ज्वलाकारं रत्नं तत्रैकमद्राक्षम् । तदादाय गत्वा कंचनाध्वानमम्बरमणेरत्युष्णतया गन्तुमक्षमो वनेऽस्मिन्नेव किमपि देवतायतनं प्रविष्टो दीनाननं बहुतनयसमेतं स्थविरमहीसुरमेकमवलोक्यकुशलमुदितदयोऽहमपृच्छम् । कार्पण्यविवर्णवदनो महदाशापूर्णमानसोऽवोचदग्रजन्मा महाभाग, सुतानेतान्मातृहीनाननेकैरुपायैः रक्षन्निदानीमस्मिन् कुदेशे भैक्ष्यं संपाद्य दददेतेभ्यो वसामि शिवालयेऽस्मिन्' इति ।

हिन्दी अर्थ—हे देव ! आपके चरणकमलों की सेवा का इच्छुक मैंने घूमते हुए एक जंगल में, प्यास से व्याकुल होकर, लताओं से घिरे हुए, एक नदी के ठंडे पानी को पीते हुए, वहाँ पर एक सुन्दर रत्न को देखा । उस रत्न को लेकर कुछ रास्ता तय करके, सूर्य की अत्यन्त गर्मी के कारण चलने में असमर्थ होता हुआ, इसी जंगल में किसी देवालय

में प्रवेश करके, दयाद्रवित होते हुए मैंने, बहुत से पुत्रों से घिरे हुए, वृद्ध एवं दीनमुख वाले एक ब्राह्मण को देखकर उससे कुशल प्रश्न किये। दीनता से मलिन वदन वाले तथा बड़ी (कुछ प्राप्त होने की) आशाओं से पूर्ण चित्त वाले उस ब्राह्मण ने कहा—'हे महाभाग! इन मातृविहीन बच्चों का अनेक उपायों से पालन करता हुआ, इस समय इसी निकृष्ट स्थान में भिक्षावृत्ति करके इन बच्चों को खिलाता हुआ मैं इसी शिव-मन्दिर में रहता हूँ।

संस्कृतव्याख्या :—देव = राजन्! भवच्चरणकमल सेवाभिलाषीभूतः = भवतः तव चरणकमलयो पादारविन्दयोः सेवायां शुश्रूषां अभिलाषीभूतः अभिलाषोपेतः, अहं, भ्रमन् = अटन्, एकस्यां वनावनौ = काननभूमौ, पिपासाकुलः = तृष्णापरवशः, लतापरिवृतम् = लताभिः वल्लीभिः परिवृतम् आवृतम्, शीतलम् = उष्णतारहितम्, नदसलिलम् = सरित्पानीयम्, पिबन् = पानं कुर्वन्, उज्ज्वलाकारम = भास्वरम्, रत्नम् = मणिम्, तत्र = कानने, अद्राक्षम् = अपश्यम्। तत् = मणिम्, आदाय = गृहीत्वा, गत्वा = यात्वा, अध्वानम् = मार्गम् अम्बरमणेः = सूर्यस्य, अत्युष्णतया = उष्णताधिक्येन, गन्तुम् = यातुम्, अक्षमः = असमर्थः, वने = विपिने, देवायतनम् = देवालयम्, प्रविष्टः = सुप्रविष्टः, दीनाननम् = दीनवदनम्, बहुतनयसमेतम् = बहुपुत्रोपेतम, स्थविरमहीसुरम् = वृद्धब्राह्मणम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, कुशलम् = अनामयम, उदितदयः = दयाद्रवितः, अहम् = सोमदत्तः, अपृच्छम् = पृष्टवान्, कार्पण्य विवर्णवदनः = कार्पण्येन दीनतया विवर्णं मलीमसं वदनं मुखं यस्य सः, महदाशापूर्णमानसः = महं ददाति महो वा ददाति महदा अथवा महति कार्ये या आशा पूर्णं परिपूर्णं मानसं मनो यस्य सः, अग्रजन्मा = ब्राह्मणः, अवोचत् = अवदत्, महाभाग = महाराज! सुतान् = पुत्रान्, एतान् = पुरोवर्तमानान्, मातृहीनान् = जननीरहितान्, अनेकैः = बहुभिः, उपायैः = साधनैः, रक्षन् = परिपालयन्, कुदेशे = निकृष्ट प्रदेशे, भैक्ष्यम् = भिक्षावृत्या गृहीतमन्नादिकं संपाद्य = कृत्वा, ददत = प्रददत्, एतेभ्यः = पुत्रेभ्यः, शिवालये = शिवमन्दिरे, अस्मिन् = पुरोवर्तमाने, वसामि = निवसामि।

टिप्पणी—भ्रमन् = घूमता हुआ- भ्रम + शतृ। महदाशापूर्णमानसः = महती आशा से परिपूर्ण मन वाला।

व्याकरण की दृष्टि से समास हो जाने पर "महाशा पूर्णं मानसः" ही प्रयोग बनेगा क्योंकि "आन्महतः समानाधिकरणजातीययोः" सूत्र से आत्व हो जायेगा। व्याकरण की दृष्टि से अशुद्ध है। प्रथम उच्छ्वास में प्रारम्भिक अवस्था में "ततः कदाचिन्नानाविध महदायुध नैपुण्य—" में भी यही अशुद्धि है। यदि इसमें "मह" शब्द को उत्सववाची मानकर "महं ददाति" इस अर्थ में "आतोऽनुपसर्गे कः" सूत्र से 'क' प्रत्यय करके "महदा' रूप आशा का विशेषण बनकर समाधान किया जा सकता है किन्तु यह कल्पना अति क्लिष्ट है जो सम्भवतः कवि को भी अभीष्ट नहीं है।

मह='उत्सव' "कम्पोऽथ क्षण उद्धर्षो मह उद्धव उत्सवः" पञ्चम उल्लास के अन्त में भी इसी प्रकार का प्रयोग किया गया है "महदाश्चर्यान्वितं राजानमभाषत"।

'भूदेव, एतत् कटकाधिपती राजा कस्य देशस्य, किं नामधेयः, किमत्रागमन कारणमस्य' इति पृष्टोऽभाषत महीसुरः। 'सौम्य, मत्तकालो नाम लाटेश्वरो देशस्यास्य पालयितुर्वीरकेतोस्तनयां वामलोचनां नाम तरुणीरत्नमसमान लावण्यं श्रावं श्रावमवधूतदुहितृ प्रार्थनस्य तस्य नगरीमरौत्सीत्। वीरकेतुरपि भीतो महदुपायनमिव तनयां मत्तकालायादात्। तरुणीलाभ हृष्टचेता लाटपतिः 'परिणेया निजपुर एव' इति निश्चित्य गच्छन्निजदेशं प्रति संप्रति मृगयादरेणात्र वने सैन्यावासमकारयत्। कन्यासारणे नियुक्तो मानपालो नाम वीरकेतुमन्त्री मानधनश्चतुरङ्ग बलसमन्वितोऽन्यत्र रचितशिविरस्तं निजनाथावमानखिन्नमानसोऽन्तर्बिभेद' इति।

हिन्दी अर्थ—'भो ब्राह्मण! इस सेना का स्वामी किस देश का राजा है और उसका क्या नाम है। और यहाँ पर आने का क्या कारण है, यह पूछने पर ब्राह्मण बोला—हे सौम्य! लाट देश के राजा मत्तकाल ने, इस देश के प्रतिपालक राजा वीरकेतु की पुत्री वामलोचना, जिसका नाम था जो असाधारण सौन्दर्य वाली एवं तरुणियों में रत्न स्वरूप थी, उसकी प्रशंसा सुनकर के, (मत्तकाल की) पुत्री-प्राप्ति की अभिलाषा को ठुकराने वाले वीरकेतु की नगरी का (मत्तकाल) ने घेराव किया। भयातुर होकर वीरकेतु ने भेंट के तुल्य अपनी पुत्री वामलोचना को मत्तकाल को

दे दिया। स्त्रीलाभ से प्रसन्न होकर लाटाधिपति 'इसका पाणिग्रहण अपने ही नगर में होना चाहिए' यह विचार कर अपने देश को जाते हुए इस समय शिकार की इच्छा से उसने इस जंगल में सेना को ठहराया।

कन्यारूपधनवाले वीरकेतु के आदेश से नियुक्त मानपाल नामक उसी वीरकेतु के मन्त्री ने भी अपनी चतुरंगिणी सेना के साथ, अपने स्वामी के अपमान से खिन्नमनस्क होकर, अन्यत्र पड़ाव डालकर उनमें बुद्धिभेद पैदा कर दिया है।

संस्कृतव्याख्याः—भूदेव=भो महीसुर !, एतत्कटकाधिपतिः=एतस्य पुरो वर्तमानस्यः कटकस्य सेनाया. अधिपतिः स्वामी, राजा=नृपः, देशस्य=प्रदेशस्य, राज्यस्य वा, किं नामधेयः=किन्नाम सः, अस्य=राज्ञः, अत्र=अस्मिन् स्थाने, आगमनकारणम् = समागम निमित्तम्, महीसुरः=ब्राह्मणः, अभाषत=अवदत्, सौम्य=सुभग ! मत्तकालो नाम=तन्नामधेयः, लाटेश्वरः = लाटाधिपतिः, अस्य=एतस्य, देशस्य=प्रदेशस्य, पालयितुः=रक्षकस्य वीरकेतोः=तन्नामकस्य, तनयाम्=पुत्रीम् वामलोचनाम्=तन्नामिकाम्, तरुणीरत्नम्=स्त्रीमणिम्, असमान लावण्यम् असमानं अनुपमं लावण्यम् सौन्दर्यं यस्य तत्, श्रावम् श्रावम्=पौनःपुन्येन श्रुत्वा, अवधूत दुहितृ प्रार्थनस्य=अवधूता अपाकृता अस्वीकृतावा दुहितुः कन्यकायाः प्रार्थना अभ्यर्थना येन तस्य, तस्य=वीरकेतोः, नगरीम्=पुरीम्, अरौत्सीत्=अभियुयोज, अवरोधं कृतवानित्यर्थः, वीरकेतुः=तन्नामकः, भीतः=भयान्वितः, महत्=विशालम्, उपायनम्=प्राभृतम्, इव=सदृशम्, तनयाम् = तनूजाम्, मत्तकालाय=लाटेश्वराय, अदात्=दत्तवान्, तरुणीलाभ हृष्टचेता=तरुणीलाभेन कान्तालाभेन हृष्टं प्रसन्नं चेतः चितं यस्य लाटपतिः, लाटेश्वरः, परिणेया=विवाह्या, निजपुरे एव=स्वनगरे एव, इति=इत्थं, निश्चित्य=सुविचार्य, गच्छन्=व्रजन्, निजदेशं प्रति=स्वकीयं देशं प्रति, सम्प्रति = इदानीम्, मृगयादरेण=मृगयाविलासेन, अत्र = अस्मिन् स्थाने, वने = कानने, सैन्यावासाम्=सेनाशिविरम् अकारयत्=कारितवान्, कन्यासारेण=कन्या एव पुत्री एव सारः धनं यस्य तेन, नियुक्तः=अधिकृतः मानपालो नाम=तन्नामधेयः, वीरकेतुमन्त्री=वीरकेतु सचिवः, मानधनः, मान एव सम्मान एव धनं द्रव्यं यस्य सः, चतुरङ्गबल समन्वितः=चतुरङ्गबलेन=गजतुरगरथपदा-

तिरूप चतुरंगसेनया समन्वितः उपेतः अन्यत्र=अन्यस्मिन् स्थाने, रचित शिबिरः=रचितम् विरचितं शिबिरं सैन्यावासः येन तेन, तम्=मत्तकालम्, निजनाथावमानखिन्नमानसः=निजस्यस्वकीयस्य नाथस्य स्वामिनः अवमानेन अपमानेन खिन्नं मलीमसं मानसं मनः यस्य सः, अन्तर्विभेद=आभ्यन्तरिक भेदं कृतवान्।

टिप्पणीः—श्रावम् श्रावम्=वार-वार सुनकर=आभीक्ष्ण्ये णमुल च सूत्र से पौनः पुन्य अर्थ में णमुल प्रत्यय हो जाता है। परिणेया=परि+णीञ् प्रापणे धातु से यत् प्रत्यय कन्यासारेण=यहाँ पर सार शब्द घन के अर्थ में है—"सारो बले स्थिरांशे च मज्ज्ञि पुंसि जले घने" इति मेदिनीकोषः। देशं प्रति=द्वितीया विभक्ति = अभितः परितः समया—इत्यादि सूत्र से उपायनमिव=उपमा अलंकार।

विप्रोऽसौ बहुतनयो विद्वान्निर्धनः स्थविरश्च दानयोग्य इति तस्मै करुणापूर्णमना रत्नमदाम्। परमाह्लाद विकसिताननोऽभिहितानेकाशीः कुत्रचिदग्रजन्मा जगाम। अध्वश्रमखिन्नेन मया तत्र निरवेशि निद्रासुखम्। तदनुपश्चात् निगडित बाहुयुगलः सभूसुरः कशाघातचिह्नत गात्रोऽनेकनैस्त्रिंकानुयातोऽभ्येत्य माम् 'असौ दस्युः' इत्यदर्शयत्। परित्यक्त भूसुरा राजभटाः रत्नावाप्ति प्रकारं मदुक्तमनाकर्ण्य भयरहितं मां गाढं नियम्य रज्जुभिरानीय कारागारं 'एते तव सखायः' इति निगडितान् कांश्चिन्निर्दिष्टवन्तो मामपि निगडितचरणयुगलमकार्षुः। किंकर्तव्यतामूढेन निराशक्लेशानुभवेनावोचि मया—'ननु पुरुषा वीर्यपरुषाः, निमित्तेन केन निर्विशथ कारावासदुःखं दुस्तरम्। यूयं वयस्या इति निर्दिष्टमेतैः, किमिदम्' इति।

हिन्दी अर्थ—यह ब्राह्मण बहुत से पुत्रों वाला, विद्वान् निर्धन वृद्ध है अतः दान के योग्य समझ कर मैंने करुणार्द्र होकर उसे रत्न दिया। अत्यन्त आनन्द से प्रसन्न वदन वह ब्राह्मण अनेक आशीर्वाद देकर कहीं चला गया। मार्ग चलने के श्रम के कारण मैं वहाँ पर सो गया। इसके पश्चात् कोड़ों की चोट से चिह्नित शरीर वाला तथा पीछे की ओर दोनों बंधे हुए हाथों वाला, अनेक शस्त्रधारी पुरुषों से अनुगत वह ब्राह्मण मेरे

पास आकर तथा मुझे 'यह डाकू है' ऐसा कहकर दिखाया। उन राजसेवकों ने उस ब्राह्मण को छोड़ कर मेरे रत्न प्राप्ति के प्रकार को अनसुनी करके निर्भय मुझे अच्छी प्रकार से रस्सियों से जकड़ करके, जेल में लाकर 'ये तुम्हारे मित्र हैं।" इस प्रकार जकड़े हुए कुछ लोगों को दिखा कर मेरे दनों पैरों को जकड़ दिया (वेड़ी डाल दी)। मैंने, किंकर्तव्यविमूढ़ होकर तथा निराशापूर्वक क्लेश का अनुभव करते हुए, कहा—हे कठोर पराक्रम वाले पुरुषो! तुम लोग क्यों इस जेल के कठिन दुःख को झेल रहे हो। तुम लोग मित्र हो ऐसा इन राजपुरुषों ने कहा है। इसका क्या तात्पर्य है।

संस्कृतव्याख्या :—विप्रः=ब्राह्मणः, असौ=अयम्, वहुतनयः=वहवः अधिकाः तनयाः पुत्राः यस्य सः, विद्वान्=धीमान्, निर्धनः=अकिञ्चनः, स्थविरः=वृद्धः, दानयोग्यः=दानीयः, तस्मै=विप्राय, करुणापूर्णमना= करुणापूर्णं सदयं मनः हृदयं यस्य सः, रत्नम्=महामाणिम्, अदाम्= दत्तवान्, परमाह्लाद विकसिताननः=परमाह्लादेन परमामोदेन विकसितं प्रसन्नं आननं मुखं यस्य सः, अभिहितानेकाशीः=अभिहिता प्रदत्ताः अनेकाः अधिकाः आशिषः आशीर्वचांसि येन सः, कुत्रचिद्=क्वचित्, जगाम=ययौ, अग्रजन्मा=ब्राह्मणः, अध्वश्रमखिन्नेन=अध्वनः मार्गस्य श्रमेण परिश्रमेण खिन्नः उद्विग्नचित्तः तेन, मया=सोमदत्तेन, तत्र=देवायतने, निरवेशि =उपभुक्तम्, निद्रासुखम्=प्रमीला सुखम् अस्वपमिति भावः, तदनु= तदनन्तरम्, पश्चात्=पृष्ठभागे निगडित बाहुयुगलः= निगडितं सुबद्धं वाहुयुगलं भुजद्वन्द्वं यस्य सः, सः=पूर्वोक्तः, भूसुरः=ब्राह्मणः, कशाघात-चिन्हितगात्रः = कशाघातैः कशा प्रहारैः चिन्हितं सव्रणमित्यर्थः गात्रं शरीरं यस्य सः, अनेकनैस्त्रिंशिकानुयातः=अनेकैः बहुभिः नैस्त्रिंशिकैः अस्त्रशस्त्र धारिभिः पुरुषैः सायुधैरित्यर्थः, अनुयातः, अनुगतः, अभ्येत्य= समीपं आगम्य, माम्=सोमदत्तम्, असौ=अयम्, दस्युः=लुण्ठकः चौरो वा, इति, अदर्शयत्=दर्शनं अकारयत्। परित्यक्त भूसुराः=परित्यक्तः बन्धान्मुक्तः, भूसुरः ब्राह्मणः, थैस्ते, राजभटाः = राजपुरुषाः इत्यर्थः, रत्नावाप्तिप्रकारम्=रत्नोपलब्धि वृत्तान्तम् अनाकर्ण्य=अश्रुत्वा, मदुक्तम्, मया कथितम्, भयरहितम्=भीतिविरहितम् माम्=सोमदत्तम्=गाढम् =सुदृढम्, नियम्य=बद्ध्वा, रज्जुभिः=गुणैः, आनीय=आनयनं कृत्वा,

कारागारम्=वन्दीगृहं, एते=इमे, तव = भवतः, सखायः = मित्राणि, निगडितान्=आबद्धान्, निर्दिष्टवन्तः=प्रदर्शयन्त इति भावः, मामपि=सोमदत्तमपि, निगडितचरणयुगलम् = निगडितपाद द्वन्द्वम्, अकार्षुः=अकुर्वन्, किंकर्तव्यतामूढेन=किं कर्तव्यमित्य जानता, निराशक्लेशानुभवेन निराशदुःखानुभवेन, अवोचि = उक्तम्, मया=सोमदत्तेन, पुरुषाः=मनुष्या, वीर्यपरुषाः=वीर्येण पराक्रमेण परुषाः कठोराः, केननिमित्तेन=केन कारणेन, निर्विशथ=अनुभवथ, कारावासदुःखम् = कारागारदुखम्, दुस्तरम्=सोढुमशक्यमिति भावः, यूयम्=भवन्तः इत्यर्थः, वयस्याः=मित्राणि, एतैः=राजपुरुषैः, निर्दिष्टम्=कथितम्, किमिदम्=किं कारणम्, कितात्पर्यमित्यर्थः।

टिप्पणी—अदाम्=दिया, दा धातु लुङ् लकार, उ० पु०, ए० व० कक्षा=कोड़ा या चाबुक=‘अश्वादेस्ताडनी कशा’ इत्यमरः नैस्त्रिशिक=निस्त्रिंश (तलवार) जिनका प्रहरण है इस अर्थ में=प्रहरणम,’ ४।४।५७ सूत्र ठक् एवं इकादि होता है। निरवेशि, निर्विशथ=निर्+विश ‘प्रवेशने’ किन्तु उपसर्गत्वात् भोगना या आनन्दलेना इस अर्थ में प्रयोग होती है।

तथाविधं मामवेक्ष्य भूसुरान्मया श्रुतं लाटपतिवृत्तान्तंव्याख्याय चोरवीराः पुनरवोचन्—‘महाभाग! वीरकेतुमन्त्रिणो मानपालस्य किंकरावयम्। तदाज्ञया लाटेश्वरमारणाय रात्रौ सुरुङ्गाद्वारेण तदगारं प्रविश्य तत्र राजाभावेन विषण्णा बहुधनमाहृत्य महाटवीं प्राविशाम। अपरेद्युश्च पदान्वेषिणः राजानुचराः बहवोऽभ्येत्य धृतधनंचयानस्मान् परितः परिवृत्य दृढतरं बद्ध्वा निकटमानीय समस्त वस्तुशोधनवेलायामेकस्यानर्घ्यरत्नस्याभावेनास्मद्वधाय माणिक्यादानादस्मान् किलाश्रृङ्खलयन्’ इति। श्रुतरत्नरत्नावलोकन स्थानोऽहम् “इदं तदेवमाणिक्यम्” इति निश्चित्य भूदेवदाननिमित्तां दुरवस्थामात्मनो जन्म नामधेयं युष्मदन्वेषणपर्यटन प्रकारं चाभाष्य समयोचितैः संलापैर्मैत्रीमकार्षम्। ततोऽर्धरात्रे तेषां मम च श्रृंखलाबन्धनं निर्भिद्य तैरनुगम्यमानो निद्रितस्य द्वाःस्थगणस्यायुध जालमादाय पुररक्षान् पुरतोऽभिमुखागतान् पटुपराक्रमलीलयाभिद्राव्य मानपालशिविरं प्राविशम्। मानपालो निजकिंकरेभ्यो मम कुलाभिमान वृत्तान्तं तत्कालीनं विक्रमं च निशम्य मामार्चयत्।

हिन्दी अर्थ—मुझे उस दशा में देखकर तथा मेरे द्वारा ब्राह्मण के मुख से सुने हुए लाटपति के वृत्तान्त को कहकर वे चोरगण बोले—'हे महाभाग ! हम लोग वीरकेतु के मन्त्री मानपाल के सेवक हैं। उन्हीं की आज्ञा से लाटाधिपति को मारने के लिए सुरंग के द्वारा उनके भवन में गये किन्तु राजा को न पाकर खिन्न होकर उसका बहुत सा धन चुराकर एक जंगल में चले गये। दूसरे दिन पैरों के चिह्नों के अनुसार खोजते हुए बहुत से राजपुरुष आकर के धन सहित हम लोगों को पकड़ करके तथा अच्छी प्रकार से बांध करके राजा के समीप में लाकर, समस्त वस्तुओं के खोजने में 'तलाशी लेने में' एक अमूल्य रत्न न मिलने के कारण रत्न को प्राप्त करने के लिए हम लोगों को वध के लिए (जबतक मणि न मिले, तबतक के लिए) जंजीरों से जकड़ दिया। उस रत्न के विषय में तथा उसकी प्राप्ति स्थान को श्रवण करके, 'यह वही रत्न है इस प्रकार का निश्चय कर, ब्राह्मण को दान देने के कारण इस दुरवस्था को प्राप्त करके, अपना जन्म, नाम तथा आपको खोजने का वृत्तान्त बताकर, समयानुकूल बात चीत के साथ उन लोगों (चोरों) के साथ मित्रता कर ली। इसके पश्चात् आधी रात में उनकी तथा अपनी जंजीरे तोड़कर उन चोरों के द्वारा अनुगम्यमान होता हुआ मैं सोते हुए द्वारपाल समुदाय के अस्त्रों को लेकर, सामने मार्ग में आये हुए पुर के रक्षकों को पराक्रम से हराकर मानपाल के शिविर में घुसा। मानपाल ने अपने सेवकों से मेरे कुल, अभिमान तथा तत्कालीन पराक्रमको सुनकर मेरी पूजा की।

संस्कृतव्याख्या—तथाविधं = तथाप्रकारम्, माम् = सोमदत्तं, अवेक्ष्य = दृष्ट्वा, भूसुरात् = विप्रात्, मया = सोमदत्तेन, श्रुतम् = आकर्णितम्, लाटपतिवृत्तान्तम् = लाटपतेः लाटाधिपस्य वृत्तान्तं उदन्तम्, व्याख्याय = कथयित्वा, चोरवीराः = चोराश्च ते वीराः चोरवीराः परिपन्थिन इत्यर्थः, पुनः = भूयः अवोचन् = अवदन्, महाभाग = महैश्वर्यशालिन् ! वीरकेतुमन्त्रिणः = वीरकेतुसचिवस्य, मानपालस्य = तन्नामकस्य, किंकराः = सेवकाः, तदाज्ञया = मानपालादेशेन, लाटेश्वरमारणाय = लाटाधिपतिवधाय, रात्रौ निशायाम्, सुरुङ्गाद्वारेण = विलाध्वना, तदगारम् = लाटेश्वरभवनम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, तत्र = भवने, राजाभावेन = राज्ञः नृपस्य अभावेन

अनुपस्थित्या, विषण्णाः = खिन्नाः, बहुधनम् = प्रचुरद्रव्यम्, आहृत्य = आदाय, महाटवीम् = महारण्यम्, प्रवेशं अकरवाम, अपरेद्युः = अन्येद्युः पदान्वेषिणः = चरणचिन्हगवेषकाः, राजानुचराः = राज्ञः लाटेश्वरस्य अनुचराः भृत्याः, बहवः = बहुसंख्यकाः, अभ्येत्य = आगत्य, धृतधनचयान् = धृतः गृहीतः धनचयः रत्नसमूहः यैस्तान्, परितः = सर्वतः, दृढतरम् = सुदृढम्, बद्ध्वा = निगडीकृत्य, निकटमानीय = समीपमानीय, समस्तवस्तु शोधनवेलायाम् = समस्तानां निखिलानां वस्तूनां रत्नादि विविधपदार्थानां शोधनस्य अन्वेषणस्य वेलायां काले, एकस्य, अनर्घ्यरत्नस्य = बहुमूल्यमणेः, अभावेन = अनुपस्थित्या, अस्मद्वधाय = अस्मन्मारणाय, माणिक्यादानात् = माणिक्यदानपर्यन्तमित्यर्थः, अशृंखलयन् = निगडितानकुर्वन्, श्रुतरत्नावलोकन स्थानः = श्रुतं रत्नस्य महामणेः तदवलोकनस्य स्थानं येन सः, इदम् = एतद्, तदेव, माणिक्यम् = महारत्नम्, निश्चित्य = निश्चयं कृत्वा, भूदेवदान निमित्ताम् = भूदेवाय विप्राय दानमेव निमितं कारणं यस्या सा ताम्, दुरवस्थाम् = दुर्दशाम्, आत्मनः = स्वकीयस्य, जन्म = जनिः, नामधेयम् = अभिधानम्, युष्मदन्वेषणपर्यटनप्रकारम् = भवदन्वेषणस्य पर्यटन प्रकारम् भ्रमणविधिम्, आभाष्य = उक्त्वा, समयोचितैः = समयानुकूलैः, संलापैः = वार्तालापैः, मैत्रीम् = मित्रताम्, अकार्षम् = अकरवम्, ततः = तदनन्तरम्, अर्धरात्रे = निशीथकाले, तेषाम् = चौराणाम्, मम = सोमदत्तस्य, शृंखलाबन्धनम् = लोहशृंखलाबन्धम्, निर्भिद्य = भङ्क्त्वा, तैः = चौरैः अनुगम्यमानः = अनुगमनं क्रियमाणः, निद्रितस्य = प्रसुप्तस्य, द्वाः स्थगणस्य = द्वारपाल समूहस्य, आयुधजालम् = अस्त्रसमूहम्, आदाय = गृहीत्वा, पुररक्षान् = नगररक्षकान्, पुरतः = अग्रतः, अभिमुखागतान् = सम्मुखागतान्, पटुपराक्रमलीलया = पटुः समर्थः पराक्रमः विक्रमः तस्य लीला हेला तया, अभिप्राप्य = प्रपलाय्य, मानपालशिविरम् = मानपालवसतिम्, प्राविशम् = प्रवेशमकरवम्, मानपालः = तन्नामकः, निजकिंकरेभ्यः = स्वभृत्येभ्य मम = सोमदत्तस्य, कुलाभिमानवृत्तान्तम् = वंशाभिमानवृत्तान्तम्, तत्कालीनम् = तत्सामयिकम्, विक्रमम् = पराक्रमम्, निशम्य = श्रुत्वा, माम् = सोमदत्तम्, आर्चयत् = अर्चनं कृतवान् ।

टिप्पणी—प्राविशाम=प्रवेश किया, प्र + विश् + लङ् लकार उ० पु० बहु० । आहृत्य=चुराकर, आ + हृ + क्त्वा + ल्यप् ।

परेद्युर्मत्ताकालेन प्रेषिताः केचन पुरुषाः मानपालमुपेत्य 'मन्त्रिन्' मदीयराजमन्दिरे सुरुङ्गया बहुधनमपहृत्य चोरवीरा भवदीयं कटकं प्राविशन्, तानर्पय । नो चेन्महाननर्थः भविष्यति' इति क्रूरतरं वाक्यमब्रुवन् । तदाकर्ण्य रोषारुणितनेत्रो मन्त्री लाटपतिः कः, तेन मैत्री का, पुनरस्य वराकस्य सेवया किं लभ्यम्' इति तान्निरभर्त्सयत् । ते च मानपालेनोक्तं विप्रलापं मत्तकालाय तथैव अकथयन् । कुपितोऽपि लाटपतिर्दोर्वीर्यं गर्वेणाल्पसैनिकसमेतो योद्धुमभ्यगात् । पूर्वमेव कृतरणनिश्चयो मानी मानपालः संनद्धयोधो युद्धकामो भूत्वा निःशंकं निरगात् । अहमपि सबहुमानं मन्त्रिदत्तानि बहुलतुरंगमोपेतं चतुरसारथिं रथं च दृढतरं कवचं मदनुरूपं चापं च विविधबाणपूर्णं तूणीर द्वयं रणसमुचितान्यायुधानि गृहीत्वा युद्धसंनद्धो मदीय बलविश्वासेन रिपूद्धरणोद्युक्तं मन्त्रिणमन्वगाम् परस्पर मत्सरेण तुमुलसंगरकरमुभयसैन्यमतिक्रम्य समुल्लसद् भुजाटोपेन बाणवर्षं तदङ्गे विमुञ्चन्नरातीन् प्राहरम् ।

हिन्दी अर्थ—दूसरे दिन मत्ताकाल के द्वारा भेजे हुए कुछ पुरुषों ने मानपाल के पास आकर हे मन्त्रिन् ! मेरे राजमन्दिर में सुरङ्ग के द्वारा प्रवेश करके तथा बहुत-सा धन चुराकर चोर वीरों ने आपकी सेना में प्रवेश किया है उन्हें आप मुझे सौंप दीजिए, नहीं तो, बड़ा अनर्थ हो जायेगा ऐसे बड़े कठोर वाक्य कहे । यह सुनकर क्रोध के कारण लाल नेत्र वाले मानपाल ने कौन लाटपति ? कैसी उसके साथ मित्रता ? फिर उस नीच की सेवा से मुझे क्या लेना ? यह कह कर उनकी तीव्र भर्त्सना की । उन्होंने मानपाल के द्वारा कथित सारी वार्ता मत्ताकाल को वैसे ही बतादी । क्रुद्ध होकर लाटपति, अपनी भुजाओं के वीर्य के गर्व से थोड़े सैनिकों के साथ ही युद्ध के लिए निकल पड़ा पहले ही युद्ध का निश्चय कर लेने वाला मानी मानपाल निःशङ्क होकर युद्ध के लिए तैयार होकर योधाओं सहित निकल पड़ा । मैं बड़े सम्मान के साथ बहुत से अश्वों तथा चतुर सारथि से युक्त

रथ, सुदृढ़ कवच एवं मेरे योग्य धनुष और वाणों से युक्त दो तरकस तथा मन्त्री के द्वारा प्रदत्त अन्य युद्धोचित अस्त्र-शस्त्र लेकर, युद्ध के लिए कटिबद्ध होकर, मेरे बल के विश्वास से शत्रु को विनाश करने में उद्यत मन्त्री के साथ गया। परस्पर ईर्ष्या आदि के कारण भयंकर युद्ध के लिए तैयार दोनों सेनाओं को अतिक्रमण करके अपनी भुजाओं के आरोप से शत्रुओं के अंगों पर वाणों की वर्षा का प्रहार करने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—परेद्युः = अन्येद्युः, मत्तकालेन = तन्नामकेन, प्रेषिताः = सम्प्रेषिताः, पुरुषाः = मनुजाः, उपेत्य = उपगम्य, मन्त्रिन् = हे सचिव, मदीयराजमन्दिरे = अस्माकं राजभवने, बहुधनम् = प्रचुरद्रव्यम्, अपहृत्य = चोरयित्वा, चोरवीराः = लुण्ठकाः, तस्कराः वा, भवदीयं = त्वदीयं, कटकम् = सैन्यं शिविरमित्यर्थः, प्राविशन् = प्रवेशमकुर्वन्, तान् = सर्वान्, अर्पय = देहि, नो = नहि, चेत् = यदि, महान् = अत्यधिकः, अनर्थः = अहितम्, क्रूरतरम् = कठोरतरम्, वाक्यम् = वचनम्, अब्रुवन् = अकथयन्, तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, रोषारुषित नेत्रः = रोषेण कोपेन अरुणिते रक्ते नेत्रे चक्षुषी यस्य सः, मन्त्री = अमात्यः, कः = कीदृशः, तेन = लाटपतिना, मैत्री = मित्रता, वराकस्य = निम्नस्य, सेवया = शुश्रूषया, किम् = किम्प्रयोजनम् लभ्यम् = प्राप्तव्यम्, तान् = पुरुषान् निरभर्त्संयत् = भर्त्संनामकरोत्। ते = पुरुषाः, मानपालेन = तन्नामकेन, उक्तम् = कथितम्, विप्रलापम् = विरुद्धवचनम् मत्तकालाप = तन्नामकाय, अकथयन् = अवदन्, कुपितोऽपि, = क्रुद्धोऽपि, दोर्वीर्यगर्वेण = भुजदण्डपराक्रमावलेपेन, अल्पसैनिक समेतः = अल्पैः स्वल्पैः सैनिकैः भटैः समेतः उपेतः, योद्धुम् = युद्धाय, अगात् = अगच्छत्, पूर्वमेव = प्रथममेव, कृतरणनिश्चयः = कृतयुद्धनिश्चयः, मानी = सम्मानी, संनद्धयोधः = सन्नद्धाः कटिबद्धा योधाः भटाः यस्य सः, युद्धकामः = युद्धस्य समरस्य काम अभिलाषः यस्य सः, भूत्वा = सम्भूय, निःशंकम् = निर्विशङ्कम्, निरगात् = वहिरागच्छत, स बहुमानम् = समानम्, मन्त्रिदत्तानि = अमात्यप्रदत्तानि, बहुलतुरंगमोपेतम् = बहुलैः अधिकैः तुरंगमैः अश्वैः उपेतं समेतम्, चतुरसारथिम् = दक्षसूतम्, रथम् = स्यन्दनम्, दृढतरम् = सुदृढम्, कवचम् = वर्म, मदनुरूपम् = मदनुकूलम्, चापम् = शरासनम्, विविधबाणपूर्णम् = बहुविधशरोपेतम्, तूणीरद्वयम् इषुधि

द्वन्द्वम्, रणसमुचितानि=युद्धोचितानि, आयुधानि=प्रहरणानि, गृहीत्वा =आदाय, युद्धसन्नद्धः=युद्ध कटिबद्धः, मदीयबलविश्वासेन = अस्माकं शक्ति प्रत्ययेन, रिपूद्धरणोद्युक्तम् = रिपूणां शत्रूणां उद्धरणे विनाशे उद्युक्तं प्रवृत्तम्, मन्त्रिणम् = अमात्यम्, अन्वगाम = अन्वगच्छम्, परस्परमत्सरेण=अन्योन्येर्ष्याभावेन, तुमुलसंगरकरम् = तुमुलयुद्धकरम्, उभयसैन्यम् = उभयबलम्, अतिक्रम्य=विलंघ्य, समुल्लसद्भुजाटोपेन= समुल्लसतोः विभ्राजमानयोः भुजयोः दोर्दण्डयोः आटोपेन गर्वेण बाणवर्षम् =शरासारम्, तदङ्गे=सैनिकानामङ्गे, विमुञ्चन्=चालयन्, अरातीन्= शत्रून्, प्राहरम्=प्रहारमकरवम्।

टिप्पणी—अपहृत्य = अप+हृ+क्त्वा+ल्यप्। क्रूरतर=क्रूर+ तरप् प्रत्यय। अतिक्रम्य+अति+क्रम्=क्त्वा+ल्यप्।

ततोऽतिरय तुरंगमं मद्रथं तन्निकटं नीत्वा शीघ्रलंघनोपेततदीयरथोऽहमरातेः शिरः कर्तनमकार्षम्। तस्मिन् पतिते तदवशिष्टसैनिकेषु पलायितेषु नानाविधहयगजादिवस्तुजातमादाय परमानन्दसंभृतो मन्त्री ममानेकविधां सम्भावनामकार्षीत्। मानपाल प्रेषितात्तदनुचरादेनमखिलमुदन्त जातमाकर्ण्य सन्तुष्टमना राजाभ्युदगतो मदीयपराक्रमे विस्मयमानः समहोत्सवममात्यबान्धवानुमत्या शुभदिने निजतनयां मह्यमदात्। ततो यौवराज्याभिषिक्तोऽहमनुदिनमाराधित महीपालचित्तो वामलोचनयानया सह नानाविधं सौख्यमनुभवन् भवद् विरह वेदना शल्य सुलभवैकल्य हृदयः सिद्धादेशेन सुहृज्जनावलोकनफलं प्रदेशं महाकालनिवासिनः परमेश्वरस्याराधनायाद्य पत्नीसमेतः समागतोऽस्मि। भक्तवत्सलस्य गौरीपतेः कारुण्येन त्वत्पदारविन्दसंदर्शनानन्दसन्दोहो मया लब्धः' इति।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् अत्यन्त वेग से युक्त घोड़ो वाले अपने रथ को उसके समीप ले जाकर, शीघ्र दौड़ने से उसके रथ को प्राप्त करके, मैंने शत्रु (महाकाल) के शिर को काट दिया। उसके गिरजाने पर, उसके शेष सैनिकों के भाग जाने पर उसके नाना भाँति के गज-अश्वादि वस्तु समूह को प्राप्त करके, अत्यन्त आनन्दित होकर मन्त्री मानपाल ने मेरा अनेक प्रकार से सम्मान किया।

मानपाल के द्वारा प्रेषित सेवक से इस सम्पूर्ण वृत्तान्त को सुनकर प्रसन्न मन होकर तथा मेरे शौर्य पर आश्चर्य करते हुए राजा ने स्वागत हेतु आकर अपने मंत्री एवं भाइयों की अनुमति से शुभ दिन में अपनी पुत्री को मुझे दे दिया। इसके पश्चात् युवराज पद पर अभिषिक्त होकर मैं प्रतिदिन राजा के चित्त को प्रसन्न करता हुआ,उस सुन्दरी के साथ विभिन्न प्रकार के सुखों का अनुभव करता हुआ भी आपकी विरहवेदना रूपी कांटे से विकल चित्त होकर मैं, पत्नी के सहित, एक सिद्ध पुरुष की आज्ञा से, महाकाल निवासी भगवान् शंकर की पूजा के लिए आया, जहाँ मुझे मित्र का दर्शन रूप फल प्राप्त हुआ है। भक्तवत्सल भगवान् शंकर की कृपा से आपके चरण-कमल के दर्शन का परम आनन्द मैंने यहाँ प्राप्त किया।

संस्कृतव्याख्या।—ततः = तदनन्तरम्, अतिरयतुरंगमम् = अतिरयाः अति जवाः तुरंगमाः अश्वाः यस्मिन् तम्, मद्रथम् = स्वकीय स्यन्दनम्, तन्निकटम् = तत्समीपम्, नीत्वा = नयनं कृत्वा, शीघ्रलंघनोपेततदीयरथः = शीघ्रं द्रुतं लंघनेन आक्रमणेन उपेतः लब्धः तदीयरथः तदीयस्यन्दनः येन सः, अरातेः = शत्रोः, शिरः कर्तनम् = शिरश्छेदम्, अकार्षम् = अकरवम्, तस्मिन् = लाटपतौ, पतिते = मृते, तदवशिष्टसैनिकेषु = तच्शेषभटेषु, पलायितेषु धावितेषु, नानाविधहयगजादिवस्तु जातम् = नानाविधं बहुविधं हयगजादिवस्तु जातम् अश्वनागादिवस्तु समूहम्, आदाय = गृहीत्वा, परमानन्दसम्भृतः = हर्षनिर्भरः, मन्त्री = अमात्यः, अनेकविधाम् = बहुविधाम्, सम्भावनाम् = सम्मानम्, अकार्षीत् = अकरोत्, मानपाल प्रेषितात् = मानपाल सम्प्रेषितात्, तदनुचरात् = तत्सेवकात्, अखिलम् = सम्पूर्णम्, उदन्तजातम् = वृत्तान्तवृन्दम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, सन्तुष्टमना = प्रसन्नचेता, राजा = वीरकेतुः, अभ्युद गतः = समागतः, मदीयपराक्रमे = अस्माकं विक्रमे, विस्मयमानः आश्चर्यं कुर्वाणः, समहोत्सवम् = सोत्सवम्, अमात्यबान्धवानुमत्या = अमात्यानां मन्त्रिणां बान्धवानां भ्रातृणां अनुमत्या आज्ञया, शुभ दिने = शुभदिवसे, निजतनयाम् = स्वीपुत्रीम्, मह्यम् = सोमदत्ताय, अदात् = दत्तवान्, ततः = तदनन्तरम्, यौवराज्याभिषिक्तः = युवराजपदासीनः, अहम् = सोमदत्तः, अनुदिनम् = प्रतिदिनम्, अराधितमहीपालचित्तः = आराधितं समाराधितं महीपाल चित्तं नरपतिमनः येन सः, अनया = एतया, सह

साकम्, नानाविधम् = बहुविधम्, सौख्यम्=सुखम्, अनुभवन् = अनुभवं कुर्वन्, भवद् विरहवेदनाशल्यसुलभवैकल्यहृदयः = भवतः तव विरहवेदना एव विश्लेष व्यथा एव शल्यं शंकुः तेन सुलभं सुप्राप्यं वैकल्यं विकलता हृदये यस्य सः, सिद्धादेशेन=सिद्धाज्ञया, सुहृज्जनावलोकनफलम् = सुहृज्जनस्य मित्रमण्डलस्य अवलोकनमेव दर्शनमेव फलं प्रयोजनं यत्र तम्, प्रदेशम्=स्थानम्, महाकालनिवासिनः=उज्जयिनी नाम नगर्यां शिवस्थानम्, तन्नामकस्य इत्यर्थः, परमेश्वरस्य = शङ्करस्य, आराधनाय =पूजायै, अद्य=अस्मिन् दिने, पत्नीसमेतः = सस्त्रीकः, समागतोऽस्मि = आगतोऽस्मि, भक्तवत्सलस्य = भक्तप्रियस्य, गौरीपतेः = शिवस्य, कारुण्येन = करुणया, त्वद्पदारविन्दसंदर्शनानन्दसन्दोहः = तव भवतः पदारविन्दयोः चरणपद्मयोः सन्दर्शनेन अवलोकनेन या आनन्दः प्रमोदः तस्य सन्दोहः समूहः अतिशयो वा तस्य मया=सोमदत्तेन, लब्धः=प्राप्तः, ।

तन्निशम्यभिनन्दितपराक्रमो राजवाहनस्तन्निरपराधदण्डे दैवमुपालभ्य तस्मै क्रमेणात्मचरितं कथयामास ।

पुष्पोद्भवस्यागमनम् :—

तस्मिन्नवसरे पुरतः पुष्पोद्भवं विलोक्य ससम्भ्रमं निजनिटिलतटस्पृष्टचरणाङ्गुलिमुदञ्जलिममुं गाढमालिङ्ग्यानन्द वाष्पसंकुलसंफुल्ललोचनः 'सौम्य सोमदत्त ! अयं स पुष्पोद्भवः' इति तस्मै तं दर्शयामास । ते च चिरविरहदुःखं विसृज्यान्योन्यालिङ्गनसुखमन्वभूताम् ततस्तस्यैव महीरुहस्य छायायामुपविश्य राजा सादरहासमभाषत–'वयस्य, भूसुरकार्यं करिष्णु रहं मित्रगणो विदितार्थः सर्वथान्तरायं करिष्यतीति निद्रितान्भवतः परित्यज्य निरगाम् । तदनु प्रबुद्धोवयस्यवर्गः किमिति निश्चित्य मदन्वेषणाय कुत्र गतवान् भवानेकाकी कुत्र गतः' इति सोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः सविनयमलपत् ।

हिन्दी अर्थ—यह सुनकरके तथा सोमदत्त के पराक्रम की प्रशंसा करके निरपराधी को दण्ड देने के कारण भाग्य को उलाहना देकर उसे अपने चरित को बताया । उसी समय सामने अपने मस्तक पर राजवाहन की चरणांगुलियों को रखे हुए एवं हाथ जोड़े पुष्पोद्भव को देखकर तथा

उसका जोर से आलिंगन करके आनन्दाश्रुओं से विकसित नेत्रवाले राजवाहन ने (कहा) 'सौम्य, सोमदत्त ! यही वह पुष्पोद्भव है' यह कह कर उसे दिखाया। दोनो चिरकाल के विरह दुःख को त्यागकर उन दोनों ने एक दूसरे के आलिंगन का सुख प्राप्त किया। इसके बाद उसी वृक्ष के नीचे छाया में बैठकर राजा ने आदरयुक्त हास के साथ कहा—'मित्र ! ब्राह्मण के कार्य को करने की इच्छा वाला मैं, मित्रगण इसे जानकर बाधक सिद्ध होंगे अतः सोते हुए आप लोगों को छोड़कर चलागया। इसके पश्चात् जगे हुए मित्र समुदाय ने क्या निश्चय किया और मुझे खोजने के लिए कहा गया ? आप अकेले कहाँ गये ? इस प्रकार पूछा ! पुष्पोद्भव ने भी विनयपूर्वक शिर पर हाथों को लगाकर (अर्थात् हाथ जोड़ कर) कहा—

संस्कृतव्याख्या :—तन्निशम्य = तच्छ्रुत्वा, अभिनन्दितपराक्रमः = अभिनन्दितः प्रशंसितः पराक्रमः शौर्यं येन सः, राजवाहनः = तन्नामकः, तन्निरपराधदण्डे = तस्य सोमदत्तस्य निरपराधदण्डे अपराधाभावेऽपि दण्डविषये, दैवम् = भाग्यम्, उपालभ्य = विनिन्द्य, गर्हित्वा वा, तस्मै = सोमदत्ताय क्रमेण = क्रमशः, आत्मचरितम् = स्वकीयवृत्तम्, कथयामास = कथितवान्, तस्मिन्नवसरे = तत्काले, पुरतः = समक्षे, पुष्पोद्भवम् = तन्नामकम्, विलोक्य = अवलोक्य, ससम्भ्रमम् = साश्चर्यम्, निजनिटिलतटस्पृष्टचरणोङ्गुलिम् = निजस्य स्वस्य निटिलस्य ललाटस्य तटे प्रदेशे स्पृष्टाः संस्पृष्टाः चरणाङ्गुलयः पादाङ्गुलयः येन तम्, उदञ्जलिम् = बद्धाञ्जलिम्, गाढम् = सुदृढम्, आलिङ्ग्य = आलिंगनं कृत्वा, आनन्दबाष्पसंकुल सम्फुल्ल लोचनः = आनन्दबाष्पैः हर्षाश्रुभिः संकुले परिव्याप्ते संफुल्लेविकसिते लोचने नयने यस्य सः, सौम्य = भद्र, तस्मै = सोमदत्ताय, दर्शयामास = प्रदर्शयामास, तौ = सोमदत्तपुष्पोद्भवौ, चिरविरहदुःखम् = चिरवियोगव्यथाम्, विसृज्य = परित्यज्य, अन्योन्यालिंगनसुखम् = परस्परालिंगनानन्दम्, अन्वभूताम् = अनुभवं अकुरुताम्। ततः = तदनन्तरम्, महीरुहस्य = वृक्षस्य, छायायाम् = अनातपे, उपविश्य = स्थित्वा, राजा = राजवाहनः, सादरहासम् = सादरः समानः हासः स्मितं यस्मिन् तत्, अभाषत = अकथयत्, वयस्य = मित्र, भूसुरकार्यम् = ब्राह्मण कार्यम्, करिष्णुः = कर्तुमिच्छुः, मित्रगणः—

सुहृद्समुदायः, विदितार्थः = ज्ञातार्थः, सवर्थान्तरायम् = सर्वथाविघ्नम्, निद्रितान् = प्रसुप्तान्, भवतः = युष्मान्, परित्यज्य = त्यक्त्वा, निरगाम् = वहिरागच्छम् तदनु = तदनन्तरम्, प्रबुद्धः = जागरितः, वयस्यवर्गः मित्र-वर्गः, निश्चित्य = निश्चयं कृत्वा, मदन्वेषणाय = मद्गवेणाय, कुत्र = क्व, गतवान् = गतः, भवान् = त्वम् कुत्र = क्व, गतः = यातः, सोऽपि = पुष्पोद्भवोऽपि ललाटतटचुम्बदञ्जलिपुटः = ललाटतटं निटिलस्थलं चुम्बद् परिचुम्बद अञ्जलिपुटं यस्य सः, सविनयम् = विनयपूर्वकम् अलपत् = अभाषत ।

॥ तृतीय उच्छ्वास समाप्त ॥

अथ चतुर्थ उच्छ्वासः

पुष्पोद्भवचरितम् —

देव, महीसुरोपकारायैव देवो गतवानिति निश्चित्यापि देवेन गन्तव्यं देशं निर्णेतुमशक्नुवानो मित्रगणः परस्परं वियुज्य दिक्षु देवमन्वेष्टुमगच्छत् ।

अतर्कितः सँगमः —

अहमपि देवस्यान्वेषणाय महीमटन् कदाचिदम्बरमध्यगतस्याम्बरमणेः किरणमसहिष्णुरेकस्य गिरितटमहीरुहस्य प्रच्छाय-शीतले तले क्षणमुपाविशम् । मम पुरोभागे दिनमध्यसंकुचितसर्वावयवां कूर्माकृतिं मानुषच्छायां निरीक्ष्योन्मुखो गगनतलान्महारयेण पतन्तं पुरुषं कञ्चिदन्तराल एव दयोपनतहृदयोऽहमवलम्ब्य शनैरवनितले निक्षिप्य दूरापातवीतसंज्ञं तं शिशिरोपचारेण विबोध्य शोकातिरेकेणोद्गतबाष्पलोचनं तं भृगुपतनकारणमपृच्छम् ।

शब्दार्थ—अम्बरमणिः = सूर्य । प्रच्छाय = गहरी छाया (प्रकृष्टा छाया)।

हिन्दी अर्थ—हे राजन् ! आप ब्राह्मण के उपकार के लिए गये होंगे यह निश्चय करलेने पर भी मित्रगण (हम लोग) आपके गन्तव्य स्थान का निर्णय कर पाने में असमर्थ होकर, परस्पर पृथक् होकर दिशाओं में खोजने के लिए गये । मैं (पुष्पोद्भव) भी आपको खोजने के

लिए पृथिवी पर भ्रमण करता हुआ . किसी समय मध्याकाश मध्याह्न के सूर्य की किरणों को न सहन कर सकने वाला, पर्वत के किनारे पर स्थित शीतल छाया वाले वृक्ष के नीचे क्षणभर (आराम के लिए) बैठ गया। अपने सामने मध्याह्न होने के कारण संकुचित सम्पूर्ण अवयवों वाले कच्छप के समान आकृति वाली एक पुरुष की छाया को देखकर, ऊपर की ओर मुख करके, आकाशतल से महावेग से गिरते हुए किसी पुरुष को देखकर, दया द्रवित होकर बीच में ही पकड़कर, धीरे से पृथिवीतल पर रखकर, दूर से गिरने के कारण चेतना शून्य उसको (पुरुष को) शीतल उपचार से प्रबुद्ध करके, शोक के कारण अश्रुपूर्णनेत्रों वाले उससे टीले (पर्वत) से गिरने (कूदने) का कारण पूछा।

संस्कृतव्याख्या :—देव = राजन्, महीसुरोपकाराय = महीसुरस्य ब्राह्मणस्य उपकाराय हिताय, देवः = भवान्, गतवान् = यातः, इति = इत्थम्, निश्चित्य = निश्चयं कृत्वा, देवेन = भवता, गन्तव्यम् = यातव्यम्, देशम् = स्थानम्, निर्णेतुम् = अवधारयितुम्, अशक्नुवानः = कर्तुमसमर्थः, मित्रगणः = सुहृत समुदायः, परस्परम् = मिथः, वियुज्य = पृथग्भूय, दिक्षु = आशासु, देवम् = भवन्तम् अन्वेष्टुम् = अन्वेषणं कर्तुम्, अगच्छत् = गमनमकरोदित्यर्थः, अहमपि = पुष्पोद्भवोऽपि, देवस्य = भवतः, अन्वेषणाय = गवेषणार्थं, महीम् = भूमिम्, अटन् = भ्रमन्, कदाचित् = कदापि, अम्बर-मध्यगतस्य = आकाशमध्यस्थितस्य, अम्बरमणेः = रवेः, किरणम् = करम्, असहिष्णुः सोढुमसमर्थः, एकस्य = कस्यचिदज्ञातस्य, गिरितटमहीरुहस्य = गिरितटस्य पर्वतप्रतीरस्य महीरुहस्य वृक्षस्य, प्रच्छाय शीतले = सान्द्रशीतल-छायायामित्यर्थः, तले = अधः, क्षणम् = मुहूर्तम्, उपाविशम् = स्थितोऽभवम्, मम = पुष्पोद्भवस्य, पुरोभागे = अग्रे, दिनमध्यसंकुचित सर्वावयवाम् = दिनस्य दिवसस्य मध्येमध्यकाले मध्याह्ने इत्यर्थः, संकुचिताः संकोचमापन्नाः सर्वे निखिलाः अवयवाः अङ्गानि यस्याः ताम्, कूर्माकृतिम् = कूर्मस्य कच्छपस्य इव आकृतिः स्वरूपं यस्याः साताम्, मानुषच्छायाम् = पुरुष-च्छायाम्, निरीक्ष्य = संवीक्ष्य, उन्मुखः = ऊर्ध्वमुखः सन्, गगनतलात् = अम्बरतलात्, महारयेण = महावेगेन, पतन्तम् = अध आपतन्तम्, पुरुषम् = मानुषम्, अन्तराल एव = मध्यभाग एव, दयोपनतहृदयः = दयया करुणया

नतं नम्र मार्द्रं वा हृदयं चेतः यस्य सः, अहम् = पुष्पोद्भवः, अवलम्ब्य = आश्रित्य, शनैः = मन्दम् मन्दम्, अवनितले = भूतले, निक्षिप्य = संथाप्य, दूरापातवीत संज्ञम् = दूरात् दूरदेशात् आपातेन पतनेन वीता व्यतीता गता वा संज्ञा चेतना यस्यतम्, तम् = पुरुषम्, शिशिरोपचारेण = शीतलौषधिना सलिल सेकादिना, विबोध्य = प्रकृति मापाद्य, शोकातिरेकेण = महाशोकेनेत्यर्थः, उद्गतवाष्पलोचनम् = उद्गतानि निर्गतानि वाष्पाणि अश्रूणि याभ्यां तादृशे लोचने नयने यस्य भृगुपतनकारणम् = प्रपातपतननिमित्तम्, अपृच्छम् = ज्ञातुमकथयम् ।

टिप्पणी—अशक्नुवानः = यहाँ पर शक् धातु से कर्ता अर्थ मे चानश् प्रत्यय होता शानच् नहीं "ताच्छील्यवयोवचनशक्तिषुचानश्" । प्रच्छाय शीतले = प्रकृष्टा छाया यत्र तत्प्रच्छायं, प्रच्छायश्च तत् शीतलम् अथवा प्रच्छायेन शीतले । भृगु = पहाड़,टीला "प्रपातस्त्वतटो भृगुः" इत्यमरः । अपृच्छम् = पूंछा—प्रच्छ धातु के योग में 'अकथितञ्च' 'तं' तथा पतन कारणं में द्वितीया विभक्ति । असहिष्णुः = असहनशील—अलंकृञ् निराकृञ् प्रजन—सूत्र से इष्णु च् प्रतयय ।

सोऽपि कररुहैरश्रुकणानयनयन्नभाषत—'सौम्य मगधाधिनाथामात्यस्य पद्मोद्भवस्यात्मसम्भवो रत्नोद्भवो नामाहम् । वाणिज्यरूपेण कालयवन द्वीपमुपेत्य कामपि वणिक्कन्यकां परिणीय तया सह प्रत्यागच्छन्नम्बुधौ तीरस्यानतिदूर एव प्रवहणस्य भग्नतया सर्वेषु निमग्नेषु कथंकथमपि दैवानुकूल्येन तीरभूमिमभिगम्य निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे प्लवमानः कस्यापि सिद्धतापसस्यादरेणषोडश हायनानि कथंचिन्नीत्वा दुःखस्य पारं अनवेक्षमाणः गिरिपतनमकार्षम् इति । तस्मिन्नेवावसरे किमपि नारी कूजितमश्रावि—'न खलु समुचितमिदं यत्सिद्धादिष्टे पतितनयमिलेन विरहमसहिष्णुर्वैश्वानरं विशसि इति । तन्निशम्य मनोविदित जनक भावं तमवादिपम्—'तात, भवते विज्ञापनीयानि बहूनि सन्ति । भवतु ! पश्चादखिलमाख्यातव्यम् । अधुनानारीकूजितमनुपेक्षणीयं मया क्षणमात्रमत्र भवता स्थीयताम् इति ।

हिन्दी अर्थ—वह भी अंगुलियों से आंसुओं को पोंछता हुआ बोला-'हे सौम्य ! मैं मगध देश के राजमन्त्री पद्मोद्भव का पुत्र-'रत्नोद्भव' नाम वाला हूँ। व्यापार के प्रसंग से मैं कालयवन द्वीप जाकर, वहाँ पर किसी वणिक् पुत्री के साथ विवाह करके लौटते हुए समुद्र में किनारे के थोड़ी दूर ही रहने पर समुद्र में नौका के टूट जाने से, सभी के उसमें डूब जानेपर, मैं ही जैसे-तैसे भाग्यवशात् किनारे पर आकर अपनी पत्नी के वियोग के दुःखसागर में डूबा हुआ, किसी सिद्ध तपस्वी के द्वारा आदेश (प्राप्त करके) अर्थात् उसके ढाढस बँधाने से १६ वर्ष जैसे-तैसे विताने के पश्चात्, दुःख को ओर छोर न देखता हुआ, पर्वत से कूद पड़ा। उसी समय एक स्त्री की आवाज सुनी 'सिद्ध उस तपस्वी के निर्देशानुसार तुम्हारे पति और पुत्र मिल जायेंगे तो उनके विरह को सहन करने में असमर्थ होकर अग्नि में प्रवेश करना उचित नहीं है। यह सुनकर मनमें उसे अपना पिता समझकर मैंने उनसे कहा—हे तात ! मुझे आप से बहुत कुछ कहना है। अच्छा, बाद में सारा वृत्तान्त कहूँगा। इस समय मैं नारी के शब्द की उपेक्षा नहीं कर सकता। आप थोड़ी देर यहाँ रुकें।

संस्कृतव्याख्या :—सोऽपि = पुरुषोऽपि, कररुहैः = नखैः, अंगुलिभि-रित्यर्थः, अश्रुकणान् = वाष्पाणि, अपनयन् = दूरीकुर्वन्, अभाषत = अवदत, सौम्य = भद्र, मगधाधिनाथामात्यस्य = मगधेश्वरमन्त्रिणः, पद्मोद्भवस्य = तन्नामकस्य, आत्मसम्भवः = पुत्रः, रत्नोद्भवः = तन्नामधेय अहम्, वाणि-ज्यरूपेण = व्यापारप्रसंगेन, कालयवनद्वीपम् = तन्नामकम्, उपेत्य = प्राप्य, कामपि = अज्ञातम्, वणिक्कन्यकाम् = वणिक् पुत्रीम, परिणीय = विवाह्य, तया = कन्यकया, सह = सार्धम्, प्रत्यागच्छन् = प्रत्यावर्तमानः, अम्बुधौ = सागरे, तीरस्य = तटस्य, अनतिदूर एव = सविधे एव, प्रवहणस्य = नौकायाः, भग्नतया = छिन्नभिन्नत्वेन, सर्वेषु = अखिलेषु, निमग्नेषु = ब्रुडितेषु, कथंकथमपि = यथाकथमपि, दैवानुकूल्येन = भाग्यवशेन, तीर-भूमिम् = तटम्, अभिगम्य = उपेत्य निजाङ्गनावियोगदुःखार्णवे = निजस्य स्वकीयस्य अङ्गनायाः पत्न्याः वियोगस्य विरहस्य दुःखार्णवे दुःखसागरे, प्लवमानः = सन्तरन्, सिद्धतापसस्य = तपस्विनः, आदेशादरेण = वचनाश्वा-सनेन, हायनानि वर्षाणि, कथंचित् = यथाकथमपि, नीत्वा = यापयित्वा,

दुःखस्य = क्लेशस्य, पारम् = अन्तम्, अनवेक्षमाणः = अपश्यन्, अनवलोकयन् वा, गिरिपतनम् = पर्वतादधःपतनम्, अकार्षम् = अकरवम्, तस्मिन्नेवावसरे = तत्काल एव, नारी कूजितम् = प्रमदारोदनम्, शब्दम् वा, अश्रावि = श्रुतम्, न = नहि, खलु = निश्चये, सुमुचितम् युक्तं श्रेयस्करम् वा, सिद्धादिष्टे = सिद्धेन तपस्विना आदिष्टे कथिते, पतितनयमिलने = पत्युः स्वामिनः तनयस्य आत्मजस्य च मिलने संगमे, विरहम् = वियोगम्, असहिष्णुः = सोढुमसमर्थः, वैश्वानरम् = वह्निम्, विशसि = प्रविशसि, तन्निशम्य = तच्छ्रुत्वा, मनोविदित जनकभावम् = मनसा चेतसा विदितः ज्ञातः जनकभावः पितृभावः यस्येयम्, अयमेव मे जनक इति निश्चित्येत्यर्थः, तम् = पुरुषम्, अवादिषम् = अवदम्, तात् = जनक, भवते = तुभ्यम्, विज्ञापनीयानि = निवेदनीयानि, बहूनि = वार्ताः इत्यर्थः, भवतु = अस्तु, पश्चात् = एतदनन्तरम्, अखिलम् = सम्पूर्णम्, आख्यातव्यम् = कथनीयम्, अधुना = इदानीम्, नारीकूजितम् = नारीकूजनम्, अनुपेक्षणीयम् = उपेक्षितु नयोग्यम्, क्षणमात्रम् = किञ्चिद् कालम्, अत्र = अस्मिन् स्थाने, भवता = त्वया, स्थीयताम् = विरम इत्यर्थः।

टिप्पणी—वाणिज्य = व्यापार "वणिजः भावः कर्म वा" इस विग्रह में 'गुणवचन ब्राह्मणा—सूत्र से ष्यञ् तथा आदि वृद्धि होकर रूप बनेगा। प्रत्यागच्छन् = लौटते हुए, प्रति + आ + गम् (गच्छ्) शतृ प्रत्यय, हायनानि = वर्ष "हायनोऽस्त्रीशरत्समाः" इत्यमरः 'हायन' शब्द पुल्लिङ्ग एवं नपुंसकलिङ्ग भी है किन्तु पुल्लिङ्गवाची हायन के वर्ष, किरण और धान की विशेष किस्म अर्थ हैं। 'अथ हायनाः वर्षार्चिर्व्रीहिभेदाश्च" इत्यमरः। 'वियोगदुःखार्णवे प्लवमानः' रूपक अलंकार है। अनवेक्षमाणः = नञ्, अन् + अव + ईक्ष + शानच् प्रत्यय अश्रावि = सुना 'श्रु' कर्म में वैश्वानर = 'अग्नि' "अग्निर्वैश्वानरो वह्निः" इत्यमरः।

तदनु सोऽहं त्वरया किञ्चिदन्तरमगमम्। तत्र पुरतो भयंकरज्वालाकुलहुतभुगवगाहनसाहसिकां मुकुलिताञ्जलिपुटां वनितां काञ्चिदवलोक्य ससंभ्रममनलादपनीय कूजन्त्या वृद्धया सह मत्पितुरभ्यर्णमभिगमय्य स्थविरामवोचम्—'वृद्धे, भवत्यौ कुत्रत्ये। कान्तारे निमित्तेन केन दुखस्थानुभूयते। कथ्यताम्। इति। सा गद्गदमवा-

दीत्—'पुत्र, कालयवनद्वीपे कुलगुप्तनाम्नो वणिजः कस्यचिदेषा सुता सुवृत्ता नाम रत्नोद्भवेन निजकान्तेनागच्छन्ती जलधौ मग्ने प्रवहणे निजधात्र्यामया सह फलकमेकमवलम्ब्य दैवयोगन कूलमुपेतासन्नप्रसवसमया कस्याञ्चिदटव्यामात्मजमसूत। मम तु मन्दभाग्यतया बाले वनमातङ्गेन गृहीते मद् द्वितीया परिभ्रमन्ती 'षोडशवर्षानन्तरं भर्तृपुत्र संगमो भविष्यति' इति सिद्धवाक्यविश्वासादेकस्मिन् पुण्याश्रमे तावन्तं समयं नीत्वा शोकमपारं सोढुमक्षमा समुज्ज्वलिते वैश्वानरे शरीरमाहुती कर्तुमुद्युक्तासीत्' इति। तदाकर्ण्य निजजननीज्ञात्वा तामहं दण्डवत्प्रणम्य तस्यै मदुदन्तमखिलमाख्याय धात्रीभाषण फुल्लवदनं विस्मयविकसिताक्षं जनकमदर्शयम्। पितरौ तौ साभिज्ञानमन्योन्यं ज्ञात्वा मुदितान्तरात्मानौ विनीतं मामानन्दाश्रुवर्षेणाभिषिच्य गाढमाश्लिष्य शिरस्युपाघ्राय कस्यांचिन्महीरुहच्छायायामुपाविशताम्।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् मैं शीघ्रता से कुछ दूर गया (उसी ओर) गया वहाँ पर आगे भयंकर लपटों से युक्त आग में प्रवेश करने के लिए उद्यत तथा हाथ जोड़े हुए किसी औरत को देखकर, सहसा उसे आग से अलग करके, रोती हुई एक अन्य वृद्धा के साथ, उसे अपने पिता के समीप लाकर वृद्धा से कहा (पूछा) हे वृद्धे ! आप दोनों कौन हो। किस कारण से इस जंगल में दयनीय अवस्था का अनुभव करती हो। आप बतायें।

वह वृद्धा गद्‌गद् स्वर में बोली—हे पुत्र ! कालयवनद्वीप में कालगुप्त नामक एक वणिक् की पुत्री, जिसका नाम सुवृत्ता था, अपने पति रत्नोद्भव के साथ आती हुई, समुद्र में नौका डूब जाने पर मुझ धात्री (धाय) के साथ एक फलक (लकड़ी का तख्ता का) सहारा लेकर दैववशात् किनारे पर आ गयी। और प्रसव का समय निकट होने से इसने जंगल में एक पुत्र को जन्म दिया। मेरे दुर्भाग्य से एक जंगली हाथी के द्वारा बालक के उठा ले जाने पर वह कन्या घूमती हुई "१६ वर्ष के पश्चात् तुम्हारा पति और पुत्र के साथ मिलना होगा" इस प्रकार एक सिद्ध के द्वारा आश्वासन पाकर के एक पुण्याश्रम में उतने समय को व्यतीत करके (किन्तु न मिलने पर) अपार दुःख को सहन करने में असमर्थ हो कर इस जलती हुई अग्नि

में प्रवेश करने के लिए तैयार थी'। यह सब सुनकर के उस औरत को अपनी मां समझकरके दण्डवत् प्रणाम करके और उसे अपनी पूरी कथा कहकर, पुनः धात्री के वचनों से प्रफुल्लित वदन तथा आश्चर्य युक्त नेत्रों वाले पिता को उनको दिखाया। फिर वे दोनों (मेरे माता-पिता) पहचानों से एक दूसरे को पहचान करके, प्रसन्न होकर, विनीत भाव से युक्त मुझे आनन्द के अश्रुओं से भिगोकर, अच्छी प्रकार से आलिङ्गन करके, शिर को सूंघकर, किसी वृक्ष की छाया में बैठ गये।

संस्कृतव्याख्याः—तदनु = तदनन्तरम्, सोहम् = पूर्वोक्तः, किञ्चित् = स्तोकम्, अन्तरम् = दूरम्, अगमम् = अगच्छम्, तत्र = तस्मिन् स्थाने, पुरतः = समक्षे, भयंकरज्वालाकुलहुतभुगवगाहन साहसिकाम् = भयंकर ज्वालाभिः विकरालशिखाभिः आकुले संकुले व्याप्ते वा हुतभुजि वह्नौ अवगाहने प्रवेशे साहसिका कृतोत्साहां उद्यतामित्यर्थः, मुकुलिताञ्जलि पुटाम् = मुकुलिते अञ्जलिपुटे यस्याः सा तां वद्धाञ्जलिमित्यर्थः वनिताम् = प्रमदाम्, काञ्चिद् = अज्ञाताम्, अवलोक्य = विलोक्य, ससंभ्रमम् = सहसा, अनलाद् = अग्नेः, अपनीय = अपाकृत्य, कूजन्त्या = रुदन्त्याः वृद्धया = स्थविरया, सह = साकम्, मत्पितुः = मज्जनकस्य, अभ्यर्णम् = सविधे, अभिगमय्य = प्रापय्य, स्थविराम् = वृद्धाम्, अवोचम् = अवदम्, वृद्धे = स्थविरे, भवत्यौ = युवाम्, कुत्रत्ये = कस्मात् स्थानादागते इत्यर्थः कान्तारे = कानने, केननिमित्तेन = केन कारणेन, दुरवस्थाम् दयनीयामवस्थाम, अनुभूयते = अनुभवः क्रियते, कथ्यताम् = उच्यताम्, सा = वृद्धा सगद्गदम् = गद्गदकण्ठम्, अवादीत् = अकथयत्, पुत्र = तनय कालयवनद्वीपे = तन्नामके द्वीपे, कालगुप्तनाम्नः = तन्नामकस्य, वणिजः = विशः, एषा = पुरो वर्तमाना, सुता = पुत्री, सुवृत्तानाम् = तन्नामधेया, रत्नोद्भवेन = तन्नामकेन, निजकान्तेन = स्वकीयप्रियतमेन, आगच्छन्ती = समायान्ती, जलधौ = सागरे, मग्ने = ब्रुडिते, प्रवहणे = नौकायाम, निजधात्र्या = निजविमात्रा, मया = वृद्धया, सह = सार्धम, फलकम् = काष्ठशकलम, अवलम्ब्य = आश्रित्य, दैवयोगेन = भाग्यवशेन, कूलम् = तटम्, उपेता = प्राप्ता, आसन्नप्रसवसमया = आसन्नः निकटस्थः प्रसवस्य प्रसूतेः समय. कालः यस्याः सा अथवा आसन्नः अधिगतः प्रसवस्य समयः यया सा, कस्याञ्चिद् = अज्ञातायां

अटव्याम् = अरण्ये, आत्मजम् = पुत्रम्, प्रसूत = सुषुवे, मन्दभाग्यतया = दुर्दैववशेन, बाले = शिशौ, वनमातङ्गेन = कान्तारद्विरदेन गृहीते = अपहृते, मद्द्वितीया = अहमेव द्वितीया यस्याः सा कन्यका, परिभ्रमन्ती = अटन्ती, षोडशवर्षानन्तरम् = षोडश सम्वत्सरानन्तरम्, भर्तृपुत्रसंगमः = पतितनय समागमः भविष्यति = सम्पत्स्यते, सिद्धवाक्यविश्वासाद् = तापसाश्वासनात्, पुण्याश्रमे = पवित्राश्रमे, तावन्तम् = षोडशवर्षाणि, समयम् = कालम्, नीत्वा = यापयित्वा, शोकम् = दुःखम्, अपारम् = अनन्तम्, सोढुम् = वोढुम्, अक्षमा = अशक्ता असमर्था वा, समुज्ज्वलिते = प्रज्वलिते, वैश्वानरे = वह्नौ, शरीरम् = मात्रम्' आहुतीकर्तुम् = भस्मसात् कर्तुम्, उद्युक्ता = कटिवद्धा, उद्यता वा, आसीत् = अभवत्, तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, निजजननीम् = स्वमातरम्, ज्ञात्वा = विज्ञाय, ताम् = वनिताम्, दण्डवत्प्रणम्य = दण्डवत्-प्रणामं कृत्वा, तस्यै = मात्रे, मदुदन्तम् = मत्कथानकम्, अखिलम् = सम्पूर्णम्, आख्याय = कथयित्वा, धात्रीभाषणफुल्लवदनम् = धात्र्याः विमातुः भाषणेन फुल्लं विकसितं वदनं मुखं यस्यतम्, विस्मयविकसिताक्षम् = विस्मयेन आश्चर्येण विकसिते प्रफुल्ले अक्षिणी नेत्रे यस्यतम्, जनकम् = पितरम् अदर्शयम् = दर्शनं अकारयम्, पितरौ = माता च पिता चेति पितरौ, अभिज्ञानम् = प्रत्यभिज्ञाचिन्हानि अन्योन्यं प्रति दृष्ट्वा पृष्ट्वा च, अन्योन्यम् = परस्परम् ज्ञात्वा = विज्ञाय, मुदितान्तरात्मानौ = मुदितः हृष्टः अन्तरात्मा अन्तःकरण ययोस्तौ विनीतम् = अवनतम्, आनन्दाश्रुवर्षेण = प्रमोदवाष्पासारेण, अभिषिच्य = अभिषेकं कृत्वा, गाढम् = सुदृढम्, = आश्लिष्य = आलिङ्ग्य, शिरसि = मस्तके, उपाघ्राय = घ्रात्वा महीरुहच्छा-याम् = वृक्षच्छायायाम्, उपविशताम् = उपविष्टावित्यर्थः।

टिप्पणी—कूजन्त्या = रोती हुई (शब्द करती हुई) शतृ प्रत्यय, स्त्रीलि० तृ० ए०। अभ्यर्णम् = समीप "समीप होने से" अभेदश्चाविदूर्ये" सूत्र से इण् निषेध अन्यथा 'अभ्यर्दितम्' बनता। परिभ्रमन्ती = घूमती हुई 'परि + भ्रम + शतृ, ङीप् प्रत्यय (स्त्रीलिङ्ग) आगच्छन्ती = आती हुई आ + गम + शतृ, ङीप् (स्त्रीलिङ्ग)।

'कथं निवसति महीवल्लभो राजहंसः" इति जनकेन पृष्टोऽहं राज्यच्युतिं त्वदीयजननं सकलकुमारावाप्तिं तव दिग्विजयारम्भं भवतो मातङ्गानुयानमस्माकं युष्मदन्वेषण कारणं सकलमभ्यधाम्।

ततस्तौ कस्यचिदाश्रमे मुनेरस्थापयम् । ततो देवस्यान्वेषण परायणोऽहमखिलकार्यनिमित्तं वित्तं निश्चित्य भवदनुग्रहाल्लब्धस्य साधकत्वस्य साहाय्यकरणे दक्षं शिष्यगणं निष्पाद्य विन्ध्यवनमध्ये पुरातनपत्तनस्थानान्युपेत्य विविधनिधिसूचकानां महीरुहाणामधो निक्षिप्तान्वसुपूर्णान् कलशान् सिद्धाञ्जनेन ज्ञात्वा रक्षिषु परितः स्थितेषु खनन साधनैरुत्पाद्य दीनारानसंख्यान् राशीकृत्य तत्काला-गतमनतिदूरे निवेशितं वणिक् कटकं कश्चिदभ्येत्य तत्र बलिनो बलीवर्दान गोणीश्च क्रीत्वान्यद्रव्यमिषेण वसु तद् गोणी संचितं तैरुह्यमानं शनैः कटकमनयम् ।

हिन्दी अर्थ—'महाराज राजहंस का क्या हाल है' इस प्रकार पिता जी के द्वारा पूछने पर मैंने उनके राज्यभ्रंश, आपके जन्म, सम्पूर्ण कुमारों की प्राप्ति, तुम्हारी दिग्विजय का प्रस्थान, आपका मातंग के पीछे अनुगमन तथा तुम्हारे खोजने का कारण आदि सम्पूर्ण वृतान्त बता दिया। इसके पश्चात् उन दोनों को मैंने किसी मुनि के आश्रम में टिका दिया। इसके पश्चात् आपको खोजने में तत्पर मैं सम्पूर्ण कार्यों का कारण धन को निश्चय करके, आपकी कृपा से प्राप्त साधकत्व में सहयोग करने में दक्ष शिष्य समुदाय को तैयार करके विन्ध्यपर्वत के मध्य में पुराने नगर के खंडहरों को प्राप्त करके, सिद्धाञ्जन के द्वारा विभिन्न खजानों के सूचक वृक्षों के नीचे गड़े हुए धनपूर्ण कलशों को ज्ञात करके, (जानकर) रक्षकों के चारो तरफ स्थित करदेने पर, खोदने के साधनो के द्वारा खोदकरके असंख्य दीनारों को प्राप्त करके उस समय आये हुए पड़ोस में पड़ाव डाले हुए वणिकसमुदाय के पास जाकर, वहाँ पर बलवान बैलों और गोनियो (बोरे द्रव्यादि या अन्य वाह्य वस्तुओं के रखने का बोरा विशेष) को खरीद कर, दूसरी वस्तु के ढोने के बहाने से गोनियों में उस द्रव्य को भरकर (उन बैलों के द्वारा) अपने शिविर में लाया।

संस्कृतव्याख्याः—कथम् = केन प्रकारेण, निवसति = प्रतिवसति, यापयति वा कालमित्यर्थः, राजहंसः = तन्नामकः, जनकेन = पित्रा, पृष्टः = सुपृष्टः तस्य = राजहंसस्य, राज्यच्युतिम् = राज्यभ्रंशम्, त्वदीयं जननम् = भवदीय समुत्पत्तिम्, सकलकुमाराव्याप्तिम् = अखिलकुमारप्राप्तिम्,

दिग्विजयारम्भम् = दिग्विजयप्रस्थानमित्यर्थः, भवतः = तव, मातङ्गानुयानम् = मातङ्गानुसरणम्, युष्मदन्वेषणकारणम् = भवदन्वेषणनिमित्तम् सकलम् सम्पूर्णम्, अभ्यधाम् = अवोचम्, ततः तदनन्तरम्, तौ = माता पितरौ, आश्रमे = ऋषिस्थाने, मुनेः = ऋषेः अस्थापयम् = स्थापनमकरवम्, ततः = तदनन्तरम्, देवस्य = भवतः, अन्वेषणपरायणः = अन्वेषणतत्परः, अखिल-कार्यनिमित्ताम् = सम्पूर्णं कार्यकारणम्, वित्ताम् = धनम्, निश्चित्य = सुचिन्त्य, भवदनुग्रहात् = त्वदीयकृपावशात्, लब्धस्य = प्राप्तस्य, साधकत्वस्य = सिद्धिप्रदायकत्वस्य, साहाय्यकरणदक्षम् = सहयोगकरणनिपुणम्, = शिष्यगणम् = शिष्यवृन्दम्, निष्पाद्य = निर्माय, विन्ध्यवनमध्ये = विन्ध्यार-ण्यमध्ये, पुरातनपत्तनस्थानानि = प्राचीननगरस्थानानि, उपेत्य = प्राप्य, विविधनिधिसूचकानाम् = विभिन्नाकरसंसूचकानाम्, महीरुहाणाम् = वृक्षाणाम् अधः = तले, निक्षिप्तान् = संरक्षितान्, वसुपूर्णान् = धनयुक्तान्, कलशान् = घटान्, सिद्धाञ्जनेन = सिद्धकज्जलेन, ज्ञात्वा = विज्ञाय, रक्षिषु = संरक्षकेषु, परितः = सर्वतः, स्थितेषु = संस्थितेषु, खननसाधनैः खननो-पायैः, उत्पाद्य = निष्कास्येत्यर्थः, दीनारान् = एतत्संज्ञक मुद्राविशेषान्। असंख्यान् = बहून्, राशीकृत्य = एकत्रीकृत्य, तत्कालागतम् = तत्समया-गतम्, अनतिदूरे = समीपे, निवेशितम् = सुस्थितम्, वणिककटकम् = वैश्यशिविरम्, अभ्येत्य = प्राप्य, बलिनः = बलवतः बलीवर्दान् वृषमान्, गोणीः = धान्यार्थवहनार्थस्यूतान्, क्रीत्वा = क्रयणं कृत्वा, अन्यद्रव्यमिषेण = इतरद्रव्यव्याजेन, वसु = धनम्, तद्गोणीसंचितम् = तद्गोणीसुरक्षितम्, तैः = बलीवर्दैः ऊह्यमानम् = नीयमानम्, शनैः = मन्दं मन्दम्, कटकम् = शिविरम् अनयम् = अनीतवान्।

टिप्पणी—बलीवर्द = बैल = "उक्षा भद्रो बलीवर्दः" इत्यमरः। दीनार = एक सोने का सिक्का विशेष। गोणी = अन्न आदि भरकर ढोने का एक छोटा बोरा जो सन से बनाया जाता है इसमें भरकर ऊँट या घोड़े के द्वारा ढोया जाता है। भाषा में इसे "गोनी" कहते हैं। 'जानपद कुण्डगोण —सूत्र डीष् वसु = धन = रिक्थमृक्थं धनंवसु" इत्यमरः। उह्यमानम् = वह प्रापणे कर्म मे शानच्।

तदधिकारिणा चन्द्रपालेन केनचिद् वणिक्पुत्रेण विरचित सौहृदोऽहममुनैव साकमुज्जयिनीमुपाविशम्। मत्पितरावपि तां पुरीमभिगमय्य सकलगुणनिलयेन बन्धुपालनाम्ना चन्द्रपालजनकेन नीयमानो मालवनाथदर्शनं विधाय तदनुमत्या गूढवसतिमकरवम्। ततः काननभूमिषु भवन्तमन्वेष्टुमुद्युक्तं मां परममिव बन्धुपालो निशम्यावदत्—'सकल धरणितलमपारमन्वेष्टुमक्षमो भवान् मनोग्लानिं विहाय तूष्णीं तिष्ठतु। भवन्नायकालोकनकारणं शुभशकुनं निरीक्ष कथयिष्यामि इति।

बालचन्द्रिकया प्रीति :—

तल्लपितामृताश्वासितहृदयोऽहमनुदिनं तदुपकण्ठवर्ती कदाचिदिन्दुमुखीं नवयौवनावलीढावयवां नयनचन्द्रिकां बालचन्द्रिकां नाम तरुणीरत्नं वणिङ्मन्दिरलक्ष्मीं मूर्तामिवावलोक्य तदीयलावण्यावधूतधीरभावो लतान्त बाणबाणलक्ष्यतामयासिषम्। चकितबालकुरंगलोचना सापि कुसुमसायकसायकायमानेन कटाक्षवीक्षणेन मामसकृन्निरीक्ष्य मन्द मारुतान्दोलिता लतेवाकम्पत। मनसाभिमुखैः समाकुञ्चितैः रागलज्जान्तरालवर्तिभिः साङ्गवर्तिभिरीक्षणविशेषैर्निजमनोवृत्तिमकथयत्। चतुरगूढचेष्टाभिरस्या मनोऽनुरागं सम्यग्ज्ञात्वा सुखसंगमोपायमचिन्तयम्।

बन्धुपालस्य शकुनविचार :—

अन्यदा बन्धुपालः शकुनैर्भवद् गतिं प्रेक्षिष्यमाणः पुरोपान्त विहारवनं मया सहोपेत्य कस्मिश्चिन्महीरुहे शकुन्तवचनानि शृण्वन्ना तिष्ठत्। अहमुत्कलिकाविनोदपरायणो वनान्तरे परिभ्रमन्सरोवरतीरे चिन्ताक्रान्तचित्तां दीनवदनां मन्मनोरथैकभूमिं बालचन्द्रिकां व्यलोकयम्।

शब्दार्थ :—लतान्तबाणबाणलक्ष्यतामयासिषम् — कामदेव (लतान्तबाण) के बाणों का लक्ष्य (निशाना) बन गया।

हिन्दी अर्थ—उन वनियों के अधिकारी चन्द्रपाल नामक वणिक् पुत्र के साथ मित्रता करके उज्जयिनी गया। मैं अपने माता-पिता को भी उस नगरी में ले जाकर, सम्पूर्ण गुणों के भण्डार चन्द्रपाल के पिता बन्धुपाल

के साथ जाकर मालवनरेश का दर्शन करके और उनकी अनुमति से गुप्त रूप से रहने लगा। इसके पश्चात् वन में आपको खोजने में तत्पर मुझे जान कर परममित्र बन्धुपाल ने कहा-"इस अपार भूमण्डल को खोजने में आप असमर्थ हैं अतः मन की ग्लानि को छोड़कर चुप बैठें। मैं आपके स्वामी के मिलने का कारण भूत शुभशकुन को देखकर बता दूंगा। उनके वचनामृत से आश्वासित होकर उसी बन्धुपाल के समीप रहते हुए मैंने कभी चन्द्र के समान मुखवाली, नवयौवन से युक्त अंगो वाली, नेत्रों को चन्द्रिका के समान आनन्ददायिनी, तथा साक्षात् वणिक् गृह की मूर्तिमती लक्ष्मी के तुल्य बालचन्द्रिका नामक एक श्रेष्ठ तरुणी को देखा और उसके सौन्दर्य से धैर्य को छोड़कर मैं कामबाण से विद्ध हो गया। वह चञ्चल बाल मृगाक्षी कामदेव के बाणों के तुल्य अपने कटाक्षनिक्षेप से मुझे बार-बार देखकर मन्द-मन्द वायु के द्वारा हिलायी गयी लता के समान कांपने लगी। उसने भी प्रेम और लज्जा के बीच में रहने वाली अङ्गभंगियों तथा मेरी ओर मन से अर्पित किन्तु कुछ संकुचित भाव से युक्त नेत्र व्यापारों से अपनी मनोवृत्ति को मुझसे कह दिया। मैं अपनी चतुर और गुप्त चेष्टाओं के द्वारा इसके मानसिक प्रेम को समझ करके उससे सरलता से मिलने का उपाय सोचने लगा। दूसरे दिन बन्धुपाल शकुनों के द्वारा आपकी गति को देखता हुआ नगर के समीप विहार वन में मेरे साथ आकर किसी वृक्ष के नीचे पक्षियों के वचनों को सुनता हुआ ठहर गया। अपनी उत्सुकता के अपनयन हेतु दूसरे उपवन में घूमते हुए मैंने एक तालाब के किनारे चिन्ता से व्याप्त चित्त वाली, दीनवदना तथा मेरी कामना का एकमात्र आश्रयभूत उस बालचन्द्रिका नामक (कन्या) को देखा।

संस्कृतव्याख्या :—तदधिकारिणा = कटकस्वामिना, चन्द्रपालेन= तन्नामकेन, वणिक् पुत्रेण=वैश्य सूनुना, विरचित सौहृदः= विरचितं विहितं सौहृदं मैत्री येन सः, अमुनैव = चन्द्रपालेनैव, साकम् = समम्, उज्जयिन्याम् = विशालायाम्, उपाविशम् = अवसम्, मत्पितरौ = मदीय-मातापितरौ ताम् = पूर्वोक्ताम्, पुरीम् =नगरीम्, अभिगमय्य = प्रापय्य, सकलगुणनिलयेन = सकलानां अखिलानां गुणानां सद्गुणानां निलयः आवासः तेन, चन्द्रपालजनकेन = चन्द्रपालपित्रा, नीयमानः= उह्यमानः,

मालवनाथ दर्शनम् = मालवाधिपदर्शनम्, विधाय = कृत्वा, गूढवसतिम् = गुप्तावासम्, अकरवम् = कृतवान्, तदनुमत्या = तदाज्ञया, ततः = तदनन्तरम्, काननभूमिषु = वनप्रदेशेषु, भवन्तम् = त्वाम्, अन्वेष्टुम् = अन्वेषणं कर्तुम्, उद्युक्तम् = उद्यतम्, परममित्रम् = परमसुहृत्, बन्धुपालः = तन्नामकः निशम्य = श्रुत्वा, अवदत् = अवोचत्, सकलम् = सम्पूर्णम्, धरणीतलम् = पृथिवीमण्डलम्, अपारम् = न विद्यते पारोऽन्तःयस्यतत् अनन्तमित्यर्थः, अन्वेष्टुम् = अन्वेषणं कर्तुम्, अक्षमः = असमर्थः, भवान् = त्वम्, मनोग्लानिम् = मनसः चेतसः ग्लानिं हर्षक्षयं, विहाय = परित्यज्य, तूष्णीम् = जोषम्, तिष्ठतु = भवतु, भवन्नायकालोकनकारणम् = भवतः तव नायकस्य स्वामिनः आलोकनस्य दर्शनस्य कारणं निमित्तं, शुभशकुनम् = सुलक्षणम् निरीक्ष्य = वीक्ष्य, कथयिष्यामि = कथनं करिष्यामि वक्ष्यामि वा, तल्लपितामृताश्वासित हृदयः = तस्य बन्धुपालस्य लपितं कथितं भाषितमेव अमृतं पीयूषं तेन आश्वासितं आश्वासोपेतं हृदयं मनः चित्त वा यस्य सः, अनुदिनम् = प्रत्यहम्, अन्यैकस्मिन् दिने इति अभिप्रायः, तदुपकण्ठवर्ती = तस्य बन्धुपालस्य उपकण्ठवर्ती समीपवर्ती, इन्दुमुखीम् = इन्दोरिव मुखे यस्याः सा ताम् चन्द्रवदनामितिभावः, नवयौवनावलीढावयवाम् = नव यौवनेन नूतनतारुण्येन अवलीढाः परिव्याप्ताः अवयवाः अङ्गानि यस्यास्ताम्, नयनचन्द्रिकाम् = नयनयोः नेत्रयोः चन्द्रिका ज्योत्स्ना कौमुदी वाताम्, बाल चन्द्रिकाम् = तन्नामिकाम्, तरुणीरत्नम् = तरुणीषु रमणीषु रत्नं रत्नस्वरूपम्, वणिङ् मन्दिरलक्ष्मीम् = वणिक् गृहश्रियम्, मूर्ताम् = मूर्तिमतीम्, अवलोक्य = दृष्ट्वा, तदीय लावण्यावधूतधीरभावः = तदीयेन तत्सम्बन्धिना लावण्येन रमणीयतया अवधूतः न्यक्कृतः धीरभावः धैर्यम् यस्य सः, लतान्त बाणबाणलक्ष्यताम् = लतान्ताः पुष्पाणि बाणाः यस्य सः कामः तस्य बाणाः शिलीमुखाः तेषां लक्ष्यतां शरव्यत्वं ताम्, अयासिषम् = गतोऽभवम्, चकित बालकुरङ्गलोचना = चकितस्य चाकचिक्योपेतस्य बालकुरङ्गस्य बालमृगस्य लोचने इव लोचने नयने यस्याः सा, साऽपि = बालचन्द्रिकापि, कुसुमसायकसायकायमानेन = कुसुमानि सुमनांसि सायकाः बाणाः यस्य सः कामदेव इत्यर्थः तस्य सायक शरः तदिवाचरतीति तेन मन्मथशरशदृशेन, कटाक्षवीक्षणेन = अपाङ्गदर्शनेन, असकृद् = मुहुर्मुहुः, निरीक्ष्य = विलोक्य, मन्द-

मारुतान्दोलिता = मन्दमारुतेन मन्दवायुना आन्दोलिता कम्पिता, लता= वृततिः इव, अकम्पत = कम्पितोऽभवत्, मनसाभिमुखैः = मनसा चेतसा हृदयेन वा अभिमुखैः मां प्रत्यर्पितैः, समाकुञ्चितैः = सम्यगाकुञ्चितैः, राग-लज्जान्तरालवर्तिभिः = रागश्च स्नेहश्चानुरागो वा लज्जा च त्रपा च तयोः अन्तराले मध्येवर्तन्ते तैः, सा = बालचन्द्रिका, अङ्गवर्तिभिः = अङ्ग-भङ्गिभिः, ईक्षणविशेषैः = प्रेक्षणविशेषैः, निजमनोवृत्तिम् = स्वकीयमनो-भावम्, अकथयत् = अप्रकटयत् । चतुरगूढचेष्टाभिः = चतुराः चातुर्योपेता गूढाश्च गुप्ताश्च या चेष्टाः व्यापाराः ताभिः, मनोऽनुरागम् = मनसः चेतसः अनुरागं स्नेहं प्रीतिं वा, सम्यक् = सुष्ठु, ज्ञात्वा = विज्ञाय, सुखसंगमोपायम् = सुखेन अनायासेन यः संगमः मिलनं तस्य उपाय मिलनप्रकारं विधिं वा, अचिन्तयम् = अविचारयम् अन्यदा = अन्यस्मिन् दिने, बन्धुपालः = तन्नामकः, शकुनैः = निमित्तैः लक्षणैर्वा, भवद्गतिम् = भवतः राजवाहनस्य गतिं दशां प्रेक्षिष्यमाणः = द्रक्ष्यन्, पुरोपान्तविहारवनम् = पुरस्य नगरस्य पत्तनस्य वा उपान्ते समीपे विहारवनं क्रीडोद्यानम्, सह = साकम्, उपेत्य = आगत्य, महीरुहे = वृक्षे शकुन्तवचनानि = शकुन्तानां खगानां वचनानि भाषितानि, शृण्वन् = श्रवणं कुर्वन्, अतिष्ठत् = उपाविशदित्यर्थः, अहम् = पुष्पोद्भवः, उत्कलिकाविनोदपरायणः = उत्कलिकायाः विनोदे अपनयने परायणः तत्परः, वनान्तरे = अन्यस्मिन् कानने, परिभ्रमन् = अटन्, सरोवर तीरे = कासारतटे, चिन्ताक्रान्तचित्ताम् = चिन्तया आक्रान्तं व्याकुल चित्तं हृदयं यस्या सा ताम्, दीनवदनाम् = दीनं विषण्णं मलीमसं वा वदनं मुखं यस्या सा ताम्, मन्मनोरथैकभूमिम् = मम मनोरथस्य अभि-लाषस्य एक भूमिमेकमात्रस्थानम्, बालचन्द्रिकाम् = तन्नामिकाम्, व्यलो-कयक् = अपश्यम् ।

टिप्पणी —पितरौ = माता च पिताचेति पितरौ "एकशेष द्वन्द्व समास "पितामात्रा" सूत्र से । कुरङ्ग = मृग– "मृगेकुरङ्ग वातायुः" इत्यमरः । लतेवाकम्पत = इस वाक्य में उपमा अलंकार है । कटाक्ष = नेत्र की कोर– "कटाक्षोऽपाङ्गदर्शने" इत्यमरः । गति = दशा–"गतिर्मार्गे दशायां च ज्ञाने पात्राभ्युपाययोः । नाडीव्रणसरण्यां च इति विश्वः । उत्कलिका = उत्कण्ठा– "उत्कण्ठोत्कलिके समे" इत्यमरः । प्रेक्षिण्य माणः = प्र + ईक्ष + स्य, शानच् शकुन्त = पक्षी –"शकुन्तिपक्षिशकुनिशकुन्तशकुनद्विजाः" इत्यमरः ।

तस्याः ससंभ्रमप्रेमलज्जा कौतुकमनोरमं लीलाविलोकनसुखमनुभवन्सुदत्या वदनारविन्दे विषण्णभावं मदनकदनखेदानुभूतं ज्ञात्वा तन्निमित्तं ज्ञास्यंल्लीलया तदुपकण्ठमुपेत्यावोचम्– "सुमुखि, तव मुखारविन्दस्य दैन्यकारणं कथय" इति। सा रहस्य संजातविश्रम्भतया विहाय लज्जाभये शनैरभाषत– "सौम्य, मानसारो मालवाधीश्वरो वार्धकस्य प्रबलतया निजनन्दनं दर्पसारमुज्जयिन्यामभ्यषिञ्चत्। स कुमारः सप्तसागरपर्यन्तं महीमण्डलं पालयिष्यन्निज पैतृष्वस्रेयावुदण्डकर्माणौ चण्डवर्मदारुवर्माणौ धरणीभरणे नियुज्य तपश्चरणाय राजराजगिरिमभ्यगात्। राज्यं सर्वमसपत्नं शासति चण्डवर्मणि दारुवर्मा मातुलाग्रजन्मनोः शासनमतिक्रम्य पारदार्यपरद्रव्यापहरणादिदुष्कर्मं कुर्वाणो मन्मथसमानस्य भवतो लावण्यायत्तचित्तां मामेकदा विलोक्य कन्यादूषणदोषं दूरीकृत्य बलात्कारेण रन्तुमुद्युङ्क्ते। तच्चिन्तया दैन्यमगच्छम्" इति।

शब्दार्थ—राजराजगिरिम् = यक्षराज (राजानो यक्षाः तेषां राजा) कुबेर का पर्वत = कैलाशपर्वत।

हिन्दी अर्थ—उस सुन्दर दांतों वाली चन्द्रिका के घबराहट, प्रेम, लज्जा और उत्कण्ठा युक्त सुन्दर दर्शन-सुख का अनुभव करते हुए, कामदेव की पीड़ा से खिन्नभाव को देख करके उसके कारण को जानने की इच्छा से उसके समीप जाकर मैंने कहा–हे सुमुखि! अपने मुखकमल की दीनता का कारण बताओ। गोप्यविषय में उसे विश्वास उत्पन्न हो जाने पर वह लज्जा और भय को त्याग कर धीरे से बोली–हे सौम्य! वृद्धावस्था के बढ़ जाने के कारण मालवनरेश मानसार ने अपने पुत्र दर्पसार को अभिषिक्त कर दिया है। वह कुमार सातसागरों वाली पृथिवी का पालन करने की इच्छा से अपने पिता की बहन के दो उद्दण्ड पुत्रों, (फुफेरे भाई) चण्डवर्मा एवं दारुवर्मा को पृथिवी का भार सौंप करके तपस्या करने के लिए कैलास पर्वत पर चला गया है। शत्रुओं से रहित राज्य का प्रशासन चण्डवर्मा के चलाने पर, दारुवर्मा अपने मामा और बड़े भाई की आज्ञा को उल्लंघन करके परस्त्री अपहरण तथा पराया द्रव्य चुराने आदि का दुष्कर्म करता हुआ कामदेव के समान आपके सौन्दर्य पर अनुरक्त मुझे

एकबार देखकरके कन्यागमन पाप को न समझता हुआ मुझसे बलात्कार करने के लिए उद्यत हो गया है। उसी चिन्ता से मैं दुःखी हूँ।'

संस्कृतव्याख्या :—तस्याः = बालचन्द्रिकायाः, ससंभ्रमप्रेमलज्जाकौतुकमनोरमम् = संभ्रमेण सहितं ससम्भ्रमं यत् प्रेम च लज्जा च कौतुकं च तैः मनोहरम् सरभसस्नेहत्रपाकुतुकाभिरामम्, लीलाविलोकन सुखम् = लीलया विलासेन लीलानां यत् विलोकनं अवलोकनं तस्य सुखं आनन्दं, अनुभवन् = आस्वादयन्, सुदत्याः = शोभनाः दन्ताः यस्याः सा तस्याः सुदशनायाः इत्यर्थः, वदनारविन्दे = मुखकमले, विषण्णभावम् = दैन्यमित्यर्थः, मदनकदनखेदानुभूतम् = मदनस्य कामदेवस्य कदनस्य पीडनस्य खेदेन आयासेन अनुभूतम्, ज्ञात्वा = विज्ञाय, तन्निमित्तम् = तत्कारणम्, ज्ञास्यन् जाननिति भावः, लीलया = अनायासेन, तदुपकण्ठम् = तस्याः बालचन्द्रिकायाः उपकण्ठं समीपम्, उपेत्य = प्राप्य, अवोचम् = अवदम्, सुमुखि = सुवदने, तव = भवतः, मुखारविन्दस्य = मुखकमलस्य, दैन्यकारणम् = दैन्यस्य दीनतायाः कारणं निमित्तं, कथय = ब्रूहि, सा = बालचन्द्रिका, रहस्यसंजातविश्रम्भतया = रहस्ये गोपनीये विषये सञ्जातः समुत्पन्नः विश्रम्भः विश्वासः तस्य भावः तत्ता तया, विहाय = परित्यज्य, लज्जाभये = लज्जा च त्रपा च भयञ्च भीतिश्च इति, शनैः = मन्दमन्दम्, अभाषत = अवोचत्, सौम्य = भो भद्र ! मानसारः = तन्नामकः, मालवाधीश्वरः = मालवेशः, वार्धकस्य = जरायाः, प्रबलतया = प्रबलत्वेन, आधिक्येन वा, निजनन्दनम् = स्वपुत्रं, दर्पसारम् = तन्नामकम्, उज्जयिन्याम् = विशालायाम्, अभ्यषिञ्चत् = अभिषेकमकरोत्, स कुमारः = स राजकुमारः, सप्तसागर पर्यन्तम् = आसप्तसमुद्रम्, महीमण्डलम् = पृथिवीमण्डलम्, पालयिष्यन् = रक्षनिति भावः, पैतृष्वस्रेयौ = पितुः स्वसायाः भगिन्याः तनयौ, उदण्डकर्माणौ = उदण्डं अमनोहरं कर्म कार्यं ययोस्तौ, चण्डवर्मदारुवर्माणौ = तन्नामकौ, धरणीभरणे = राज्यरक्षणे इति भावः, नियुज्य = अधिकृत्य, तपश्चरणाय = तपोविधातुम्, राजराजगिरिम् = राजराजः धनाधिपः कुबेरः तस्य गिरिम् पर्वतं कैलासमित्यर्थः, अभ्यगात् = अगच्छत्, राज्यम् साम्राज्यम्, सर्वम् = समग्रम्, असपत्नम् = शत्रुरहितम् निष्कण्टकमिति भावः, शासति = शासनं कुर्वति सति, पालयति इति भावः, चण्डवर्मणि =

तन्नामके, दारुवर्मा = तन्नामकः, मातुलाग्रजन्मनोः = मातुलाग्रजयोः, शासनम् = आदेशम्, अतिक्रम्य = उल्लंघ्य, परदायपरद्रव्यापहरणादि दुष्कर्म = पारदार्यं परप्रमदाभिमर्शः, परद्रव्यापहरणं चौर्यमितिभावः ते आदी यस्यतत्, दुष्कर्म = कुकर्म, कुर्वाणः = कुर्वन्, मन्यथसमानस्य = कामोपमस्य, भवतः = तव, लावण्यात्तचित्ताम् = लावण्येन सौन्दर्येण आयतमधीनं चित्तं हृदयं यस्याः सा ताम्, एकदा = एकस्मिन् दिने, विलोक्य = अवलोक्य, कन्यादूषणदोषम् = कन्यायाः कन्यकायाः अपरिणीतायाः इति भावः, दूषणम् = आकर्षणं (रमणादि) तदेव दोषस्तम् बलात्कारेण = हठेन, रन्तुम् = सुरतार्थम् दूरीकृत्य = अपाकृत्य, उद्युङ्क्ते = उद्यतोऽस्ति, चेष्टतेवा तच्चिन्तया = तत्ध्यानेन, दैन्यम् = दीनताम्, अगच्छम् = गतोऽस्मि।

टिप्पणी—पैतृ पैतृष्वस्रेयौ = पितृस्वसुरपत्यं पुमान् इस विग्रह में "पितृष्वसुश्छण्' सूत्र छण् प्रत्यय 'मातृपितृभ्यां स्वसा" सूत्र से षत्व होता है। राजराजगिरिम् = कुबेर का पर्वत "कैलास" राज्ञां राजा इति राजराजः "राजाहः सखिभ्यष्टच्" सूत्र टच् प्रत्यय। यहाँ पर प्रथम राजा शब्द का अर्थ यक्ष है" राजा प्रभौ नृपे चन्द्रे यक्षेक्षत्रियशक्रयोः." इति विश्वकोशः, 'राजराजो धनाधिपः' इत्यमरः। सुदत्याः = अच्छे दांतो वाली = शोभनाः दन्ताः = यस्याः सा" इस विग्रह में "वयसि दन्तस्य दतृ" दन्त का दतृ होकर बनता है।

तस्याः मनोगतम् मयि रागोद्रेकं मन्मनोरथसिद्ध्यन्तरायं च निशम्यबाष्पपूर्णलोचनां तामाश्वास्य दारूवर्मणो मरणोपायञ्च विचार्य वल्लभामवोचम्—'तरुणि, भवदभिलाषिणं दुष्टहृदयमेनं निहन्तुं मृदुरुपायः कश्चिन्मयाचिन्त्यते। यक्षः कश्चिदधिष्ठाय बालचन्द्रिकां निवसति। तदाकार संपदाशा शृंखलित हृदयो यः सम्बन्धयोग्यः साहसिको रतिमन्दिरे तं यक्षं निर्जित्य तया एक सखीसमेतया मृगाक्ष्या संलापामृतसुखमनुभूय कुशली निर्गमिष्यति, तेन चक्रवाकसंशयाकारपयोधरा विवाहनीयेति सिद्धनैकेनावादीति पुरजनस्य पुरतः भवदीयैः सत्यवाक्यैरसकृत्कथनीयम्। तदनु दारुवर्मा वाक्यानीत्थं विधानि श्रावं श्रावं तूष्णीं यदि भिया स्थास्याति तर्हिवरम्,

यदि वा दौर्जन्येन त्वया सङ्गमङ्गीकरिष्यति, तदा स भवदीयैरित्थं वाच्यः—"सौम्य, दर्पसारवसुधाधिपामात्यस्य भवतोऽस्मन्निवासे साहसं करणमनुचितम्। पौरजनसाक्षिकं भवन्मदिरमानीतया अनया तोयजाक्ष्या सह क्रीडन्नायुष्मान् यदि भविष्यति तदा परिणीय तरुणीं मनोरथान्निर्विश" इति। सोऽप्येतदङ्गी करिष्यति त्वं सखीवेशधारिणा मया सह तस्य मन्दिरं गच्छ। अहमेकान्तनिकेतने मुष्टिजानुपादाघातैस्तं रभसान्निहत्य पुनरपि वयस्यामिषेण भवतीमनु निःशङ्कं निर्गमिष्यामि। तदेनमुपायमङ्गीकृत्य विगतसाध्वसलज्जा भवज्जनकजननीसहोदराणां पुरतः आवयोः प्रेमातिशयमाख्यायसर्वथास्मत्परिणयकरणेताननुनयेः। तेऽपि वंशसंपल्लावण्याढ्याय यूने मह्यं त्वां दास्यन्त्येव। दारुवर्मणो मारणोपायं तेभ्यः कथयित्वा तेषामुत्तरमाख्यं मह्यम्" इति।

हिन्दी अर्थ—उस नारी के मन में स्थित अपने प्रति स्नेह को समझ कर एवं अपनी मनोरथसिद्धि में (दारुवर्मा) को विघ्न जान करके अश्रु से पूरित नयनों वाली उस बालचन्द्रिका को आश्वासन देकर और दारुवर्मा के मारने के उपाय को सोच करके मैंने अपनी प्रिया से कहा—"हे बाले! आपको (हठात्) चाहने वाले इस दुष्ट दारुवर्मा को मारने का कोई सरल उपाय (मैं) सोच रहा हूँ। (तुम जाकर इस प्रकार कहो) कि कोई यक्ष बालचन्द्रिका के ऊपर रहता है। उसके (बालचन्द्रिका के) रूप सौन्दर्य से आकृष्ट चित्त वाला जो कोई साहसी पुरुष अपने को सम्बन्ध योग्य समझता है वह उसके सुरतगृह में उस यक्ष को जीतकर और उस एक सहेली से युक्त मृगाक्षी बालचन्द्रिका के वार्तालाप रूपी अमृत के सुख का अनुभव करके जो कुशल पूर्वक निकल आयेगा, उसके साथ चक्रवाक के तुल्य स्तनों के आकार वाली बालचन्द्रिका का विवाह होगा। इस प्रकार (उपर्युक्त) एक सिद्ध तपस्वी ने बताया है। यह सब आपके पक्ष के आप्तजन रंगा बार-बार लोगों के सामने कहें। यदि दारुवर्मा इस प्रकार के वाक्य सुन कर भयवशात् चुप बैठ जाये तो अच्छा है और यदि दुर्जनतावश तुम्हारा साथ ही चाहे तो तुम्हारे लोग उससे इस प्रकार कह देवें। हे सौम्य! आप भूपति दर्पसार के मन्त्री है अतः हमारे निवास पर आपका इस

प्रकार का साहस करना अनुचित है। पुरवासियों को साक्षी बनाकर अर्थात् उन लोगों के सामने आप अपने घर में इसे ले जाकर, इस कमलनयना के साथ विहार करते हुए यदि सकुशल रहें तो (अवश्य) इसके साथ विवाह करके अपने मनोरथों को भोगें। वह दारुवर्मा भी इस बात को स्वीकार कर लेगा। तुम सखीवेशधारी मेरे साथ उसके घर चलना। मैं एकान्त गृह में मुक्के घुटने एवं लातों के प्रहार से उसे मार करके फिर सखी के वेश के बहाने से ही तुम्हारे साथ (पीछे पीछे) निकल आऊंगा। तो तुम इस उपाय को स्वीकार कर भय और लज्जा को छोड़कर अपने माता, पिता और भाइयों के समक्ष हम दोनों के प्रगाढ अनुराग को बताकर हम लोगों के परस्पर विवाह के लिए उन लोगों को राजी करलो। वे लोग भी कुल, लक्ष्मी तथा सौन्दर्य से युक्त मुझ जैसे युवक को तुम्हें देने के लिए तैयार हो जायेंगे। दारुवर्मा के मारने के उपाय को उन्हें बताकर और उनका उत्तर (प्रतिक्रिया) भी मुझे बताना।

संस्कृतव्याख्या:—तस्याः = बालचन्द्रिकायाः, मनोगतम् = मनोभावम्, मयि, रागोद्रेकम् = प्रेमातिशयम, मन्मनोरथ सिद्ध्यन्तरायम् = मम मनोरथस्य अभिलाषस्य सिद्धिः प्राप्तिः तस्य अन्तरायम् विघ्नम् निशम्य = ज्ञात्वेत्यर्थः, बाष्पपूर्णलोचनाम् = बाष्पैः अश्रुभिः पूर्णे लोचने नयने यस्याः सा ताम, ताम् = नायिकाम्, आश्वास्य = सान्त्वयित्वा, दारुवर्मणः = तन्नामकस्य, मरणोपायम् = हननविधिम्, विचार्य = सुचिन्त्य, वल्लभाम् = दयिताम्, अवोचम् = अवदम्: तरुणि = भो बाले, भवदभिलाषिणम् = त्वदिच्छुकम्, दुष्टहृदयम् = दुष्टं हृदयं यस्य तम् खलमित्यर्थः, एनम् = दारुवर्माणं निहन्तुम = वधार्थम्, मृदुः = सरलः, सुकरो वा, उपायः = विधिः चिन्त्यते = विचार्यते, यक्षः = प्रेतः, कश्चित् = अज्ञातः, अधिष्ठाय = अधिकृत्य, बालचन्द्रिकाम् = तन्नामिकाम्, निवसति = प्रतिवसति, तदाकारसंपदाशाशृंखलितहृदयः = तस्याः बालचन्द्रिकायाः आकारसम्पदः मधुराकृतेः आशया प्राप्तीच्छया शृंखलितम् निबद्धमाकृष्टमित्यर्थः हृदयं चित्तं यस्य सः, सम्बन्धयोग्यः = सम्बन्धानुरूपः विवाहार्हं इत्यर्थः साहसिकः = साहसं कर्तुमुद्यतः, रतिमन्दिरे = सुरतगृहे यक्षम् = प्रेतम् = निर्जित्य = विजित्य, तया = नायिकया, एक सखीसमेतया =

एकालियुक्तया, मृगाक्ष्याः = एणादयाः, संलापामृतसुखम् = संलापः वार्तालापः एव अमृतं पीयूषं तस्य सुखं आनन्दं, अनुभूय = अनुभवं कृत्वा, कुशली = आयुष्मान्, कुशलयुक्तो वा, निर्गमिष्यति = वहिरा गमिष्यति, तेन = पुरुषेण, चक्रवाक संशयाकारपयोधरा = चक्रवाकस्य रथाङ्गस्य संशयः सन्देहः यस्मिन् तादृशः आकारः स्वरूपं ययोः तादृशौ पयोधरौ स्तनौ यस्याः सा, विवाहनीया = परिणेया, इति = इत्थम्, सिद्धेन = सिद्धतापसेन, अवादि = अवोचि, पुरजनस्य पुरतः = पौराणां समक्षमिति भावः, भवदीयैः = त्वदीयैः, सत्यवाक्यैः = सत्यानि वाक्यानि येषां तैः आप्तैरिति-भावः, असकृत् = मुहुर्मुहुः कथनीयम् = कथितव्यम्, तदनु = तदनन्तरम्, वाक्यानि = वचनानि, इत्थंविधानि = एतादृशानि, श्रावं श्रावम् = श्रुत्वा श्रुत्वा, तूष्णीम् = जोषम, भिया = भयेन, स्थास्यति = विरतोभविष्यति, वरम् = शोभनम्, यदि वा, दौर्जन्येन = दुष्टतया, त्वया = भवत्या सङ्गम् = सङ्गमम्, अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, तदा = तदानीम्, भवदीयैः = त्वदीयैः, वाच्यः = कथनीयः, सौम्य = भद्र, दर्पसारवसुधाधिपस्य = दर्पसार-नामक महीपतेः, अमात्यस्य = मन्त्रिणः भवतः = तव, अस्मन्निवासे = अस्माकं निवासगृहे, साहसम् = साहसयुक्तम् करणम् = कार्यम्, अनुचितम् = अयुक्तम्, पौरजनसाक्षिकम् = पौरजनाः पुरवासिनः साक्षिणः यस्मिस्तम्, भवन्मन्दिरम् = त्वद्गृहम् आनीतया = सम्यगानीतया, अनया = बालचन्द्रिकया, तोयजाक्ष्या = कमलाक्ष्या, सह = साकम् क्रीडन् = विहरन्, आयुष्मान् = कुशली, तदा = तदानीम्, परिणीय = विवाह्य, तरुणीम् = रमणीम्, मनोरथान् = अभिलाषान्, निर्विश = उपभुङ्क्ष्व, सोऽपि = दारुवर्मा अपि, एतत् = पूर्वोक्तम्, अङ्गीकरिष्यति = स्वीकरिष्यति, त्वम् = बालचन्द्रिका सखीवेशधारिणा = सखीरूपावधारिणा, मया = पुष्पोद्भवेन, सह = सार्धम्, तस्य = दारुवर्मण, मन्दिरम् = गृहम्, गच्छ = व्रज, अहम् = पुष्पोद्भवः, एकान्तनिकेतने = एकान्त गृहे, मुष्टिजानुपादाघातैः = मुष्ट्या जानुना पादेन च ये आघाताः प्रहाराः तैः, रभसात् = वेगात्, निहत्य = वधंकृत्वा, वयस्यामिषेण = सखीव्याजेन, भवतीमनु = त्वामनु निःशङ्कम् = निर्विशङ्कम्, निर्गमिष्यामि = वहिरागमिष्यामि, तदेनम् = पूर्वोक्तम्, उपायम् = विधिम्, अङ्गीकृत्य = स्वीकृत्य, विगत साध्वसलज्जा

विगते अपगते साध्वसलज्जे भयत्रपे यस्याः सा, भवज्जनकजननी सहोदराणाम् = भवतः तव जनकश्च जननी च सहोदराश्च तेषाम् स्वकौंटुम्बिकजनानाम्, पुरतः = समक्षे, आवयोः = बालचन्द्रिकापुष्पोद्भवयोः, प्रेमातिशयम् = अनुरागाधिक्यम्, आख्याय = उक्त्वा, सर्वथा = सर्वप्रकारेण, अस्मत्परिणयकरणे = अस्मद विवाहे, तान् = जनकादीन्, अनुनयैः = प्रीणयैः, ते = जनकादयः, वंशसम्पल्लावण्याढ्याय = वंशस्य सम्पदा वंशेन सम्पदा वा लावण्येन आढयाय सम्पन्नाय कुलसम्पत्तिसौन्दर्यसम्पन्नाय, यूने = तरुणाय, मह्यम् = पुष्पोद्भवाय, त्वाम् = बालचन्द्रिकाम्, दास्यन्ति प्रदास्यन्ति, दारुवर्मणः तन्नामकस्य मारणोपायम् = मारणविधिम्, तेभ्यः जनकादिभ्यः कथयित्वा = उक्त्वा, उत्तरम् = प्रतिक्रियामित्यर्थः, मह्यम् = पुष्पोद्भवाय, आख्येयम् = कथनीयम् ।

टिप्पणी—अधिष्ठाय बालचन्द्रिकाम् = अधिशीङ्स्थासां कर्म' सूत्र कर्मत्वम् । निर्जित्य = जीतकर, निर् + जि + क्त्वा + ल्यप् । श्रावम् श्रावम् = सुन सुनकर, श्रु + णमुल्, द्वित्वादि कार्य, 'आभीक्ष्ण्येणमुल् च' सूत्र णमुल्, 'नित्यवीप्सयो." सूत्र द्वित्व, तूष्णीम् = चुपचाप (अव्यय शब्द) । साहसिकः = साहसवाला. मत्वर्थे = अत इनठनौ' सूत्र ठन् दौर्जन्येन = 'दुर्जनस्य भावः इत्यर्थे = गुणवचन् – सूत्रण्यञ् ।

सापि किञ्चिदुत्फुल्लसरसिजानना मामब्रवीत् 'सुभग, क्रूरकर्माणं दारुवर्माणं भवानेव हन्तुमर्हति । तस्मिन् हते सर्वथा युष्मन् मनोरथः फलिष्यति । एवं क्रियताम् । भवदुक्तं सर्वमहमपि तथा करिष्ये इति मामसकृद् विवृतवदना विलोकयन्ती मन्दं मन्दमगारमगात् । अहमपि बन्धुपालमुपेत्य शकुनज्ञात्तस्मात् "त्रिंशद्दिवसानन्तरमेव भवत्सङ्गः संभविष्यति" इत्यश्रृणवम् । तदनु मदनुगम्यमानो बन्धुपालो निजावासं प्रविश्य मामपि निलयाय विससर्ज । मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन दारुवर्मणा रतिमन्दिरे रन्तुं समाहूता बालचन्द्रिका तं गमिष्यन्ती दूतिकां मन्निकटमभिप्रेषितवती । अहमपि मणिनूपुरमेखला कंकण कटक ताटङ्क हारक्षौमकज्जलं वनितायोग्यं मण्डनजातं निपुणतया तत्तत्स्थानेषु निक्षिप्य सम्यगङ्गीकृत मनोज्ञवेषो वल्लभया तया सह तदागार द्वारोपान्तमगच्छम् ।

द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन सादरं विहिताभ्युद्गतिना तेन द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण मदन्विता बालचन्द्रिका संकेतागारमनीयत। नगरव्याकुलां यक्षकथां परीक्षमाणो नागरिकजनोऽपि कुतूहलेन दारुवर्मणः प्रतीहार भूमिमगमत्।

दारुवर्मणो वधः—

विवेकशून्यमतिरसौ रागातिरेकेण रत्नखचित हेमपर्यङ्के हंसतूल गर्भशयनमानीय तरुणीं तस्यै मह्यं तमिस्रासम्यगनवलोकितपुंभावाय मनोरमस्त्रीवेषाय च चामीकरमणिमयमण्डनानि सूक्ष्माणि चित्रवस्त्राणि कस्तूरिकामिलितं हरिचन्दनं कर्पूरसहितं ताम्बूलं सुरभीणि कुसुमानीत्यादिवस्तुजातं समर्प्य मुहूर्तद्वयमात्रं हासवचनैः संलपन्नतिष्ठत्।

हिन्दी अर्थ—(यह सुनकर) कुछ खिले हुए कमल के समान मुखवाली उस बालचन्द्रिका ने कहा—'हे सुभग ! उस क्रूर कर्म करने वाले दारुवर्मा को आप ही मार सकते हैं। उसके मार डालने पर आपका मनोरथ सर्वथा पूर्ण होगा। आप ऐसा ही करें। आपके द्वारा कहा हुआ सबकुछ मैं भी करुंगी" इस प्रकार कहकर अपना मुंह घुमाकर मुझे बार-बार देखती हुई धीरे-धीरे घर को चली गयी। मैं भी बन्धुपाल के पास जाकर उस शकुन ज्ञाता (बन्धुपाल) से "तीस दिन बाद आपका संगम हो जायेगा" यह-(वाक्य) सुना। इसके पश्चात् मेरे पीछे आता हुआ बन्धुपाल अपने घर चला गया तथा मुझे भी अपने घर जाने के लिए विसर्जन किया। मेरे उपाय के माया जाल में फँसे हुए दारुवर्मा ने सुरतगृह में रमण के लिए बालचन्द्रिका को बुलाया, उसके पास जाने वाली बालचन्द्रिका ने मेरे निकट एक दूती को भेजा। मैं भी मणियों से जड़े हुए नूपुर, करधनी, कंकण, कटक (कड़े), कर्णभूषण, हार तथा रेशमी वस्त्र एवं काजल आदि स्त्री के धारण करने योग्य सम्पूर्ण आभूषणों को उचित स्थानों पर धारण करके अच्छी प्रकार से मनोहर वेश को धारण करके, उस प्रेयसी बालचन्द्रिका के साथ दारुवर्मा के गृहद्वार पर पहुँचा द्वारपाल ने हमारा आगमन बताया तो आदर पूर्वक दारुवर्मा उठकर स्वागत आदि के द्वारा, दरवाजे पर के सभी लोगों को हटाकर, मेरे साथ बालचन्द्रिका को संकेत स्थल पर ले गया। नगर में

फैली हुई यक्षकथा की परीक्षा लेने के कुतूहलवश नागरिकसमुदाय दारुवर्मा के द्वार पर गया। विवेक रहित मति वाले दारुवर्मा ने अत्यन्त स्नेह से रत्नों से जड़े हुए (खचित) स्वर्णमय पलंगपर, जिसपर हंस के समान श्वेत गद्दा आदि बिछे थे, बैठाकर, रात के कारण मेरे पुरुषभाव को न पहचान करके तथा मनोहर स्त्री वेश वाले मुझे स्वर्ण एवं मणियों से युक्त आभूषण तथा महीन वस्त्र, कस्तूरी से मिला हुआ चन्दन, कपूर से सहित पान सुगन्धित फूल इत्यादि विभिन्न वस्तुसमूह देकर दो घड़ी तक हास परिहास के द्वारा बात करता हुआ बैठा रहा।

संस्कृतव्याख्या :—सापि = बालचन्द्रिकापि, किञ्चिद् = स्वल्पम्, स्तोकं वा, उत्फुल्लसरसिजानना = उत्फुल्लं विकसितं सरसिजं कमलं तदिव आननं मुखं यस्याः सा, माम् = पुष्पोद्भवम्, अब्रवीत् = अवादीत्, सुभग =सौम्य, क्रूरकर्मणिम् = क्रूरं निष्ठुरं कर्म कार्यं यस्य स तम्, दारुवर्माणम् = तन्नामकम्, भवानेव = त्वमेव, हन्तुम् = मारयितुम्, अर्हति = कर्तुं शक्नोति, तस्मिन् = दारुवर्मणि, हते = निहते सति, सर्वथा = सर्वप्रकारेण युष्मन्मनोरथः = भवदभिलाषः, फलिष्यति = पूर्तिमेष्यति, एवम् = इत्थम् क्रियताम् = विधीयताम्, भवदुक्तम् = त्वया कथितं, सर्वम् = अखिलम्, अहमपि = बालचन्द्रिकापि, तथा = यथोक्तम्, करिष्ये = विधास्यामि, इति = इत्थम्, माम् = पुष्पोद्भवम्, असकृद् = पुनः पुनः, विवृतवदना = विवृत्तं परावृत्तं वदनं मुखं यस्याः सा, विलोकयन्ती = पश्यन्ती, मन्दम् मन्दम् = शनैः शनैः, अगारम् = गृहम्, अगात् = गतवती, अहमपि = पुष्पोद्भवोऽपि, बन्धुपालम् = तन्नामकम्, उपेत्य = प्राप्य, शकुनज्ञात् = शकुनं शुभाशुभं जानाति इति शकुनज्ञः तस्मात् शकुनज्ञात् मौहूर्तिकादित्यर्थः, त्रिंशद्दिवसानन्तरम् = त्रिंशद्दिनानन्तरम्, भवत्सङ्गः = त्वत्संगमः, संभविष्यति = भविष्यति, अश्रृणवम् = श्रवणमकरवम्, तदनु = तदनन्तरम्, मदनु = अस्माकं पश्चात्, मदनुगम्यमानः = मया अनुस्त्रियमाणः, बन्धुपालः, निजावासम् = स्वकीयगृहम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, मामपि = पुष्पोद्भवमपि, निलयाय = गृहाय, विससर्ज = प्रहिणोत्, गमनायानुमतिमनादित्यर्थः, मन्मायोपायवागुरापाशलग्नेन = मम मायया छलेन कापट्येन वा यः उपायः विधिः स एव वागुरा बन्धनं तस्याः पाशः जालं रज्जुः वा तत्र लग्नः

वद्धः तेन, दारुवर्मणा=तन्नामकेन, रतिमन्दिरे=सुरतगृहे, रन्तुम्=निधुवनलीलार्थम्, विहाराय वा, समाहूता = समाकारिता, तम् = दारुवर्माणम्, गमिष्यन्ती=प्रस्थास्यमाना, दूतिकाम् = सन्देशवाहिकाम् मन्निकटम् =मत्समीपम्, अभिप्रेषितवती = प्रेषयामास, अहमपि=पुष्पोद्भवोऽपि मणिनूपुरमेखलाकंकण कटक ताटंक हार क्षौमकज्जलम् = मणिनूपुरः रत्नखचितमञ्जीरः मेखला काञ्चीदाम कटिभूषणं, कंकण कटकं च करभूषणे, ताटंकं कर्णभूषणं, हारः मुक्ताहारः क्षौमं दुकूलं कज्जलं अञ्जनं, वनितायोग्यम् = स्त्रीजनोचितम्, मण्डन जातम् = आभूषण समूहम्, निपुणतया =नैपुण्येन, तत्तत्स्थानेषु = तत्तदङ्गेषु, निक्षिप्य = परिधाय, सम्यक् = सुष्ठु, अङ्गीकृतमनोज्ञवेषः = अङ्गीकृतः स्वीकृतः मनोज्ञः मनोहरः वेषः येन सः, वल्लभया = दयितया, तया = बालचन्द्रिकया, सह = साकम्, तदागारद्वारोपान्तम् = तस्य दारुवर्मणः आगारद्वारस्य भवनद्वारस्य उपान्तम् समीपम्, अगच्छम्=गतवान्, द्वाःस्थकथितास्मदागमनेन = द्वाःस्थैः द्वारपालैः कथितं उक्तं अस्माकमागमनं यस्मै तेन, सादरम् = समानम्, विहिताभ्युद्गतिना=विहिता कृता अभ्युद्गतिः अभ्युत्थानं येनतेन तेन, = दारुवर्मणा, द्वारोपान्तनिवारिताशेषपरिवारेण=द्वारस्य प्रतिहारस्य उपान्ते समीपे निवारिता निरुद्धाः अशेषाः सम्पूर्णाः परिवाराः परिजनाः येन तेन, मदन्विता=मया पुष्पोद्भवेन अन्विता युक्ता, संकेतागारम् = संकेतस्थलम् अनीयत=नीता, नगरव्याकुलाम् = नगरे पुरे व्याकुलाम् व्याप्ताम्, यक्षकथाम् = प्रेतकथाम्, परीक्षमाणः = परीक्षां कुर्वाणः, नागरिकजनोऽपि =पौरजनोऽपि कुतूहलेन=कौतुकेन, प्रतिहारभूमिम्=द्वारदेशम्, अगमत् = अगच्छत्। विवेकशून्यमतिः = विवेकेन ज्ञानेन शून्या विहीना मतिः बुद्धि यस्य सः, असौ = दारुवर्मा, रागातिरेकेण = अनुरागाधिक्येन, रत्नखचितहेमपर्यङ्के = रत्नैः पद्मरागादि मणिभिः खचितः व्याप्त यो हेम्नः स्वर्णस्य पर्यङ्कः पल्यङ्कः तस्मिन्, हंसतूलगर्भशयनम् हंसवत् तूलः पिचुलः सगर्भे मध्ये यस्य तादृशं शयनं शय्यां, अनीय = आरोप्य, संस्थाप्य, तरुणीम् =युवतीम्, तस्यै=बालचन्द्रिकायै, मह्यम्= पुष्पोद्भवाय, तमिस्रासम्यगनवलोकित पुंभवाय = तमिस्रायां रात्रौ सम्यक् अनवलोकितः अदृष्टः पुम्भावः पुरुषभावः यस्य तस्मै, मनोरमस्त्रीवेषाय = मनोरमः मनोज्ञः स्त्रीवेषः नारीवेषः यस्य तस्मै, चामीकरमणिमयमण्डनानि = स्वर्णरत्नम-

याभूषणानि, सूक्ष्माणि = श्लक्ष्णानि, चित्रवस्त्राणि = चित्रवासांसि, कस्तूरिकामिलितम् = मृगमदसुरभितम्, हरिचन्दनम् = गन्धविशेषः, सुरभीणि सुगन्धीनि, कर्पूर सहितम् = घनसार सहितम्, ताम्बूलम् = ताम्बूलवल्लीम्, कुसुमानि = पुष्पाणि, वस्तुजातम् = वस्तु समूहम्, समर्प्य = दत्त्वा, मुहूर्तद्वयमात्रम् = घटिकाद्वयमित्यर्थः, हासवचनैः = परिहासवचोभिः, संलपन् = वार्तालापं कुर्वन्, अतिष्ठत् = स्थितोऽभवत् ।

टिप्पणी—उत्फुल्ल सरसिजानना = लुप्तोपमा अलंकार । शकुनज्ञात् = शकुन जानने वाला अर्थात् ज्योतिषी आदि । शकुनं जानाति इति "आतोऽनुपसर्गेकः" सूत्र से 'क' प्रत्यय । द्वाःस्थ = द्वारपाल "प्रतीहारो द्वारपालद्वास्थ द्वास्थितदर्शकः" इत्यमरः । 'बालचन्द्रिका' यहाँ पर "गौणेकर्मणि दुह्यादेः प्रधाने नीहृकृष्वहाम्' । विभक्तिः प्रथमा ज्ञेया न द्वितीया कदाचन "नियम से 'नी' धातु द्विकर्मक होने से कर्मवाच्य में मुख्यकर्म 'बालचन्द्रिका में प्रथमा हो गयी है । अनीयत = लाया 'णीञ् प्रापणे' कर्म में लुङ् लकार । चामीकर = सोना—'चामीकरं जातरूप महारजतकाञ्चने' इत्यमरः । हूमुर्त = १२ क्षण का काल—"मुहूर्तो द्वादशास्त्रियाम्" इत्यमरः ।

ततो रागान्धतया सुमुखीकुचग्रहणे मतिं व्यधत्त । रोषारुणितोऽहमेनं पर्यङ्कतलान्निःशङ्को निपात्य मुष्टिजानुपादघातैः प्राहरम् । नियुद्धरभसविकलमलंकारं पूर्ववन्मेलयित्वा भयकम्पितां नताङ्गीमुपलालयन् मन्दिराङ्गणमुपेतः साध्वसकम्पित इवोच्चैरकूजमहम्—'हा बालचन्द्रिकाधिष्ठितेन घोराकारेण यक्षेण दारुवर्मा निहन्यते ।' सहसा समागच्छत । पश्यतेमम् इति । तदाकर्ण्य मिलिताः जनाः समुद्यद् वाष्पाः हा-हा-निनादेन दिशो बधिरयन्तः 'बालचन्द्रिकामधिष्ठितं यक्षं बलवन्तं शृण्वन्नपि दारुवर्मा मदान्धस्तामेवायाचत । तदसौ स्वकीयेन कर्मणा निहतः । किं तस्य विलापेन' इति लपन्तः प्राविशन् । कोलाहले तस्मिश्चटुललोचनया सह नैपुण्येन सहसा निर्गतो निजावासमगाम् । ततो गतेषु कतिपयदिनेषु पौरजनसमक्षं सिद्धादेश प्रकारेण विवाह्य तामिन्दुमुखीं पूर्वसंकल्पितान् सुरतविशेषान् यथेष्टमन्वभूवम् । बन्धुपालशकुननिर्दिष्टे दिवसेऽस्मिन्निर्गत्य पुराद् बहिर्वर्तमानो नेत्रोत्सवकारि भवदवलोकनसुखमप्यनुभवामि' इति ।

एवं मित्रवृत्तान्तं निशम्याम्लानमानसो राजवाहनः स्वस्य च सोमदत्तस्य च वृत्तान्तमस्मै निवेद्य सोमदत्तं "महाकालेश्वराराधनानन्तरं भवद्वल्लभां सपरिवारां निजकटकं प्रापय्यागच्छ" इति नियुज्य पुष्पोद्भवेन सेव्यमानो भूस्वर्गायमानमवन्तिकापुरं विवेश। तत्र "अयं मम स्वामिकुमारः" इति बन्धुपालादये बन्धुजनाय कथयित्वा तेन राजवाहनाय बहुविधां सपर्यां कारयन् सकलकलाकुशलो महीसुरवर इति पुरि प्रकटयन् पुष्पोद्भवोऽमुष्य राज्ञो मज्जनभोजनादिकमनुदिनं स्वमन्दिरे कारयामास।

हिन्दी अर्थ—इसके बाद उसने कामादि राग के कारण अन्धे होकर उस सुमुखी बालचन्द्रिका के स्तनों को ग्रहण करने के लिए विचार किया। (इसे देखकर) क्रोध के कारण रक्त नेत्रों वाले मैंने उसे पलंग से नीचे गिरा कर निःशंक होकर मुक्के और लातों के प्रहार से मार डाला। इस मल्ल युद्ध (बाहुयुद्ध) के कारण अपने अस्तव्यस्त आभूषणों को पहले के समान व्यवस्थित करके भय से कांपने वाली शोभनाङ्गी बालचन्द्रिका को आश्वासन देता हुआ मन्दिर के आंगन में आगया और भय के कारण कांपता हुआ सा जोर-जोर से चिल्लाने लगा। हाय! बालचन्द्रिका के ऊपर रहने वाला तथा भयंकर आकार वाला यह यक्ष दारुवर्मा को मार रहा है। जल्दी आप लोग आवें और इसे देखें। यह सुनकर के इकट्ठे होकर आंसू बहाते हुए हाय-हाय शब्द से दिशाओं को बहरा करते हुए "बालचन्द्रिका के ऊपर एक बलवान यक्ष रहता है" यह बात जानते हुए भी इस मदान्ध दारुवर्मा ने उससे प्रणय याचना की। इस कारण यह अपने ही कर्म से मारा गया। इस पर आंसू बहाने से क्या लाभ' इस प्रकार कहते हुए उन लोगों ने प्रवेश किया। उस कोलाहल में उस चञ्चल नेत्रों वाली बालचन्द्रिका के साथ बड़ी ही चतुरता से निकलकर अपने आवास को आगया। इसके पश्चात् कुछ दिन व्यतीत हो जाने पर मैं (पुष्पोद्भव) पुरवासियों के समक्ष उसी सिद्ध की बतायी विधि से उस बालचन्द्रिका से विवाह करके अपने पूर्व अभीष्ट सुखों को भोगने लगा। फिर बन्धुपाल के द्वारा शकुन से बताये हुए दिन पर नगर से बाहर निकलकरके नेत्रों को आनन्ददायी आपके दर्शन का सुख अनुभव किया। इस प्रकार मित्र के वृत्तान्त को सुनकर प्रसन्नचित्त वाले

राजवाहन ने अपने एवं सोमदत्त के वृत्तान्त को उसे बताया और सोमदत्त से कहा कि "तुम महाकाल भगवान शंकर की उपासना करने के पश्चात् अपनी पत्नी एवं परिवार के अन्य लोगों को अपने शिविरादि में पहुँचाकर लौट आओ "इस प्रकार आदेश करके पुष्पोद्भव के द्वारा सेवित राजवाहन ने पृथिवी पर स्वर्ग के तुल्य अवन्तिकापुरी में प्रवेश किया। उस अवन्तिकापुरी में 'यह मेरे स्वामी के पुत्र हैं" यह बन्धुपाल आदि अपने बन्धुओं को पुष्पोद्भव ने बताया तो उनलोगों के द्वारा राजवाहन की बहुविध पूजा करता हुआ सम्पूर्ण कलाओं में यह कुशल ब्राह्मण है इस प्रकार का नगर में प्रचार करता हुआ (अर्थात् राजवाहन के नृपत्व को छिपाता हुआ) स्नान भोजन आदि प्रतिदिन अपने मन्दिर में करवाने लगा।

संस्कृतव्याख्या :—ततः = तदनन्तरम्, रागान्धतया = कामान्धतया, सुमुखीकुचग्रहणे = सुमुख्याः सुवदनायाः बालचन्द्रिकायाः कुचयोः उरोजयोः ग्रहणे मर्दने, मतिम् = बुद्धिम्, व्यधत्त = अकरोत् मर्दनं कर्तुमैच्छदित्यर्थः, रोषारुणितः = रोषेण क्रोधेन अरुणितः रक्तवर्णः, अहम् = पुष्पोद्भवः, एनम् = दारुवर्माणम्, पर्यङ्कतलात् = शय्यातलात्, निपात्य = अवपात्य, मुष्टिजानु पादघातैः = मुष्टेः जानुनोः पादयोः चरणयोश्च घातैः प्रहारैः, प्राहरम् = हननमकरवमितिभावः नियुद्धरभसविकलम् = नियुद्धस्य बाहुयुद्धस्य रभसेन वेगेन विकलं अस्तव्यस्तं विपर्यस्तं वा, अलंकारम् = आभूषणम्, पूर्ववत् = प्रागिव मेलयित्वा = यथास्थानं संस्थाप्य, भयकम्पिताम् = भयेन भीत्या कम्पितां वेपथुमतीम्, नताङ्गीम् = शोभनाङ्गीम् बालचन्द्रिकाम्, उपलालयन् = आश्वासयन्, मन्दिरांगणम् = मन्दिरस्य गृहस्य अंगणं प्रांगणम्, उपेतः = प्राप्त आगतो वा, साध्वसकम्पित इव = साध्वसेन भयेन कम्पित इव कम्पनोपेत इव, उच्चैः = तारस्वरेण, अकूजम् = आक्रोशमकरवम् आक्रन्दमिति भावः, हा = इति खेदे, बालचन्द्रिकाधिष्ठितेन = बालचन्द्रिकां तन्नामिकां अधिष्ठितेन स्थितेन, घोराकारेण = घोरः भयंकरः आकारः आकृतिः यस्य तेन, यक्षेण = प्रेतेन, निहन्यते = हननं क्रियते, सहसा = झटिति इति भावः, समागच्छत = आगच्छत, पश्यत = विलोकयत, इमम् = दारुवर्माणम्, तदाकर्ण्य = तच्छ्रुत्वा, मिलिताः = समवेताः, जनाः = पुरुषाः, समुद्गतबाष्पाः = समुद्गच्छन्ति उद्गच्छन्ति बाष्पाणि

अश्रूणि येषां ते, हाहानिनादेन = हाहा इत्याक्रन्दन शब्देन, दिशः = आशाः, बधिरयन्तः = बधिरीकुर्वन्तः उच्चैः आक्रोशन्त इति भावः, बालचन्द्रिकाधिष्ठितम् = तत्तरुणीस्थितम्, यक्षम् = प्रेतम्, बलवन्तम् = शक्तिमन्तम्, शृण्वन्नपि = जानन्नपि, दारुवर्मा, मदान्धः = विवेकहीनः सन्, ताम् = बालचन्द्रिकाम्, अयाचत = प्रणययाचनमकरोत्, तत् = तस्मात्, असौ = दारुवर्मा, स्वकीयेन = निजेन, कर्मणा = कुकार्येण, निहतः = मृत्युमुपगतः, किम् = किं प्रयोजनम्, तस्य = दारुवर्मणः, विलापेन = आक्रन्दनेन, इति = इत्थं, मिथः = परस्पर, लपन्तः = कथयन्तः, प्राविशन् = आगच्छन्, कोलाहले = कलकले, चटुललोचनया = चटुले चञ्चले लोचने नयने यस्या सा तया, सह = साकम्, नैपुण्येन = कौशलेन, सहसा = अकस्मात्, निर्गतः = बहिरागतः, निजावासम् = स्वकीयनिवासस्थानम्, आगाम् = आगच्छम् ततः = तदनन्तरम्, गतेषु = अतीतेषु, कतिपयदिनेषु = कतिपयदिवसेषु, पौरजनसमक्षम् = पौरजनानां नागरिकाणां समक्षमग्रे सिद्धादेशप्रकारेण = तत्तापसोद्दिष्टविधिना, विवाह्य = परिणीय, ताम् = बालचन्द्रिकाम्, इन्दुमुखीम् = चन्द्रमुखीम्, पूर्वसंकल्पितान् = प्रागीप्सितान्, सुरतविशेषान् = कामक्रीडाः अन्वभूवम् = अनुभवमकरवम्, बन्धुपालशकुननिर्दिष्टे = बन्धुपालस्य निजमित्रस्य शकुनेन मंगलसूचकेन निर्दिष्टे उक्ते, दिवसे = दिने, निर्गत्य = बहिरागत्य, पुरात् = नगरात्, बहिः = बाह्यस्थाने, वर्तमानः = स्थितः सन्, नेत्रोत्सवकारि = नेत्रयोः नयनयोः उत्सवकारि आनन्दजनकं, भवदवलोकनसुखम् = भवतः तव अवलोकनस्य सुदर्शनस्य सुखमानन्दं, अनुभवामि = आवहामि एवम् = इत्थं प्रकारेण, मित्रवृत्तान्तम् = सुहृदुदन्तम्, निशम्य = आकर्ण्य, अम्लानमानसः = अम्लानं अपरिखिन्नं मानसं हृदयं यस्यासौ, राजवाहनः तन्नामकः, स्वस्य = निजस्य, सोमदत्तस्य = तदाख्यमित्रस्य, वृत्तान्तम् = कथानकम्, अस्मै = पुष्पोद्भवाय, निवेद्य = उक्त्वा, महाकालेश्वराराधनानन्तरम् = महाकालस्य = उज्जयिनीस्थितस्य तदाख्य शिवस्य, आराधनानन्तरम् पूजानन्तरं, भवद्वल्लभाम् = त्वद्दयिताम् सपरिवाराम् = सपरिजनाम्, निजकटकम् = स्वशिविरम्, प्रापय्य = नीत्वा, आगच्छ = समागच्छ, इति = इत्थम् नियुज्य = आरोप्य, सेव्यमानः = उपलाल्यमानः, भूस्वर्गायमानम् = भुवि पृथिव्यां स्वर्गं इव आचरतीति

तं पृथिव्यां स्वर्गोपमम्, अवन्तिकापुरम् = उज्जयिनीम्, विवेश = आगतवान्, तत्र = उज्जयिन्याम्, अयम् = पुरोवर्तमानः, मम = पुण्योद्भवस्य, स्वामिकुमारः = स्वामिनः प्रभोः कुमारः पुत्रः बन्धुपालादये = बन्धुपालः तदाख्यं मत्रं आदिः यस्य तस्मै बन्धुजनाय = बन्धुवर्गाय, कथयित्वा = उक्त्वा, तेन = बन्धुजनेन, बहुविधाम् = विविधाम्, सपर्याम् = पूजाम्, कारयन् = अनुभावयन्, सकलकलाकुशलः = सकलासु निखिलासु कलासु चतुःषष्टिकलासु कुशलः निपुणः, महीसुरवरः = महीसुरेषु विप्रेषु वरः श्रेष्ठः, पुरि = नगरे, प्रकटयन् = प्रथयन्, राज्ञः = नृपस्य मज्जन भोजनादिकम् = स्नानाशनादिकम्, अनुदिनम् = प्रतिदिनम्, स्वमन्दिरे = स्वगृहे, कारयामास = अकार्यत ।

टिप्पणी—नियुद्धः बाहुयुद्ध "नियुद्धं बाहुयुद्धेऽथतुमुलं रणसंकुले इत्यमरः । नैपुण्येन = निपुणतासे = गुणवचन – सूत्र ष्यञ् प्रत्यय । विवाह्य = विवाहकरके "वि + वह + क्त्वा + ल्यप् । अन्वभूवम् = अनुभवकिया "अनु + भू + लुङ् + उत्तम पु०, एकवचन । भूस्वर्गायमानम् = पृथिवी पर स्वर्ग के समान आचरण करते हुए 'भुवि स्वर्ग इवाचरतीति' इस विग्रह में 'कर्तुः क्यङ् सलोपश्च' सूत्र से आचारार्थे क्यङ् प्रत्यय ।

॥ चतुर्थ उच्छ्वास समाप्त ॥

अथ पञ्चमोच्छ्वासः

राजवाहनचरितम्–वसन्तागमनम्—

अथ मीनकेतनसेनानायकेन मलयगिरिमहीरुहनिरन्तरावासि भुजङ्गमभुक्तावशिष्टेनेव सूक्ष्मतरेण धृतहरिचन्दनपरिमलभरेणेव मन्दगतिना दक्षिणानिलेन वियोगिहृदयस्थं मन्मथानलमुज्ज्वलयन्, सहकारकिसलयमकरन्दास्वादनरक्तकण्ठानां मधुकरकलकण्ठानां काकलीकलकलेन दिक्चक्रं वाचालयन् मानिनीमानसोत्कलिकामुपनयन्, माकन्दसिन्दुवाररक्ताशोककिंशुकतिलकेषु कालिकामुपपादयन्, मदनमहोत्सवाय रसिकमनांसि समुल्लासयन, वसन्तसमयः समाजगाम ।

राजवाहनस्यावन्तिसुन्दरीदर्शनम्—

तस्मिन्नतिरमणीये कालेऽवन्तिसुन्दरी नाम मानसारनन्दिनी प्रियवयस्यया बालचन्द्रिकया सह नगरोपान्तरम्योद्याने विहारोत्कण्ठया पौरसुन्दरीसमवायसमन्विता कस्यचिच्चूतपोतकस्य छायाशीतले सैकततले गन्धकुसुमहरिद्राक्षतचीनाम्बरादिनानाविधेन परिमलद्रव्यनिकरेण मनोभवमर्चयन्ती रेमे।

शब्दार्थ—माकन्द=आम्र। सिन्दुवार=निर्गुण्डी (संभालू)। किंशुक—ढाक (टेसू)। चूतपोतक—आम का छोटा वृक्ष।

हिन्दी अर्थ—इसके बाद वसन्त ऋतु आयी (यह प्रमुख वाक्य है।) कामदेव की सेना के नायक तथा मलय पर्वत के वृक्षों पर निवास करने वाले सांपों के पीने से बचे हुए एवं चन्दन की गन्ध से सुवासित, मन्दगति, वाले दक्षिण वायु के द्वारा वियोगियों के हृदय में विद्यमान कामाग्नि को बढ़ाता हुआ आम्र मञ्जरियों के पराग का रसास्वादन करने से रक्तकण्ठ (मधुर) वाले भ्रमरों एवं कोयलों के शब्दों के द्वारा दिशाओं को मुखरित करता हुआ (वसन्तकाल) मानवती स्त्रियों के हृदय को उत्कण्ठित करता हुआ, आम, निर्गुण्डी रक्ताशोक, ढाक एवं तिलक आदि वृक्षों में कलियों को अङ्कुरित करता हुआ, काम महोत्सव अर्थात् रतिक्रीडा के लिए रसिकों के मनों को उल्लासित करता हुआ वसन्त काल आ गया।

उस अति मनोहर समय में राजा मानसार की पुत्री अवन्तिसुन्दरी अपनी सहेली बालचन्द्रिका के साथ विहार करने की इच्छा से, नागरिक अंगनाओं से युक्त होकर नगर के समीपस्थ रमणीय उद्यान में किसी छोटे आम की छाया से शीतल बालुकामय स्थान पर गन्ध, पुष्प, हल्दी, अक्षत एवं रेशमी वस्त्रों तथा अन्य सुगन्धित द्रव्यों से कामदेव की पूजा करती हुई क्रीडा करने लगी।

संस्कृतव्याख्या:— "अथ वसन्तसमयः समाजगाम" इति प्रमुख वाक्यम्। अथ=तदनन्तरम्, मीनकेतन सेनानायकेन=मीनः मत्स्यः केतनः केतने वा ध्वजः यस्य सः काम इत्यर्थः तस्य सेनायाः सैन्यस्य नायकः प्रमुखवीरः तेन सेनापतिनेति भावः, मलयपवनस्य कामोद्दीपकत्वान्नायकत्वमुचितम्, मलयगिरिमहीरुहनिरन्तरावासि भुजङ्गमभुक्तावशिष्टेनेव=मलय

गिरेः मलयाचलस्य महीरुहेषु वृक्षेषु निरन्तरं अन्तरंविना निविडमिति आवासिनः वास्तव्याः भुजङ्गमाः तैः भुक्तावशिष्टेन उपभुक्तावशिष्टेन भुजङ्गमानां पवनस्याशनत्वंप्रसिद्धमेव, सूक्ष्मतरेण = मन्दतरेण, धृतहरिचन्दन परिमलभरेणेव = धृत गृहीतः हरिचन्दनस्य वृक्षविशेषस्य परिमलभरः आमोदातिशयः येन तेनेव, मन्दगतिना = मन्दा मन्थरा गतिः गमनं यस्य तेन, दक्षिणानिलेन=दक्षिणवायुवा, वियोगिहृदयस्थं=वियोगिनां विरहिणां हृदयेषु स्वान्तेषु, तिष्ठतीति वियोगिहृदयस्थं विरहिचित्तस्थितम, मन्मथानलम् = कामानलम्, उज्ज्वलयन् = उद्दीपयन्, सहकार किसलयमकरन्दास्वादनरक्तकण्ठानाम् = सहकाराणां रसालानां किसलयमकरन्दयो पल्लवपरागयोः स्वादनेन आस्वादनेन रक्तः मधुररागोपेतः कण्ठः स्वरः येषां तेषाम्, मधुकरकलकण्ठानाम् = मधुकराश्च कलकण्ठाश्चते तेषां मधुकर कलकण्ठानां भ्रमरकोकिलानाम्, काकलीकलकलेन = पिकवाणीकोलाहलेन, दिक्चक्रवालम् = दिशां काष्ठानां चक्रवालं मण्डलम्, इति दिक्चक्रवालम, वाचालयन् =मुखरंकुर्वन्, मानिनीमानसोत्कलिकाम् = मानिनां मानवतीनां मानसस्य चित्तस्य उत्कलिकामुत्कण्ठां, उपनयन् = प्रापयन्, माकन्दसिन्दुवाररक्ताशोक किंशुकतिलकेषु = माकन्दश्च सहकारश्च सिन्दुवारश्च निर्गुण्डी च रक्ताशोकश्च रक्तवञ्जुलश्च किंशुकश्च पलाशश्च तिलकश्च क्षुरकश्च ते तेषु, कलिकाम् = कोरकम, उपपादयन् = जनयन्, मदनमहोत्सवाय = काममहोत्सवाय, रसिकमनांसि = रसिकानां कामिजनानां मनांसि चेतांसि, समुल्लासयन् = प्रोत्साहयन्, वसन्तसमयः = ऋतुराज इत्यर्थः, समाजगाम् = आगतः तस्मिन् = तत्काले, अतिरमणीये = अतिमनोहरे, काले = समये, अवन्तिसुन्दरी = तन्नामिका, मानसारनन्दिनी = मानसारपुत्री, प्रियवयस्यया = प्रियसख्या, वालचन्द्रिकया = तन्नामिकया, सह = सार्धम, नगरोपान्तरम्योद्याने = नगरस्य पुरस्य उपान्ते समीपे यत् रम्यं मनोहरं उद्यानं उपवनं तस्मिन्, विहारोत्कण्ठया = क्रीडोत्कण्ठया, पौरसुन्दरीसमवायसमन्विता = पुरेभवाः पौराश्च ताः सुन्दर्यः तासां अथवा पौराणां सुन्दरीणां समवायेन समूहेन समन्विता उपेता, चूतपोतकस्य = रसालवालवृक्षस्य, छायाशीतले = छायया अनातपेन शीतले शैत्ययुक्ते शिशिरे वा, सैकततले = वालुकामय प्रदेशे गन्धकुसुमहरिद्राक्षतचीनाम्बरादि नानाविधेन = गन्धश्च चन्दनादि

गन्धश्च कुसुमंच पुष्पं च हरिद्रा च अक्षताश्च तण्डुलाश्च चीनाम्बरश्च सूक्ष्मवस्त्रंच तानि आदौ तद्, नानाविधेन=बहुविधेन, परिमलद्रव्यनिकरेण =गन्धद्रव्यसमूहेन, मनोभवम् = कामम्, अर्चयन्ती = पूजयन्ती, रेमे= चिक्रीड, विविधक्रीडविलासं कृतवतीत्यर्थः।

टिप्पणी–मलयगिरि—इत्यादि में हेतुत्प्रेक्षालंकार है। काकली= अस्फुटध्वनि या कोयल की वाणी 'काकली तु कले सूक्ष्मे ध्वनौ तु मधुरास्फुटे' इत्यमरः। वाचालयन्=वच्+ ण्यत्,शतृ। चीनाम्बर=रेशमी वस्त्र। सम्भव है कि एक प्रकार का वस्त्र जो चीन देश से आता था उसे ही चीनाम्बर या चीनांशुक कहते थे। कालिदास ने भी प्रयोग किया है। "चीनांशुकमिव केतोः प्रतिवातं नीयमानस्य" शाकु० १–३४। रेमे=क्रीडा की–'रमु' क्रीडायाम् लिट् लकार।

तत्र रतिप्रतिकृतिमवन्तिसुन्दरीं द्रष्टुकामः काम इव वसन्त-सहायः पुष्पोद्भवसमन्वितो राजवाहनः तदुपवनं प्रविश्य तत्र तत्र मलयमारुतान्दोलितशाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुम फल-समुल्लसितेषु रसालतरुषु कोकिलकीरालिकुलमधुकराणामालापान् श्रावं श्रावं किञ्चिद् विकसदिन्दीवरकह्लारकैरव राजीव-राजी केलि-लोल-कलहंस-सारस-कारण्डव-चक्रवाकचक्रवालकलरव व्याकु-लविमलशीतलसलिलललितानि सरांसि दर्शं दर्शममन्दलीलया ललनासमीपमवाप। बालचन्द्रिकया "निःशङ्कमित आगम्यताम्" इति हस्तसंज्ञया समाहूतो निजतेजोनिर्जितपुरुहूतो राजवाहनः कृशोदर्या अवन्तिसुन्दर्या अन्तिकं समाजगाम।

हिन्दी अर्थ—उस उद्यान में वसन्त के सहित कामदेव के तुल्य पुष्पोद्-भव के सहित राजवाहन काम की पत्नी रति के तुल्य सुन्दरी अवन्ति-सुन्दरी को देखने की इच्छा से प्रवेश करके वहाँ पर (उद्यान में) मलय पवन के झोकों से हिलते हुए शाखाओं में लगे पुष्प-फल एवं पल्लवों के द्वारा शोभित आमके वृक्षों को, कोयलो, तोतों, भ्रमरों की मधुर ध्वनि को सुनते हुए, कुछ खिले हुए नीलकमल, श्वेतकमल तथा कुमुद एवं साधारण कमलों पर क्रीडारत चञ्चल कलहंस, सारस, कारण्डव (बत्तखविशेष) चकवा चकई इत्यादि समूह के मधुर कलरव से व्याप्त निर्मल तथा शीतल

जलवाले तालावों को लीलापूर्वक देखता हुआ उस सुन्दरी के समीप आया।

वालचन्द्रिका ने हाथ के संकेत से राजवाहन को आप निःसंकोच होकर आइये" कहकर बुलाया। अपने तेज से इन्द्र को भी जीतने वाला राजवाहन उस कृशोदरी अवन्तिसुन्दरी के समीप गया।

संस्कृतव्याख्या :—तत्र = तत्काले, उद्याने वा, रतिप्रतिकृतिम् = रतेः कामपत्न्याः प्रतिकृतिः प्रतिमा मूर्तिः वा ताम्, द्रष्टुकामः = द्रष्टुमिच्छुः, काम इव = मदन इव, वसन्तसहायः = वसन्तः कुसुमाकरः सहायः सहयोगी वयस्यो वा यस्य सः, पुष्पोद्भव समन्वितः = स्व सुहृद् युक्तः, राजवाहनः = तन्नामकः, तदुपवनम् = तदुद्यानम्, प्रविश्य = गत्वा, तत्रतत्र = उद्याने, मलयमारुतान्दोलित शाखानिरन्तरसमुद्भिन्नकिसलयकुसुमफलसमुल्लसतेषु = मलयमारुतः मलयानिलः तेन आन्दोलिताः चालिताः शाखाः तासु निरन्तरं निरवच्छिन्नं समुद् भिन्नैः विकसितैः किसलयैः पल्लवैः कुसुम फलैः पुष्पफलैः समुल्लसितेषु शोभितेषु, रसालतरुषु = आम्रद्रुमेषु, कोकिल कीरालि कुलमधुकराणाम् = कोकिलानां परभृतिकानां कीराणां शुकानां अलीनां भ्रमराणां कुलं समूहः तस्य मधुकराणां (लक्षणया मधुर भाषकानां ननु भ्रमराणां, द्विरुक्तिः स्यात् आदौ 'अलि' शब्दस्य ग्रहणात्) आलापान् = शब्दान्, श्रावम् श्रावम् = पुनः पुनः श्रुत्वा, किञ्चिद् = स्वल्पम्, विकसदिन्दीवरकह्लारकैरवराजीवराजी केलिलोलकलहंससारस कारण्डव चक्रवाक चक्रवालकलरव व्याकुलविमलशीतलसलिलललितानि = विकसन्तीषु प्रस्फुटन्तीषु इन्दीवराणां नीलकमलानां कह्लाराणां सौगन्धिकानां कैरवाणां कुमुदानां राजीवानां कमलानां च राजीषु पंक्तिषु केलिभिः क्रीडाभिः लोलाः चञ्चलाः कलहंसाः कादम्बाः, सारसाः पक्षिविशेषाः, राह्लाः वा कारण्डवाः मद्गवः चक्रवाकाश्च कोकाश्च तेषां चक्रवालं समूहः तस्य कलरवेण अव्यक्त ध्वनिना व्याकुलानि व्याप्तानि विमलानि निर्मलानि शीतलानि शिशिराणि यानि सलिलानि जलानि तैः ललितानि मनोहराणि, अथवा विकसन्ति यानि इन्दीवर कह्लारकैरव राजीवानि—तेषां राजिषु— शेषं पूर्ववत (अत्र विकसन्ति' इति पदं इन्दीवराणां विशेषणं तत्रतु 'राजी' इत्यस्य विशेषणमेतावानेव विशेषः। सरांसि = सरोवराणि, दर्शं दर्शम् = वारंवारं दृष्ट्वा, अमन्दलीलया = लीलाविलासेनेत्यर्थः ललना समीपम् = कामिनीसमीपम् अवन्तिसुन्दरीमित्यर्थः अवाप = उपजगाम।

वालचन्द्रिकया = तन्नामिकया निःशङ्कम् = निर्विशङ्कम्, इतः = अत्र, आगम्यताम् = आगच्छ, हस्तसंज्ञया = करसंकेतेन, समाहूतः समाकारितः, निजतेजोनिर्जितपुरुहूतः = निजतेजसा निजैश्वर्येण निर्जितः पराभूतः पुरुहूतः इन्द्रः येन सः, कृशोदर्याः = कृशं क्षीणं उदरं यस्याः सा तस्याः मुष्टिमेयमध्यायाः इत्यर्थः अन्तिकम् = समीपम, समाजगाम = आययौ।

टिप्पणी—द्रष्टुकामः काम इव—मे उत्प्रेक्षा अलंकार है इन्दीवर= नीलकमल "इन्दीवरं च नीलेऽस्मिन्" इत्यमरः। कह्लार = श्वेतकमल जो सायंकाल फूलता है।"सौगन्धिकं तु कह्लारं हल्लकं रक्तसन्ध्यकम्" इत्यमरः। कारण्डव = जलकाक या बतख "मद्गुः कारण्डवः प्लवः" इत्यमरः। श्रावं श्रावम् = श्रु धातु से वार-वार या निरन्तरता अर्थ में "आभीक्ष्ण्येणमुल् च" सूत्र से णमुल्—तथा "नित्यवीप्सयोः' सूत्र द्वित्व। इसी प्रकार "दर्शं दर्शम्' बनेगा।

अवन्तिसुन्दरी वर्णनम्—

या वसन्तसहायेन समुत्सुकतया रतेः केलीशालभञ्जिकाविधित्सया कञ्चन नारीविशेषं विरच्यात्मनः क्रीडाकासारशारदारविन्द सौन्दर्येण पादद्वयम्, उद्यानवनदीर्घिका मत्तमरालिकागमनरीत्या लीलालसगतिविलासम्, तूणीरलावण्येन जङ्घे, लीलामन्दिरद्वार कदलीलालित्येन मनोज्ञमूरुयुगम्, जैत्ररथचातुर्येण घनं जघनम्, किञ्चद् विकसल्लीलावतंस कह्लार-कोरक-कोटरानुवृत्या गङ्गावर्तसनाभि नाभिम्, सौधारोहणपरिपाट्यावलित्रयम्, मौर्वीमधुकरपंक्तिनीलिमलीलया रोमावलिम्, पूर्णसुवर्णकलशशोभया कुचद्वन्द्वम् लतामण्डप सौकुमार्येण वाहू, जयशंखाभिख्यया कण्ठम्, कमनीयकर्णपूरसहकारपल्लवरागेण प्रतिविम्बीकृतबिम्बं रदनच्छदम्, बाणायमान पुष्पलावण्येन शुचि स्मितम्, अग्रदूतिकाकलकण्ठिकाकलालापमाधुर्येणवचन जातम्, सकलसैनिकनायकमलयमारुतसौरभेण निःश्वासपवनम्, जयध्वजमीनदर्पेण लोचनयुगलम्, चापयष्टिश्रिया भ्रूलते, प्रथमसुहृदः सुधाकरस्यापनीतकलंकया कान्त्या वदनम्, लीलामयूर बर्हं भङ्ग्या केशपाशम्, च विधाय समस्त मकरन्दकस्तूरिका सम्मतेन मलयजरसेन प्रक्षाल्य कर्पूरपरागेण सम्मृज्य निर्मितेव रराज।

हिन्दी अर्थ—जिस अवन्तिसुन्दरी को कामदेव ने उत्सुकता वश अपनी रति की क्रीडा पुत्तलिका रूप नारी की रचना की, जिसके चरण उसने (कामदेव) अपने क्रीडा तालाब के शरत्कालिक कमलों के सौन्दर्य से बनाए, अपने उपवन की बावली की मत्त हंसिनी की चाल से उसकी लीला युक्त अलसायी चाल बनायी, अपने तरकस के सौन्दर्य से उसकी जांघे, अपने लीला भवन के द्वार पर स्थित केलों के सौन्दर्य से ऊरुयुगल, जयनशीलरथ के चातुर्य से सटा हुआ जघन, कुछ खिले हुए कान के आभूषण-भूत कमल की कलिका के समान छिद्र वाली गंगा जी के भंवर के तुल्य नाभि, भवन पर चढ़ने के लिए जीना (सीढ़ियों) के तुल्य त्रिवली, धनुष की प्रत्यञ्चा पर स्थित भ्रमर समुदाय की कालिमा से युक्त रोमराजि, पूर्ण स्वर्णघट की शोभा से दोनों उरोज, लतामण्डप की सुकुमारता से दोनो भुजाएँ, जयशंख की शोभा से कण्ठ, मनोहर कान में पहने हुए आम्र पल्लव की लालिमा से प्रतिबिम्बित बिम्बाफल के तुल्य उसके ओठ, बाणों के समान आकार वाले पुष्प सौन्दर्य से शुद्ध हास्य, अग्रदूती कोयल के मधुर वाणी के माधुर्य से उसकी वाणी, सम्पूर्ण सेना के नायक मलयपवन की गन्ध के द्वारा उसकी निःश्वास, विजयध्वज में बनी मछली के गर्व से दोनो नेत्र, अपने धनुष की शोभा से भ्रूलतायें, अपने मित्र चन्द्रमा की निष्कलंक कान्ति से मुख, क्रीडारत मयूर की पूंछ भंगिमा से केशपाश, युक्त उसे बनाकर सब प्रकार के पराग, कस्तूरी एवं चन्दन रस से धोकर तथा कपूर के चूर्ण से पोंछ करके अर्थात् चन्दनरसादि से नहलाकर ऊपर से कपूर के पाउडर लगाकर अलंकृत की हुई सी वह सुशोभित हुई।

संस्कृतव्याख्या :—या = अवन्तिसुन्दरी, वसन्तसहायेन = वसन्तः ऋतुराजः सहायः वयस्यः यस्यतेन कामदेवेनेत्यर्थः, समुत्सुकतया = औत्सुक्येन, रतेः = कामपत्न्याः, केलीशालभञ्जिकाविधित्सया — केली क्रीडा तदर्थं या शालभञ्जिका पुत्रिका तस्याः विधित्सा विधातुमिच्छा तया, नारीविशेषम्, प्रमदाविशेषम्, कञ्चन = अकथनीयम्, विरच्य = निर्माय, आत्मनः =स्वस्य, क्रीडाकासारशारदारविन्दसौन्दर्येण = क्रीडाकासारे केलिसरोवरे यानि शारदानि शरत्काल सम्बन्धीनि अरविन्दानि कमलानि तेषां सौन्दर्येण लावण्येन, पादद्वयम् = चरणयुगलम्, उद्यानवनदीर्घिकामत्तमरालिकागमन-

रीत्या उद्यानवने उपवने दीर्घिका वापी तस्यां या मत्तामदोन्मत्तामरालिका हंसी तस्य गमनरीत्या गमनप्रकारेण, लीलालसगतिविलासम् = लीलया विलासेन अलसं मन्दं मन्थरं वा गतिविलासं गमनप्रकारं, मन्दगतिकेत्यर्थः, तूणीरलावण्येन = तूणीरस्य निषङ्गस्य लावण्येन सौन्दर्येण जंघे जंघायुगलम्, लीलामन्दिरद्वारकदलीलालित्येन = लीलामन्दिरस्य क्रीडाभवनस्य द्वारे प्रतिहार भूमौ या कदली रम्भा तस्याः लालित्येन सौन्दर्येण, मनोज्ञम् = मनोहरम्, ऊरुयुगम् = सक्थियुगलम्, जैत्ररथचातुर्येण = जैत्ररथस्य विजयनशीलस्यन्दनस्य चातुर्येण = कौशलेन, घनम् = निविडम् जघनम् = अवयवविशेषम्, किञ्चित् = ईषत्, विकसल्लीलावतंसकह्लारकोरककोटनानुवृत्या = विकसन् प्रस्फुटन् लीलावतंसः कर्णभूषणं (कर्णावतंसीभूत इति भावः) यः कह्लारस्य सौगन्धिकस्य कोरकः कलिका तस्य कोटरः मध्यभागः तस्य अनुवृत्या सादृश्येन, गङ्गावर्तसनाभि = गङ्गायाः देवनद्याः आवर्तः भूमिः तस्य सनाभि समं सदृशं वा, सौधारोहणपरिपाट्या = सौधस्य सुधा लिप्तप्रासादस्य यद् आरोहणं सोपानं तस्य परिपाट्या अनुक्रमेण, वलित्रयम् = त्रिवलिम्, पूर्णसुवर्णकलशशोभया = पूर्णः सलिलपूर्णः यः सुवर्णकलशः स्वर्णघटः तस्य शोभया अभिख्यया, कुचद्वन्द्वम् = स्तनयुगलम्, लतामण्डपसौकुमार्येण = लतामण्डपस्य व्रततिकुञ्जस्य सौकुमार्येण सुकुमारतया, बाहू = भुजौ, मौर्वीमधुकर पंक्तिनीलिमलीलया = मौर्वी प्रत्यञ्चा एव मधुकर पंक्तिः भ्रमर श्रेणी तस्या यो नीलिमा कृष्णिमा तस्य लीलया सादृश्येनेत्यर्थः, रोमावलिम् = रोमराजिम्, जयशंखाभिख्यया = जयशंखस्य विजयशंखस्य अभिख्यया शोभया, कण्ठम् = ग्रीवाम्, कमनीय कर्णपूर सहकार पल्लवरागेण = कमनीयः मनोहरः कर्णपूरः कर्णताटंकः सहकारपल्लवः रसालकिसलयः तस्य रागः रक्तिमा तेन, प्रतिबिम्बीकृतबिम्बम् = प्रतिबिम्बीकृतं बिम्बं बिम्बफलं येन तत्, (अस्याः अधररचना = पूर्वं बिम्बफलं केवलं बिम्बमासीत् किन्तु साम्प्रतम् प्रतिबिम्बं जातं तद्रचनातः अर्थात् बिम्बफलादापि अधिकं अस्याः ओष्ठे सौन्दर्यं मित्यर्थं, बाणायमानपुष्पलावण्येन = बाणवदाचरतीति बाणायमानं शरायमाणं यत् पुष्पं कुसुमं तस्य लावण्येन सौन्दर्येण, शुचि = पवित्रम्, शुभ्रतास्मितम् = हासयम्, अग्रदूतिकाकलकण्ठिकाकलालापमाधुर्येण = अग्रदूतिका प्रमथदूतिका या कलकण्ठिका कोकिला तस्याः कलालापस्य

काकल्याः माधुर्येण मधुरतया, वचनजातम् = वाक्यवृन्दम्, सकलसैनिकनायकमलयमारुतसौरभ्येण = सकलसैनिकानां सम्पूर्णवीराणां (कामस्य) नायकः सेनापतिः यो मलयमारुतः मलयपवनः तस्य सौरभ्येण सौगन्ध्येन, निःश्वासपवनम् = श्वासवायुम्, जयध्वजमीनदर्पेण = जयध्वजस्य विजयकेतोः यः मीनः मत्स्यः तस्य दर्पेण गर्वेण, लोचनयुगलम् = नेत्रद्वन्द्वम्, चापयष्टिश्रिया = चापयष्टिः धनुर्लता तस्याः श्रिया प्रभया, भ्रूलते = भ्रूयुगले, प्रथमसुहृदः = प्रधानमित्रस्य (कामस्येतिशेषः) सुधाकरस्य = चन्द्रस्य, अपनीतकलंकया = अपनीतः अपाकृतः कलंकः लाञ्छनं यस्याः तया कान्त्या = प्रभया, वदनम् = मुखम्, लीलामयूरबर्हभङ्ग्या = लीलामयूरः क्रीडामयूरः तस्य बर्हं पिच्छं तस्य भङ्ग्या रचनया, केशपाशम् = चिकुरकलापम्, विधाय = कृत्वा, समस्तमकरन्दकस्तूरिकासम्मितेन = समस्तयोः मकरन्दकस्तूरिकयोः परागमृगमदयोः सम्मितेन सम्मिलितेन, मलयजरसेन = चन्दनरसेन, प्रक्षाल्य = प्रक्षालनं कृत्वा, कर्पूरपरागेण = घनसार चूर्णेन, सम्मृज्य = संसृज्य, निर्मितेव = रचितेव, रराज = शुशुभे ।

टिप्पणी—निर्मितेव रराज – उत्प्रेक्षा अलंकार । समुत्सुकतया = सम् + उत्सुक 'तस्य भावः त्वतलौ' तत् । लावण्येन = लवण "गुणवचन-सूत्र से ष्यञ्, वृद्धि । सम्मृज्य = सम् + मृज् + क्त्वा + ल्यप् । रराज "राजृ दीप्तौ, लिट् लकार-प्र० पु० एकव० । पाश = समूह "पाशः पक्षश्च हस्तश्च कलापार्थाः कचात्परे" इत्यमरः ।

सा मूर्तिमतीव लक्ष्मीर्मालवेशकन्यका स्वेनैवाराध्यमानं संकल्पितवरप्रदानायाविर्भूतं मूर्तिमन्तं मन्मथमिव तमालोक्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेव मदनावेशवती चकम्पे । तदनु क्रीडाविश्रम्भान्निवृत्ता लज्जया कानि कान्यपि भावान्तराणि व्यधत्त ।

"ललनाजनं सृजता विधात्रा नूनमेषा घुणाक्षरन्यायेन निर्मिता । नो चेदब्जभूरेवंविधो निर्माणनिपुणो यदि स्यात्तर्हि तत्समानलावण्यामन्यां तरुणीं किं न करोति" इति सविस्मयानुरागं विलोकयतस्तस्य समक्षं स्थातुं लज्जितासतो किञ्चित् सखीजनान्तरितगात्रा तन्नयनाभिमुखैः किञ्चिदाकुञ्चितैरञ्चितभ्रूलतैरपाङ्ग वीक्षितैरात्मनः

कुरङ्गस्थानायमानलावण्यं राजवाहनं विलोकयन्त्यतिष्ठत्। सोऽपि तस्यास्तदोत्पादितभावरसानां सामग्र्या लब्धबलस्येव विषमशरस्य शरव्यायमाणमानसो बभूव। सा मनसीत्थमचिन्तयत्–"अनन्य साधारण सौन्दर्येणानेन कस्यां पुरि भाग्यवतीनां तरुणीनां लोचनोत्सवः क्रियते। पुत्ररत्नेनामुना पुरन्ध्रीणां पुत्रवतीनां सीमन्तिनीनां का नाम सीमन्तमौक्तिकीक्रियते। कास्य देवी! किमत्रागमनकारणमस्य। मन्मथो मामपहसितनिजलावण्यमेनं विलोकयन्तीमसूययेवातिमात्रं मथ्नन्निजनाम सान्वयं करोति। किं करोमि, कथमयं ज्ञातव्य" इति।

हिन्दी अर्थ—वह शरीरधारिणी लक्ष्मी के समान मालवराज की पुत्री (अवन्तिसुन्दरी) अपने द्वारा सेवित तथा अभीष्ट वर देने के लिए आये हुए साक्षात् कामदेव के तुल्य उसे (राजवाहन को) देखकरके मन्द वायु के झोकों से कांपती हुई लता के समान कांपने लगी। इसके पश्चात् लज्जावशात् क्रीडा बन्द करके कुछ भावों में डूबी रही। 'नारीजन की रचना करते समय ब्रह्मा के द्वारा यह घुणाक्षर न्याय (संयोगवशात्) से ही बन गयी" नहीं तो यदि ब्रह्मा इतने निपुण होते तो उसके समान सौन्दर्य वाली दूसरी युवती की रचना क्यों नहीं'? "इस आश्चर्य और अनुराग के साथ देखते हुए राजवाहन के समक्ष वह रुकने में असमर्थ होती तथा लज्जालु होकर, सखी समुदाय की आड़ में अपने को छिपाकर राजवाहन को भ्रुकुटि कटाक्षों से देखती हुई अपने को मृग के समान जाल में फसाने वाले सौन्दर्य से युक्त राजवाहन को देखती हुई स्थित रही। राजवाहन भी उसके तत्काल के भाव और रसों के अर्थात् विलासों के कारण मानों बलप्राप्त कामदेव के वाणों से विद्ध मानस वाला हो गया। वह तरुणी मन में इस प्रकार सोंचने लगी—"ये अनन्य सौन्दर्य शाली राजकुमार राजवाहन किस पुर की भाग्यवती स्त्रियों के नेत्रों आनन्द देते हैं? इस पुत्र रत्न के द्वारा अन्तःपुर की रमणियों में कौन सी वह धन्य स्त्री है स्त्री जिसने इसे पुत्ररूप में प्राप्त किया है? इनकी रानी कौन हैं और यहाँ पर आने का क्या कारण है। कामदेव

अपने सौन्दर्य को विजित करने वाले इस कुमार को देखती हुई मुझको ईर्ष्या के कारण अत्यन्त मथता हुआ अपने मन्मथ (मथनेवाला) नाम को सार्थक करता है। क्या करूँ, कैसे इन्हें जानूँ।

संस्कृतव्याख्या :—सा = अवन्तिसुन्दरी, मूर्तिमतीव = शरीरधारिणीव लक्ष्मीः = श्रीः, मालवेशकन्यका = मालवराज पुत्रिका, स्वेन = निजेन, आराध्यमानम् = संसेव्यमानमुपास्यमानं वा, संकल्पितवरप्रदानाय = संकल्पितस्य पूर्वमेवाभिलषितस्याभीष्टस्य वा वरस्य = जामातुरिति भावः प्रणयिनः वा, प्रदानाय समर्पणाय आविर्भूतम प्रादुर्भूतं आगतमित्यर्थः, मूर्तिमन्तम् = शरीरिणम्, मन्मथमिव = काममिव, तम् = राजवाहनम, आलोक्य = अवलोक्य, मन्दमारुतान्दोलिता = मन्दमारुतेन मन्दवायुना आन्दोलिता कम्पिता, लतेव = व्रततीव, मदनावेशवती = सकामेत्यर्थः, चकम्पे = कम्पिताभवत्, तदनु = तदनन्तरम्, क्रीडाविश्रम्भात् = क्रीडायां क्रीडने विश्रम्भः विश्वासः तस्मात् निवृत्ता पृथग्भूता, लज्जया = ह्रिया, कानि कान्यपि = अकथनीयानि, भावान्तराणि = विविधान भावान्, व्यधत्त = अकरोत्, ललनाजनम = नारीजनम्, सृजता = रचयता, विधात्रा = ब्रह्मणा, नूनम् = निश्चयेन, एषा = अवन्तिसुन्दरी, घुणाक्षर न्यायेन = काकतालीय न्यायेन, निर्मिता = रचिता, नोचेद् = अन्यथा, ब्रह्मा = एवंभूतः = ईदृशः, निर्माणनिपुणः = रचनाकुशलः, यदि, स्यात् = भवेत्, तत्समानलावण्याम् = तस्याः अवन्तिसुन्दर्याः समानं सदृशं लावण्यं सौन्दर्यं यस्याः सा ताम्, अन्याम् = अपराम्, तरुणीम् = युवतीम्, किं न = कथं न, करोति = कुरुते, इति = इत्थम, सविस्मयानुरागम् = विस्मयेन आश्चर्येण अनुरागेण च सह क्रियाविशेषणमेतत् "विलोकयतः" इत्यस्य, विलोकयतः = अवलोकयतः, तस्य = राजवाहनस्य, समक्षम् = पुरतः, स्थातुम् = अवस्थातुम, लज्जिता = सलज्जा, सती = भवन्ती, किञ्चिद् = ईषद्, सखीजनान्तरितगात्रा = सखी, जनेन = आलिसमुदायेन, अन्तरितं व्यवहितं गात्रं शरीर यस्याः सा, तन्नयनाभिमुखैः = तस्य राजवाहनस्य नयनयोः लोचनयोः अभिमुखै सम्मुखवर्तिभिः, किञ्चित् = ईषत्, आकुञ्चितैः = समाकुञ्चितैः, अञ्चितभ्रूलतैः = अञ्चिते सुशोभिते भ्रूयुगले यैस्तैः,

अपाङ्गवीक्षितैः = कटाक्षैः, आत्मनः = स्वस्य, कुरङ्गस्य = मृगस्य, आनायमानालावण्यम = आनायः जालं तदिवाचरतीति आनायंमानं लावण्यं सौन्दर्यं यस्य तं, विलोकयन्ती = अवलोकयन्ती, अतिष्ठत् = स्थिताभवत् ।

सोऽपि = राजवाहनोऽपि, तस्या = अवन्तिसुन्दर्याः, तदा = तदानीम, उत्पादितभावरसानाम् = उत्पादिताः उत्पन्नाः ये भावाः विकाराः त एव रसाःते षां, सामग्र्या = सहयोगेनेतिभावः, लब्धबलस्येव = प्राप्त बलस्येव, विषमशरस्य = विषमाः विषमसंख्यकाः (पञ्चेतिभावः) भयंकराः वा शराः बाणाः यस्य तस्य, शरव्यायमाणमानसः = शरव्यं लक्ष्यं तदिवा चरत् शरव्यायमाणं मानसं हृदयं यस्य सः, बभूव = अभूत् । सा = अवन्तिसुन्दरी, मनसि = हृदये, अचिन्तयत् = अविचारयत्, अनन्य साधारणसौन्दर्येण = अनन्यसाधारणं अनुपममद्वितीयं वा सौन्दर्यं यस्य तेन, अनेन = राजवाहनेन, पुरि = नगरे, भाग्यवतीनाम् = सौभाग्यशालिनीनाम, तरुणीनाम् = युवतीनाम्, लोचनोत्सवः = नेत्रोत्सवः, क्रियते = विधीयते, पुत्ररत्नेन = पुत्रश्रेष्ठेन, अमुना = अनेन, पुरन्ध्रीणाम् = पुरयोषिताम, पुत्रवतीनाम् = सपुत्राणाम, सीमन्तिनीनाम् = नारीणाम् कानाम, सीमन्त मौक्तिकी क्रियते = सीमन्तः = केशवेशः तत्र मौक्तिकः माणिक्य स्वरूपः तत्क्रियते, शेखरीक्रियेते इत्यर्थः (अस्य जननी सर्वासु श्रेष्ठेतिभावः) देवी = महिषी, किमत्र = किमस्मिन स्थाने आगमनकारणम् = समागमनिमित्तम, मन्मथः = कामः, माम् = अवन्तिसुन्दरीम, अपहसितनिजलावण्यम् = अपहसितं तिरस्कृतमितिभावः, निजं स्वकीयं लावण्यं सौन्दर्यं येन तम्, एनम् = राजवाहनम्, विलोकयन्तीम् = अवलोकयन्तीम्, असूयया = ईर्ष्यया अक्षमयेतिभावः, अतिमात्रम् = अतिशयम्, मथ्नन् = पीडयन्, निजनाम = स्वकीयाभिधानम्, 'मन्मथ इति' मन् (क्विप्) मथ्नाति मथति वेति 'मन्मथः' सान्वयम् = सार्थकम्, करोति = विधत्ते, किंकरोमि = किम्मयाकर्तव्यमिति भावः कथं, अयम् = राजवाहनः, ज्ञातव्य = अवगन्तव्यः ।

टिप्पणी—सा मूर्तिमती — लतेव — उपमा अलंकार है। चकम्पे = कांपी = कम्प—लिट् लकार प्र० पु० एकवचन। घुणाक्षर न्याय = इसका तात्पर्य यह हैं कि 'घुन' नामक एक कीट विशेष यों ही लकड़ी को काटता रहता है। संयोगवशात् उसके काटने से कभी-कभी कुछ अक्षर से बन जाते

हैं। वह जानकर नहीं बनाता यों ही बन जाया करते हैं। इसे 'घुणाक्षर न्याय' कहा जाता है। अर्थात् संयोगवशात् कोई कार्य होना जान समझ कर नहीं। अब्जभू = अब्जात् कमलाद्, भूः उत्पत्तिः यस्य अर्थात् ब्रह्मा। भाव = मानसिक विकार = "विकारो मानसो भावः' इत्यमरः। विषमशर = कामदेव, इसके बाणों की संख्या ५ मानी गयी है। अतः "विषमशर' कहा जाता है वैसे भयंकर या पीडाकर बाण वाला भी अर्थ हो सकता है।"

अरविन्दमशोकं च चूतं च नवमल्लिका,

नीलोत्पलं च पञ्चैते पञ्चबाणस्य सायकाः'।

इसीलिए कामदेव का एक नाम 'पञ्चबाण' भी है। पुरन्ध्री = पति पुत्र वाली स्त्री "कुटुम्बिनी पुरन्ध्री" इत्यमरः। सीमन्तिनी = स्त्री "नारी सीमन्तिनी वधूः" इत्यमरः। सीमन्त=केशवेश 'या केशों के मध्य की विभाजक रेखा' "सीमन्तकेशवेशे" सीमान्तोऽन्य" सिद्धान्तकौमुदी "अच्सन्धि'। सीमन्तमौक्तिकी क्रियते = असीमन्तमौक्तिकं सीमन्त मौक्तिक रूपेण सम्पद्यमानं क्रियते "इस विग्रह में' "कृभ्वस्तियोगे संपद्यकर्तरि च्विः" इति 'च्वि' प्रत्यय, "अस्य च्वौ" सूत्र ईत्। सीमन्त के मौक्तिक के तुल्य अर्थात् श्रेष्ठ थी। मन्मथो — इस वाक्य में परिकर अलंकार है। आनाय=जाल, आ+नी+घञ् "जालमानायः" सूत्र घञ् "आनीयन्ते मत्स्यादयोऽनेन" इस विग्रह से।

ततो बालचन्द्रिका तयोरन्तरङ्गवृत्ति भावविवेकैर्ज्ञात्वा कान्ता-समाजसन्निधौ राजनन्दनोदन्तस्य सम्यगाख्या नमनुचितमिति लोक-साधारणैर्वाक्यैरभाषत — "भर्तृदारिके, अयं सकलकलाप्रवीणो देवतासानिध्यकरण आहवनिपुणो भूसुरकुमारो मणिमन्त्रौषधिज्ञः परिचर्यार्हो भवत्या पूज्यताम्" इति। तदाकर्ण्य निजमनोरथमनुव-दन्त्या बालचन्द्रिकया सन्तुष्टान्तरङ्गा तरंगावली मन्दानिलेनेव संकल्पजेनाकुलीकृता राजकन्या जितमारं कुमारं समुचितासनासीनं विधाय सखीहस्तेन शस्तेन गन्धकुसुमाक्षतघनसारताम्बूलादिनाना जातिवस्तुनिचयेन पूजां तस्मै कारयामास। राजवाहनोऽप्येवमचिन्त-यत् — "नूनमेषापूर्वजन्मनि मे जाया यज्ञवती। नो चेदेतस्यामेवं-

विधोऽनुरागो मन्मनसि न जायेत। शापावसानसमये तपोनिधिदत्तं जातिस्मरत्वमावयोः समानमेव। तथापि कालजनितविशेषसूचकवाक्यैरस्या ज्ञानमुत्पादयिष्यामि" इति।

हिन्दी अर्थ—तब बालचन्द्रिका उन दोनों की अन्तरंग वृत्ति अर्थात् प्रेम को भाव विवेक से समझ कर, स्त्रीसमुदाय के समक्ष राजकुमार के वृत्तान्त को कहना अनुचित समझ करके जनसाधारण वाक्य बोली—"हे राजकुमारी ! यह राजकुमार राजवाहन सम्पूर्ण कलाओं में चतुर, युद्ध में निपुण, देवों के साक्षात्कार करनेवाला, मणि-मन्त्र औषध में चतुर ब्राह्मण कुमार हैं। ये पूजा के योग्य हैं आप इनकी पूजा करें।

यह सुनकरके अपने (अवन्तिसुन्दरी के) मनोरथ को कहने वाली बालचन्द्रिका के द्वारा सन्तुष्ट होकर, मन्दवायु के झोंकों से तरंगों के समान चञ्चल होती हुई कामदेव के द्वारा व्याकुल अवन्तिसुन्दरी ने कामदेव को (सौन्दर्य में) जीतने वाले राजकुमार राजवाहन को उचित आसन पर बिठा कर सखियों के हाथों से मनोहर गन्ध, पुष्प, अक्षत, कपूर, पान आदि विभिन्न वस्तुसमुदाय से उनकी पूजा करवायी। राजवाहन भी इस प्रकार सोंचने लगा—"निश्च ही यह पूर्वजन्म में मेरी पत्नी यज्ञवती थी अन्यथा इस प्रकार का स्नेह मेरे मानस में पैदा न होता। शाप की समाप्ति के समय हम दोनों को समान रूप से तपस्वी के द्वारा प्रदत्त पूर्वजन्म स्मरण होगा। तो भी तत्कालोचित विशेष वचनों से इसको ज्ञान उत्पन्न अर्थात् इसे पूर्वजन्म की स्मृति कराऊँगा।

संस्कृतव्याख्याः—ततः = तदनन्तरम्, बालचन्द्रिका = तन्नामिका, तयोः = अवन्तिसुन्दरीराजवाहनयोः, अन्तरंगवृत्तिम् = मनोभावम्, भावविवेकैः = भावैः मानसविकारैः विवेकैश्च ज्ञानैः, ज्ञात्वा = विज्ञाय, कान्तासमाजसन्निधौ = कान्तानां प्रमदानां समाजः समूहः तस्य सन्निधौ समीपे, राजनन्दनोदन्तस्य = राजनन्दनस्य राजकुमारस्य उदन्तस्य वृत्तान्तस्य, सम्यक् = सुष्ठु, आख्यानम् = कथनम् अनुचितम् = अयोग्यम्, इति = इत्थं विचार्य, लोकसाधारणैः = लौकिकैः, वाक्यैः = वचनैः, अभाषत = अवदत्, भर्तृदारिके = राजकुमारिके, अयम् = पुरोवर्तमानः, सकलकलाप्रवीणः = सकलासु अखिलासु चतुष्षष्ठिकलासु इत्यर्थः प्रवीणः निपुणः, देवतासान्निध्य-

करण: = देवतानां देवानां सान्निध्यं साक्षात्कारं करोतीति, आहवनिपुण: =आहवेयुद्धे निपुण: प्रवीण:, भूसुरकुमार:=ब्राह्मणपुत्र:, मणिमन्त्रौषधिज्ञ: =मणिं मन्त्रं ओषधिञ्च जानातीति,मन्त्रादिक्रियानिपुण:,परिचर्यार्ह:=परिचर्यायै पूजायै अर्ह: योग्य: पूज्य इति भाव:, भवत्या = त्वया, पूज्यताम्= सम्पूज्यताम्, तदाकर्ण्य = तन्निशम्य, निजमनोरथम् = स्वमनोभावम्, अनुवदन्त्या=सानुकूलं कथयन्त्या, बालचन्द्रिकया=तन्नामिकया, सन्तुष्टान्तरंगा = सन्तुष्टं प्रसन्नं अन्तरंगं अन्त:करणं यस्या: सा, तरंगावली = वीचिमाला, मन्दानिलेनेव=मन्दवायुनेव, संकल्पजेन = कामेन, आकुलीकृता = व्याकुलीकृता, राजकन्या = राजदुहिता, जितमारम् = जित: विजित: मार: स्पर: येनतम्, कुमारम्=राजवाहनम्, समुचितासनासीनम् = सुयोग्यासनसमासीनम्, विधाय = कृत्वा, सखीहस्तेन = सखीकरेण, शस्तेन = प्रशस्तेन, गन्धकुसुमाक्षतघनसार ताम्बूलादिनानाजातिवस्तुनिचयेन=गन्धश्च सुरभिश्च कुसुमं च पुष्पं च, अक्षतं च घनसारश्च कर्पूरश्च ताम्बूलं च आदौ येषां तानि, नाना विभिन्ना: जातयो भेदा: येषां तानि ताम्बूलादीनि वस्तूनि तेषां निचयेन समूहेन. पूजाम् = सपर्याम्, तस्मै = राजवाहनाय, कारयामास = कारितवती। राजवाहन:, एवम् = इत्थम्, अचिन्तयत् = अविचारयत्, नूनम् = निश्चयेन, एषा = पुरोवर्तमाना सुन्दरी, पूर्वजन्मनि = प्रथम जन्मसमये, मे=मम, जाया=पत्नी, यज्ञवती =तन्नामधेया, नो चेत्= अन्यथा, एवं विध: = ईदृश:, अनुराग:=प्रेम, मन्मनसि = अस्माकं मानसे, न = नहि, जायेत=उत्पद्येत, शापावसान समये=शापावसानकाले. तपोनिधिदत्ताम्=तापसानुसारमित्यर्थ:, जातिस्मरत्वम्=पूर्वजन्मस्मरणम, आवयो: = द्वयो:. समानमेव =सेदृशमेव, कालजनितविशेष सूचक वाक्यै:=कालेन समयेन जनित: उत्पादित: यो विशेष: तस्य सूचकानि संसूचाकानि यानि वाक्यानि वचांसि तै:, अस्या:=अवन्तिसुन्दर्या: ज्ञानम्=विवेकम्, उत्पादयिष्यामि=उत्पन्नं करिष्यामि।

टिप्पणी—संकल्पज = काम–"संकल्प: कर्ममानसम्" इत्यमर:, अर्थात् मानसिक विचारों से पैदा होने वाला। इसीलिए मनोज या मनोभव भी काम को कहते हैं। अनुवदन्त्या= अनु+वद्+शतृ, स्त्रीलि॰तृतीया ए.व.

"अनु" उपसर्ग का प्रयोग अच्छा बन पड़ा है। तदनुकूल या सदृश भाव द्रष्टव्य है। शस्त = शुभ "क्षेमस्त्रियां शस्तं चाथ" इत्यमरः कारयामास = करवाया-कृ + णिच् + आस् प्रयोग, लिट् ल०।

राजवाहनस्य पूर्वजन्मवृत्तान्तश्रवणम्—

तस्मिन्नेव समये कोऽपि मनोरमो राजहंसः केलीविधित्सया तदुपकण्ठमगमत्। समुत्सुकया राजकन्यया मरालग्रहणे नियुक्तां बालचन्द्रिकामवलोक्य समुचितो वाक्यावसर इति सम्भाषणनिपुणो राजवाहनः सलीलमलपत्–'सखि, पुरा शाम्वो नाम कश्चिन्महीवल्लभो मनोवल्लभयासह विहारवाञ्छया कमलाकरमवाप्य तत्र कोकनदकदम्बसमीपे निद्राधीनमानसं राजहंसं शनैर्गृहीत्वा बिसगुणेन तस्य चरणयुगलं निगडयित्वा कान्तामुखं सानुरागं विलोकयन्मन्दस्मितविकसितैककपोलमण्डलस्तामभाषत—'इन्दुमुखि! मयाबद्धोमरालः शान्तो मुनिवदास्ते। स्वेचछयानेन गम्यताम्' इति।

सोऽपि राजहंसः शाम्बमशपत्–'महीपाल, यदस्मिन्नम्बुजखण्डेऽनुष्ठान परायगतया परमानन्देन तिष्ठन्तं नैष्ठिकं मामकारणं राज्यगर्वेणावमानितवानसि तदेतत् पाप्मना रमणी विरह सन्तापमनुभव' इति। विषण्णवदनः शाम्बो जीवितेश्वरीविरहमसहिष्णुर्भूमौ दण्डवत् प्रणम्य सविनयमभाषत–"महाभाग, यदज्ञानेनाकरवं तत्क्षमस्व" इति। स तापसः करुणाकृष्टचेतास्तमवदत्–"राजन्! इह जन्मनि भवतः शापफलाभावो भवतु। मद् वचनस्यामोघतया भाविनि जनने शरीरान्तरं गतायाः अस्याः सरसिजाक्ष्या रसेम रमणो भूत्वा मुहूर्तद्वयं मच्चरणयुगल वन्धकारितया मासद्वयं शृंखलानिगडित चरणो रमणी वियोग विषादमनुभूय पश्चादनेककालं वल्लभया सह राज्यसुखं लभस्व" इति।

हिन्दी अर्थ—उसी समय एक मनोहर राजहंस खेल करने की इच्छा से अवन्तिसुन्दरी के पास पहुंचा। समुत्सुक राजकन्या के द्वारा हंस को पकड़ने के लिए बालचन्द्रिका को नियुक्त देख करके (अर्थात् अवन्तिसुन्दरी को अकेला पाकर) उचित बातचीत का अवसर समझ करके वार्तालाप में

चतुर राजवाहन ने लीलापूर्वक उससे कहा–हे सखि ! प्राचीनकाल में एक शाम्ब नामक राजा अपनी प्रिया के साथ विहार करने की इच्छा से एक तालाब के पास आकर वहां पर लालकमलों के समूह में सोते हुए एक राजहंस को धीरे से पकड़करके और उसके दोनों पैरों को कमलतन्तु से जकड़कर, पत्नी के मुख को सानुराग देखता हुआ तथा मन्द से विकसित कपोलस्थल वाला (वह राजा) उससे (पत्नी से) बोला–"हे चन्द्रमुखि ! मेरे द्वारा बांधा हुआ यह शान्त हंस मुनि के समान स्थित है। अब यह इच्छापूर्वक चला जाये" (मैं इसे अब छोड़ रहा हूँ) उस राजहंस ने शाम्ब को शाप दिया हे राजन् ! जो इस कमल समुदाय में ध्यानादि में तत्पर परमानन्द में डूबे हुए मुझ नैष्ठिक ब्रह्मचारी को अकारण ही आपने राज्यमद से मेरा अपमान किया है' इस पाप के कारण आप अपनी पत्नी के विरह के ताप का अनुभव करेंगे "(इस प्रकार का शाप दिया) खिन्न मनस्क शाम्ब अपनी प्राणेश्वरी के विरह को सह सकने में असमर्थ होकर भूमि पर गिरकर दण्डवत् प्रणाम करके विनयपूर्वक बोला–"हे महाराज ! मैंने यह सब अज्ञान के कारण किया है आप इसे क्षमा करें। वह तपस्वी करुणार्द्रचित्त होकर उससे बोला–"हे राजन् ! इस जन्म में आपको इस शाप का फल नहीं मिलेगा किन्तु मेरी वाणी अमोघ है अतः भविष्यत्कालीन दूसरे जन्म में इस कमलाक्षी के स्नेही पति होकर मेरे चरणों को दो क्षण तक तुमने बांधा है अतः आप दो मास तक जंजीर से बद्ध चरण होकर पत्नी के विरह के दुःख का अनुभव करके बाद में बहुत समय तक अपनी प्रिया के साथ राज्यसुख प्राप्त करेंगे।

संस्कृतव्याख्या :–तस्मिन्नेव=तदा, समये = काले, मनोरमः= मनोहरः, राजहंसः=मरालः, केलीविधिरसया=क्रीडेच्छया तदुपकण्ठम्= तस्याः अवन्तिसुन्दर्याः, उपकण्ठम्=समीपम्, अगमत्=अगच्छत्, समुत्सुकतया=औत्सुक्येन, राजकन्यया=राजपुत्रिकया, मरालग्रहणे=राजहंसबन्धने, नियुक्ताम्=संस्थापिताम्, बालचन्द्रिकाम्, अवलोक्य=विलोक्य, समुचितः=सुयोग्यः, वाक्यावसरः = वचनावसरः, सम्भाषणनिपुणः= वार्तालापप्रवीणः। राजवाहनः, सलीलम्=सहेलम्, अलपत्=अवदत् "सखि =हे आलि, पुरा=प्राचीनकाले, शाम्बो नाम=तन्नामधेयः, महीवल्लभः

=भूपतिः, मनोवल्लभया=प्रेयस्या, सह=साकम्, विहारवाच्छया= क्रीडेच्छया कमलाकरम् = कासारम्, अवाप्य=प्राप्य, तत्र = सरोवरे कोकनदकदम्ब समीपे = कोकनदानां रक्तकमलानां कदम्बस्य समूहस्य समीपे सविधे, निद्राधीनमानसम्=निद्रया प्रमीलया स्वापेन वा अधीनं परवशं मानसं मनः यस्य तम् सुप्तमिति भावः, राजहंसम्=मरालम्, शनैः =मन्दम्, गृहीत्वा=धृत्वा, विसगुणेन=मृणालतन्तुना, तस्य=हंसस्य, चरणयुगलम् = पादद्वन्द्वम्, निगडयित्वा = निगडीकृत्य, कान्तामुखम्= प्रियावदनम्, सानुरागम्=सस्नेहम्, विलोकयन्=अवलोकयन्, मन्दस्मित-विकसितैक कपोल मण्डलः=मन्दस्मितेन विकसितं प्रफुल्लं एकं कपोल-मण्डलं गण्डस्थलं यस्य सः, ताम्=पत्नीम्, अभाषत=अवोचत्, इन्दुमुखि =चन्द्रमुखि,मया=शाम्बेन,, बद्धः=निगडीकृतः, मरालः=हंसः, शान्तः =प्रशान्तः, मुनिवत्=ऋषिवत्, आस्ते=वर्तते। स्वेच्छया=निजेच्छया अनेन = हंसेन, गम्यताम् = गन्तव्यम् राजहंसः = मरालः, शाम्बम्= तन्नामकराजानम्, अशपत्=शापमदात्, महीपाल= भूपाल, अम्बुजखण्डे कमलसमुदाय, अनुष्ठानपरायणतया = ध्यानादितत्परतया, परमानन्देन= अतिशयामोदेन, तिष्ठन्तम् = विराजमानम्, नैष्ठिकम् = ब्रह्मचारिणम्, माम्=राजहंसम्, अकारणम्=कारणं विनैव, राज्यगर्वेण=राज्यमदेन, अवमानितवान्=अवज्ञातवान्, पाप्मना=पापेन, रमणीविरह सन्तापम्= रमण्याः प्रमदायाः विरहः वियोगः तस्य सन्तापंक्लेशं, अनुभव=अनुभवं कुरु, विषण्णवदनः=विषण्णं खिन्नं वदनं मुखं यस्य सः, शाम्बः=तन्नामको राजा, जीवितेश्वरी विरहम् प्राणेश्वरीवियोगम्, असहिष्णुः = सोढुम् समर्थः, भूमौ = पृथिव्याम्, दण्डवत् = लगुडवत्, प्रणम्य = नमस्कृत्य, सविनयम् = सानुरोधम्, अभाषत् = अवदत्, महाभाग = महाराज, यद्, अज्ञानेन=अविवेकेन अकरवम्=कृतम्, तत्=तत्सर्वम्, क्षमस्व= क्षन्तव्यः, तापसः=तपस्वी, करुणाकृष्टचेताः=करुणया दयया आकृष्टं समाकृष्टं चेतः चित्तं यस्य सः, तम्=राजानम्, अवदत् = अकथयत्, राजन्=नृप, इह=अस्मिन्, अत्र वा, जन्मनि=जन्मकाले भवतः तव, शापफलाभावः := शापपरिणामाभावः, भवतु = स्यात्, मद्वचनस्य= अस्माकं वाक्यस्य, अमोघतया=अनिष्फलतया, भाविनि=भाविकाले, जनने

जन्मनि शरीरान्तरम्=देहान्तरम्, गतायाः=प्राप्तायाः, अस्याः=एतस्याः, सरसिजाक्ष्याः=कमलाक्ष्याः, रसेनः=स्नेहेन, रमणः=दयितः, भूत्वा=सम्भूय, मुहूर्तद्वयम्=क्षणद्वयम्, मच्चरणयुगवबन्धनकारितया=अस्माकं पादद्वन्द्वबन्धनकारितया, मासद्वयम्=मासद्वयं यावत्, शृंखलानिगडित-चरणः शृंखलया=लौहशृंखलया निगडितौ बद्धौ चरणौ पादौ यस्य सः, रमणीवियोगविषादम्=रमण्याः पत्न्याः वियोगः विप्रलम्भः तस्यविषादं सन्तापम्, अनुभूय=अनुभवं कृत्वा, पश्चात्=तदनन्तरम्, अनेककालम्=बहुसमयम्, वल्लभया=दयितया, सह=सार्धम्, राज्यसुखम्=सुराज्या-नन्दम्, लभस्व=प्राप्नुहि।

टिप्पणी—राजहंस=एकविशेष प्रकार का हंस जिसके चोंच और चरण लाल होते हैं और पंख श्वेत होते हैं। इसको 'राजहंस' कहा जाता है। राजहंसास्त ते चञ्चुचरणैर्लोहिताः सिताः 'इत्यमरः केलीविधित्सा=विधातुमिच्छा विधित्सा, केलीनां विधित्सातया "सनिमीमाघुरभलभशक-पतपदामच इस" सूत्र अच् इसादिलोप, खण्ड=टुकड़ा पर यहाँ पर "समूह" अर्थ है दोनों अर्थों के लिए मिलाइये="दिवः कान्तिमत् खण्डमेक" पू०मेघ० ३०। "कुमुदवनमपश्रि श्रीमदम्भोजखण्डम्" शिशु० वध ११।६४। माघ। नैष्ठिक=निष्ठा+ठक्=प्राचीनकाल में "उपकुर्वाण" एवं 'नैष्ठिक' नामक दो प्रकार के ब्रह्मचारी होते थे 'उपकुर्वाण' वे कहलाते थे जो निश्चित अवधि के पश्चात् गृहस्थ धर्म में आ जाते थे और आजीवन ब्रह्मचारी रहकर आश्रम में ही गुरुओं की सेवा करने वाला "नैष्ठिक" कहलाता था। "निष्ठा मरणं तत्पर्यन्तं ब्रह्मचारीतिष्ठतीति' कालिदास=विदधे विधिमस्य नैष्ठिकम्" ८।२५ रघु०। द्रष्टव्य=याज्ञवल्क्यस्मृति १।४९। रस=राग या शृंगार=शृंगारादौ विषेवीर्यें गुणे रागे द्रवे रसः" इत्यमरः मासद्वयम्=द्वितीया "कालाध्वनोरत्यन्त संयोगे। जनन=जन्म=जनुर्ज-नन जन्मानि जनिरुत्पत्तिरुद्भवः "इत्यमरः पाप्मना=पाप से "अस्त्री पंकं पुमान्पाप्मा" इत्यमरः।

तदनु जातिस्मरत्वमपि तयोरन्वगृह्णात्। "तस्मान्मरालबन्धनं न करणीयं त्वया" इति। सापि भर्तृदारिका तद् वचनाकर्णनाभि ज्ञातस्वपुरातन जननवृत्तान्ता "नूनमयं मत्प्राणवल्लभः" इति मनसि

जानती रागपल्लवितमानसा समन्दहासमवोचत्–"सौम्य, पुरा शाम्बो यज्ञवतीसन्देश परिपालनाय तथाविधं हंसबन्धनमकार्षीत्। तथा हि लोके पण्डिता अपि दाक्षिण्येनाकार्यं कुर्वन्ति" इति। कन्या-कुमारावेवमन्योन्यपुरातनजनननामधेये परिचिते परस्पर ज्ञानाय साभिज्ञमुक्त्वा मनोजरागपूर्णमानसौ बभूवतुः।

अवन्तिसुन्दर्या मातुरागमनं विरहे कष्टानुभवश्च—

तस्मिन्नवसरे मालवेन्द्रमहिषी परिजनपरिवृता दुहितृकेलीः विलोकनाय तं देशमवाप। बालचन्द्रिका तु तां दूरतो विलोक्य ससम्भ्रमं रहस्यनिर्भेदभिया हस्तसंज्ञया पुष्पोद्भवसेव्यमानं राज-वाहनं वृक्षवाटिकान्तरितगात्रमकरोत्। सा मानसारमहिषी सखी-समेताया दुहितुर्नानाविधां विहारलीलामनुभवन्ती क्षणं स्थित्वा दुहित्रा समेता निजागारगमनायोद्युक्ता बभूव। मातरमनुगच्छन्ती अवन्तिसुन्दरी "राजहंसकुलतिलक, विहारवाञ्छया केलिवने मद-न्तिकमागतं भवन्तमकाण्ड एव विसृज्य मया समुचितमिति जनन्यनु-गमनं क्रियते-तदनेन भवन्मनोरागोऽन्यथा मा भूत्" इति मरालमिव कुमारमुद्दिश्य समुचितालापकलापं वदन्ती पुनः पुनः परिवृत्तदीन-नयना वदनं विलोकयन्ती निजमन्दिरमगात्। तत्र हृदय वल्लभकथा प्रसंगे बालचन्द्रिकाकथिततदन्वयनामधेया मन्मथबाणपतन व्याकुल-मानसा विरहवेदनया दिने दिने बहुलपक्ष शशिकलेवक्षामक्षामाऽऽहा-रादिसकलं व्यापारं परिहृत्य रहस्यमन्दिरे मलयजरसक्षालित-पल्लवकुसुमकल्पिततल्पतलावर्तिततनुलता बभूव।

शब्दार्थ—मराल=हंस।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् (उस तापस ने कहा) "तुम दोनों को जाति स्मरण भी बना रहेगा। अतः हंस का बन्धन मत करो" वह राजकुमारी भी उसके वचन को सुनकर और अपने पूर्वजन्म के वृत्तान्त को स्मरण करके "निश्चय ही यह मेरे प्राणवल्लभ" हैं यह मन में जानती हुई स्नेह से खिले हुए मनवाली, मन्द हास के साथ बोली–"हे सौम्य! प्राचीनकाल में राजा शाम्ब ने यज्ञवती के आदेशानुसार राजहंस का बन्धन किया था। इस प्रकार संसार में पण्डित जन भी उदारतावश अकार्य

कर बैठते हैं। फिर वे दोनो कुमार और कुमारी परस्पर पूर्वजन्म के जन्म और नाम का स्मरण करके परस्पर ज्ञान कराने हेतु सप्रमाण कह कर कामदेव के राग से युक्त मानस वाले हो गये। अर्थात् काम के वशीभूत हो गये। उसी समय मालवराज की रानी अपने परिजनों से घिरी हुई राजकन्या की क्रीडाओं को देखने की इच्छा से उस स्थान पर आयी। बालचन्द्रिका ने उन्हें दूर से ही देख करके भेद खुल जाने के भय से पुष्पोद्भव सहित राजवाहन को हाथ के संकेत से वृक्षवाटिका में छिपा दिया। वह मानसार की रानी सखियों सहित अपनी पुत्री की विभिन्न क्रीडाओं को देखती हुई कुछ समय स्थित रहकर राजपुत्री के सहित राजभवन को जाने के लिए तैयार हो गयी। माता के पीछे जाती हुई अवन्तिसुन्दरी (ने कहा) हे राजहंसतिलक ! विहार करने की इच्छा से इस क्रीडावन में तुम मेरे समीप आये थे, किन्तु तुमको अनवसर में ही छोड़कर के माता के साथ जाना उचित समझ कर जा रही हूँ अतः आपका अनुराग मेरे प्रति अन्यथा मत होवे 'इस प्रकार हंस के समान राजकुमार को लक्ष्य बनाकर समुचित वार्तालाप करती हुई बार-बार अपने दीनतापूर्ण नेत्रों से राजवाहन के मुख को देखती हुई अपने घर को चली गयी। (घर आने पर) अपने प्रियतम की कथा प्रसंग आने पर तथा बालचन्द्रिका के द्वारा उसके नाम एवं वंश आदि को जानकर चित्त में काम के बाणों से विद्ध होकर विरह के कष्ट से प्रतिदिन कृष्णपक्ष की चन्द्रकला के समान दुर्बल होती हुई भोजन आदि सम्पूर्ण क्रियाकलापों को छोड़कर गोपनीयता युक्त घर में चन्दनरस से प्रक्षालित पल्लव और पुष्पों की शय्या पर करवट बदलती हुई पड़ी रहती थी।

संस्कृतव्याख्या :—तदनु = तदनन्तरम्, जातिस्मरत्वमपि = जनन स्मरणमपि, तयोः = महीवल्लभवल्लभयोः, अन्वगृह्णात् = अनुज्ञातवान्, तस्मात् = तेनैव कारणेन, मरालबन्धनम् = राजहंसनिगडनम्, न = नहि करणीयः = कर्तव्यः, त्वया = भवता, सापि, भर्तृदारिका = राजदुहिता, तद् वचनाकर्णनाभिज्ञातस्वपुरातनजननवृत्तान्ता = तस्य राजवाहनस्य वचनस्य वाक्यस्य आकर्णनेन श्रवणेन अभिज्ञातः स्मृतः स्वस्य निजस्य पुरातनस्य प्राचीनस्य जननस्य जन्मनः वृत्तान्तः उदन्तः यया सा, नूनम्

= निश्चयेन, अयम् = एषः, मत्प्राणवल्लभः = अस्माकं प्राणप्रियः, इति = इत्थं, मनसि = हृदये, जानती = अवगच्छन्ती, रागपल्लवित-मानसा = रागेण अनुरागेण पल्लवितं प्रफुल्लं मानसं हृदयं यस्याः सा, समन्दहासम् = सस्मितमित्यर्थः, अवोचत् = अवदत्, सौम्य = सुभग, पुरा = प्राचीनकाले, शाम्बः = तन्नामकः, यज्ञवतीसन्देशपरिपालनाय = यज्ञवत्याः तन्नामिकायाः महिष्याः सन्देशस्य आदेशस्य परिपालनाय करणाय, तथाविधम् = तादृशम्. हंसबन्धनम् = मरालनिगडनम्, अकार्षीत = अकरोत्, लोके = संसारे, पण्डिताः = विद्वांसः, दाक्षिण्येन = परच्छन्दानुरोधेन, अकार्यम् = अकरणीयम्, कुर्वन्ति = सम्पादयन्ति, कन्याकुमारौ = अवन्तिसुन्दरीराजवाहनौ, अन्योन्यपुरातन जनननामधेये = अन्योन्यं परस्परं पुरातन जनन नामधेये प्राचीन जन्म नामनी, परिचिते = सुपरिचिते, परस्पर ज्ञानाय = अन्योन्यंप्रतिबोधाय, साभिज्ञम् = सप्रमाणम्, उक्त्वा = कथयित्वा, मनोजरागपूर्णमानसौ = मनोजश्च कामश्च रागश्च अनुरागश्च तौ ताभ्यां पूर्णे परिपूर्णे मानसे ययोस्तौ, बभूवतु = अभवताम्। तस्मिन्नवसरे = तत्काले, मालवेन्द्र महिषी = मालवराज राज्ञी, परिजनपरिवृता = परिचारकावृता, दुहितृ केलीविलोकनाय = दुहितुः कन्यकायाः केलीः क्रीडाः तासां विलोकनाय अवलोकनाय, देशम् = स्थानम्, अवाप = आगतवती, ताम् = राज-महिषीम्, दूरतः = विप्रकृष्टादेव, विलोक्य = अवलोक्य, ससम्भ्रम् = सरभसम्, रहस्यनिर्भेदभिया = रहस्योद्घाटनभयेन, हस्तसंज्ञया = करसंकेतेन, पुष्पोद्भव सेव्यमानम् = पुष्पोद्भवेन तन्नामकेन सेव्यमानं संसेव्यमानं, राजवाहनम् = तन्नामकम्, वृक्षवाटिकान्तरित गात्रम् = वृक्षवाटिकायां गृहोद्याने अन्तरितं गूहितं गात्रं शरीरं यस्य तथाविधम्, अकरोत् = अकार्षीत्, मानसार महिषी = मानसार राज्ञी, सखीसमेतयाः = आलि युक्तायाः, दुहितुः = कन्यकायाः, नानाविधाम्, बहुविधाम् विहार लीलाम् = विहारक्रीडाम्, अनुभवन्ती = पश्यन्तीत्यर्थः, क्षणम् = मुहूर्तम्, स्थित्वा = विरम्य, दुहित्रा = पुत्रिकया, समेता = उपेता, निजागार-गमनाय = स्वभवनागमनाय, उद्युक्ता = तत्परा, बभूव = अभवत्, मातरम् = जननीम्, अनुगच्छन्ती = अनयान्ती, अवन्तिसुन्दरी, राज-

हंसकुलतिलक = राजहंसस्य मरालविशेषस्य कुले मण्डले तिलक इव पक्षे राजहंसस्य तदाख्य राज्ञः कुले वंशे तिलकः भूषणस्वरूपः तत्सम्बुद्धौ (उभयत्र हंसंप्रति राजवाहनंप्रति च अर्थयोगः,) विहारवाञ्छया = क्रीडेच्छया (उभयत्र समम्) केलिवने = क्रीडावने, मदन्तिकम् = मत्समीपम्, आगतम् = समागतं, भवन्तम् = त्वाम्, अकाण्डे एव = अनवसरे एव, विसृज्य = त्यक्त्वा, मया = अवन्तिसुन्दर्या, समुचितमपि = युक्तमपि, जनन्यनुगमनम् = जनन्याः मातुः अनुगमनं अनुचरणम्, क्रियते = विधीयते, तदनेन = अस्मात् कारणात्, भवन्मनोरागः = भवतः तव मनोराग मनोभाव = अन्यथा = विपरीतः, माभूत् = मास्यात्, मरालमिव = हंसमिव, कुमारमुद्दिश्य = राजकुमारमधिकृत्य, समुचितालापकलापम् = समुचिताचारम्, वदन्ती = कथयन्ती पालयन्ती वा, पुनः पुनः = भूयः भूयः, परिवृत्तदीननयना = परिवृत्ते विवृत्ते दीने विषण्णे नयने लोचने यया सा, वदनम् = मुखम्, विलोकयन्ती = अवलोकयन्ती, निजमन्दिरम् = स्वभवनम्, अगात् = अगच्छत् । तत्र = भवने, हृदयवल्लभकथाप्रसंगे = प्राणप्रियवार्ता प्रसंगे, बालचन्द्रिका कथिततदन्वयनामधेया = बालचन्द्रिकया कथिते उक्ते तदन्वयनामधेये राजवाहनस्य वंशनामनी यस्यै सा, मन्मथबाण पतन व्याकुलमानसा = मन्मथस्य कामस्य बाणपतनैः शरप्रहारैः व्याकुलं व्याविद्धं मानसं यस्याः सा, विरहवेदनया = वियोगपीडया, दिने दिने = प्रत्यहम्, बहुलपक्ष शशिकलेव = बहुलपक्षस्य कृष्णपक्षस्य शशिकलेव चन्द्रकलेव, क्षामक्षामा = अतिशयेन कृशा, आहारादिसकलम् = भोजनादि सम्पूर्णम्, व्यापारम् = क्रियाकलापम्, परिहृत्य = परित्यज्य, रहस्यमन्दिर = रहस्यगृहे, मलयजरसक्षालितपल्लवकुसुमकल्पिततल्पतलावर्तिततनुलता = मलयजरसेन चन्दनरसेन क्षालितं प्रक्षालितं पल्लवैः किसलयैः कुसुमैश्च कल्पित रचितं तल्पतलं पर्यङ्कतलं तत्र आवर्तिता इतस्ततः परावर्तिता लुठन्तीत्यर्थः तनुलता शरीरयष्टिः यस्या सा, बभूव = अभवत् ।

टिप्पणी—दाक्षिण्येन = दक्षिणस्य भावः कर्म वा = गुणवचन—ष्यञ्' साहित्यदर्पणानुसार ३।३५। एष त्वनेकमहिलासमरागो दक्षिणः कथितः" अर्थात् अनेक महिलाओं पर समान प्रेम करने वाला नायक । "प्रेमी का प्रेमिका के प्रति शालीन आचार" यही अर्थ यहाँ पर अभिप्रेत है द्रष्टव्य-

अभिज्ञानशाकुन्त ६।५।" दाक्षिण्येन ददाति—वाटिका = गृहोद्यान "वाटी वास्तौ गृहोद्यान कट्योः" इतिहैमः राजहंसकुलतिलक = इसमे श्लेष मनोहारी है। शशिकलेव = उपमा अलंकार है।

तत्र तथाविधावस्थामनुभवन्ती मन्मथानलसन्तप्तां सुकुमारीं कुमारीं निरीक्ष्य खिन्नो वयस्यागणः काञ्चनकलशसञ्चितानि हरिचन्दनोशीरघनसार मिलितानि तदभिषेककल्पितानि सलिलानि बिसतन्तुमयानि वासांसि च नलिनी दलमयानि तालवृन्तानि च सन्तापहरणानि बहूनि संपाद्य तस्याः शरीरमशिशिरयत्। तदपि शीतलोपचरणं सलिलमिव तप्ततैले तदङ्गपहनमेव समन्तादाविश्चकार। किं कर्तव्यतामूढां विषण्णां बालचन्द्रिकामीषदुन्मीलितेन कटाक्षवीक्षितेन वाष्पकणाकुलेन विरहानलोष्णनिःश्वासग्लपिताधरया नताङ्गया शनैः शनैः सगद्गदम् व्यलापि—"प्रियसखि, कामः कुसुमायुधः पञ्चवाणः इतिनूनमसत्यमुयते। इयमहमयोमयैरसंख्यैरिषुभिरनेन हन्ये। सखि, चन्द्रमसं वडवानलादति तापकरं मन्ये। यदस्मिन्नन्तः प्रविशति शुष्यति पारावारः, सति निर्गते तदैव वर्धते। दोषाकरस्य दुष्कर्म किं वर्ण्यते मया। यदनेन निजसोदर्याः पद्मालयायाः गेहभूतमपि कमलं विहन्यते। विरहानल संतप्त हृदयस्पर्शेन नूनमुष्णीकृतः स्वल्पी भवति मलयानिलः। नवपल्लवकल्पितं तल्पमिदमनङ्गाग्नि शिखा पटलमिव सन्तापं तनोस्तनोति। हरिचन्दनमपि पुरा निजयष्टिसंश्लेषवदुरगरदनलिप्तोल्वणगरलसंकलितमिव तापयति शरीरम्। तस्मादलमलमायासेन शीतलोपचारे। लावण्यजितमारो राजकुमार एवागदंकारो मन्मथज्वरापहरणे। सोऽपि लब्धुमशक्यो मया। किं करोमि" इति। बालचन्द्रिका मनोजज्वरावस्थापरम काष्ठां गतां कोमलाङ्गी तां राजवाहन लावण्याधीनमानसामनन्यशरणामवेक्ष्यात्मन्यचिन्तयत्—

हिन्दी अर्थ—उस भवन में काम की अग्नि से सन्तप्त सुकुमार राज कुमारी को देखकरके खिन्न होता हुआ उसका सखीसमूह स्वर्णघट में चन्दन, खस, कपूर से मिश्रित उसके स्नान के लिए जल कमलतन्तुओं से बने हुए वस्त्र, कमलिनी पत्तों के बने हुए पंखे तथा अन्य सन्तापहारक

वस्तुएँ जुटाकर उसके शरीर को शीतल करने लगा। फिर भी वह शीतल उपचार तपेहुए तेल में पानी के समान उसके अङ्गों की विरहाग्नि को पूर्णतया प्रकट करने लगा अर्थात् इस शीतलोपचार से उसका ताप बढ़ ही गया। किंकर्त्तव्य विमूढ़ तथा खिन्नमनस्क बालचन्द्रिका को कुछ नेत्रों को खोलकर तथा आंसुओं से परिपूर्ण नेत्रभाग से देखकरके तथा विरहाग्नि के सन्ताप से मुरझाये ओठों वाली उस सर्वाङ्गसुन्दरी (अवन्तिसुन्दरी) ने गद्गद् होकर धीरे-धीरे कहा 'हे प्रिय सखि। कामदेव पुष्पों के पाँच बाण वाला है यह उक्ति असत्य है। वह लौहनिर्मित असंख्य बाणों से मुझे मार रहा है। अर्थात् यदि उसके फूलों के बाण होते तो मुझे इतना कष्ट न होता क्योंकि फूलों के बाणों से चोट नहीं लगती। हे सखि ! चन्द्रमा को बडवाग्नि से भी सन्तापकर मानती हूँ क्योंकि इसके अस्त होने पर (अस्त होते समय समुद्र में चला जाता है) सागर शुष्कता को प्राप्त हो जाता है अर्थात् चन्द्रमा के अस्त होने पर या उसके कृष्णपक्ष में स्थित होने पर सागर में तरंगे आदि नहीं उत्पन्न होती हैं और उसके उदित होने पर बढ़ता है (क्योंकि तभी ज्वार-भाटा सागर में आता है) मैं इसके दुष्कर्म क्या कहूँ कि यह अपनी बहन लक्ष्मी के निवास भूत कमल को भी नष्ट कर देता है। वियोग रूपी अग्नि से संतप्त हृदय के स्पर्श से गरम होता हुआ मलयपवन भी थोड़ा हो जाता है। नवीन पत्तों की बनी हुई शय्या कामाग्नि के शिखासमूह के समान शरीर में सन्ताप बढ़ाती है। चन्दन भी अपनी शाखा में लिपटे सर्पों के दन्तच्युत उत्कट विष से लिप्त सा शरीर को जलाता है। इसलिए आप इस शीतल उपचार को न करें। सौन्दर्य से काम को जीतने वाले राजकुमार राजवाहन ही इस काम ज्वर के दूर करने में समर्थ हैं या वही इस कामज्वर की औषध देने वाले हैं। वह भी इस समय दुर्लभ है क्या करूँ।"

काम के ज्वर से चरम सीमा को प्राप्त उस कोमलाङ्गी अवन्तिसुन्दरी को देखकर तथा राजवाहन के सौन्दर्य के आधीन उसके चित्त को समझकर और एकमात्र उसे (राजवाहन) को ही रक्षक समझ करके बालचन्द्रिका विचार करने लगी—

संस्कृतव्याख्या—तत्र=भवने, राजगृहे वा, तथाविधाम्=तादृशाम् अवस्थाम्=दशाम्, अनुभवन्तीम्=अनुभवंकुर्वन्तीम, मन्मथानलसन्तप्ताम् =मन्मथानलेन कामानलेन सन्तप्ताम् पीडिताम, सुकुमारीम्=कोमलाङ्गीम्, कुमारीम् = राजकुमारीम्, निरीक्ष्यः = विलोक्य, खिन्न = विषण्णः, वयस्यागणः=सखी समुदायः, काञ्चन कलशसञ्चितानि=काञ्चनकलशेषु स्वर्णघटेषु सञ्चितानि एकत्रीकृतानि भरितानि वा, हरिचन्दनोशीरघनसार मिलितानि=हरिचन्दनं चन्दन विशेषः, उशीरं नलदं घनसारः कर्पूरं तैः मिलितानि सम्मिश्रितानि, तदभिषेककल्पितानि=तस्याः अवन्तिसुन्दर्याः अभिषेकाय स्नानाय कल्पितानि रचितानि, सलिलानि=जलानि, बिसतन्तुमयानि=मृणालतन्तुमयानि, वासांसि = वस्त्राणि, नलिनीदलमयानि= कमलिनीपत्ररचितानि, तालवृन्तानि = व्यजनानि, सन्तापहरणानि = परितापहरणानि बहूनिः अधिकानि, संपाद्य = विधाय, तस्याः = अवन्तिसुन्दर्याः, शरीरम्=गात्रम्, अशिशिरयत्=शीतलीकृतवान्, तदपि =तत्सर्वमपि, शीतलोपचरणम् = शिशिरोपचाररचनम, सलिलमिव= जलमिव, तप्ततैले=उष्णतैले, तदङ्गदहमेव=तदङ्गेषु तदवयवेषु दहनमेव वह्निमेव, समन्ताद्=सर्वतः, आविश्चकार=प्रकटीकृतवान्, किंकर्तव्यतामूढाम्=किंकर्तव्यं किमकर्तव्यमिति निश्चयेऽसमर्थाम्, विषण्णाम्=खिन्नाम्, बालचन्द्रिकाम्=तन्नामकीम, ईषदुन्मीलितेन = स्तोकमुन्मीलित लोचनेन, कटाक्षवीक्षितेन=कटाक्षपातेन, बाष्पकणाकुलेन=अश्रुपूरितेन, विरहानलोष्णनिःश्वासग्लपिता धरया=विरहः वियोगः एव अनलः वह्निः, तस्य उष्णनिःश्वासेन उच्छ्वासेनेत्यर्थः: ग्लपितः म्लानः अधरः ओष्ठः यस्याः सा तया, नताङ्ग्या=सुन्दर्या, शनैः शनैः=मन्दं मन्दम्, सगद्गदम्=गद्गद्कण्ठम्, व्यलापि=व्यलपदित्यर्थः, प्रियसखि=भो आलि, कामः=कामदेवःकुसुमायुधः कुसुमानि पुष्पाणि एव आयुधानि शस्त्राणि यस्य सः पञ्चबाणः= पञ्च पञ्चसंख्यकाः बाणाः शराः यस्य सः स्मर इत्यर्थः,नूनम्=निश्चयेन, असत्यम्=मिथ्या, उच्यते=कथ्यते, अहम्=अवन्तिसुन्दरी, अयोमयैः= लोहनिर्मितैः, असंख्यैः=संख्यातुमशक्यैः, इषुभिः=बाणैः, अनेन=कामेन, हन्ये = हतास्मि सखि = आलि, चन्द्रमसम्=चन्द्रम, वडवानलात् = वडवाग्नेः, अतितापकरम् अतिसन्तापकरम्, मन्ये=स्वीकरोमि अस्मिन्=

एतस्मिन्, अन्तःप्रविशति=अन्तर्गतेसति यतोहि अस्तसमये चन्द्रः सागर-माविशति इति ख्यातिः, शुष्यति=शुष्कतां गच्छति, पारावारः=सागरः, सतिनिर्गते=बहिरागते सति उदिते इत्यर्थः वर्धते=वृद्धिमुपगच्छति, यतोहि चन्द्रोदये सति एव सागरे तरङ्गा जायन्ते इति प्रसिद्धिः भौगोलिक रीत्या 'ज्वारभाटा" इति कथ्यते, दोषाकरस्य=करोतीतिकरः दोषायाः निशायाः करः इति दोषाकरः चन्द्रः दोषाणामाकरश्च दुष्कर्म=कुकर्म, किंवर्ण्यते= किं कथ्यते, मया यदनेन=चन्द्रेण, निजसोदर्याः = स्वभगिन्याः, पद्माल-यायाः=लक्ष्म्याः, गेहभूतमपि=गृहं भूतमपि, कमलम्=पद्मम्, विहन्यते मुकुलीक्रियते यतः चन्द्रोदये सति कमलं संकोचमापद्यते इत्यर्थः विरहानल-संतप्तहृदयस्पर्शेन = विरहानलेन = वियोगाग्निना सन्तप्तं परितप्तं यद् हृदयं चित्तं तस्य स्पर्शेन संश्लेषेण, उष्णीकृतः=उत्तप्तीकृतः, मलयानिलः= मलयवायुः, स्वल्पी भवति=ह्रसति इति भावः, नवपल्लवकल्पितम्=नवैः नूतनैः पल्लवै किसलयैः कल्पितमारचितं, तल्पम्=पर्यङ्कम्, अनङ्गाग्नि-शिखापटलमिव=कामाग्निशिखासमूहमिव, सन्तापम्=परितापम्, तनोः= शरीरस्य, तनोति=विस्तारयति, हरिचन्दनमपि=चन्दनविशेषोऽपि, पुरा =प्राक्, निजयष्टिसंश्लेषवदुरगरदनलिप्तोल्बणगरलसंकलितमिव=निजयष्टेः स्वकाण्डस्य संश्लेषवन्तः आश्लेषिणः ये उरगाः सर्पाः तेषां रदनेषु दन्तेषु लिप्तं विलिप्तं यद् उल्बणं उत्कटं गरलं विषं तेन संकलितं परिव्याप्तमिति-भावः, तापयति=सन्तापयति, शरीरम्=तनुम्, तस्मात्=तत्कारणात्, अलमलम्=इति निषेधार्थे, आयासेन=श्रमेण, शीतलोपचारे=शिशिरोप-चारे, लावण्यजितमारः=लावण्येन सौन्दर्येण जितः विजितः मारः स्मरः येन सः, राजकुमारः=राजपुत्रः अगदकारः=वैद्यः भिषक् वा, मन्मथज्व-रापहरणे = कामपरितापापहरणे, सोऽपि = राजकुमारो राजवाहनोऽपि लब्धुमशक्यः= प्राप्तुमशक्यः, मया = अवन्तिसुन्दर्याः, किंकरोमि=किं सम्पादयामि, मनोजज्वरावस्थापरमकाष्ठाम् = मनोजस्य कामस्य ज्वराव-स्थायाः परितापदशायाः परमकाष्ठाम् = चरमकाष्ठाम् गताम्=प्राप्ताम्, कोमलाङ्गीम् = सुकुमाराङ्गीम्, ताम्=अवन्तिसुन्दरीम् राजवाहनलाव-ण्याधीनमानसाम् = राजवाहनस्य राजपुत्रस्य लावण्येन सौन्दर्येण अधीनं आयत्तं मानसं चित्तं यस्याः सा ताम्, अनन्यशरणाम्=नास्ति अन्यः अपरः शरणं रक्षकः यस्या सा ताम्, अवेक्ष्य=दृष्ट्वा, अचिन्तयत्=अविचारयत्।

टिप्पणी—निरीक्ष्य=देखकर, निर+ईक्ष्+क्त्वा+ल्यप्। उशीर=खस "उशीरमस्त्रियाम, अभयं नलदम्" इत्यमरः। 'कामः कुसुमायुधः पञ्चबाणः' इत्यादि में परिकर अलंकार है। 'अग्निशिखापटलमिव' उपमा अलंकार है। हरिचन्दनमपि-इत्यादि में उत्प्रेक्षा अलंकार है। दोषाकर=चन्द्रमा, दोषों का भण्डार तथा दोषा (रात्रि) को करने वाला (चन्द्रमा) श्लेष स्पृहणीय है। पद्मालया = लक्ष्मी–पद्मं एव आलयः गृहं यस्या सा। अगदंकारः=वैद्य "अगदं करोतीति अगद (औषध) कृ+अण्। "कर्मण्यण्, 'कारे सत्यागदस्य" इतिमुम्। 'दोषाकरः यहाँ 'कर्मण्यण' सूत्र से 'अण्' प्रत्यय नहीं होगा अपितु 'ट' प्रत्यय होगा अन्यथा 'दोषाकारः' बन जायेगा। अनन्यशरणाम्=जिसका कोई रक्षक नहीं (राजवाहन के अतिरिक्त) शरण =रक्षक— "शरणं गृह रक्षित्रोः" इत्यमरः।

"कुमारः सत्वरमानेतव्योमया। नो चेदेनां स्मरणीयां गतिं नेष्यति मीनकेतनः। तत्रोद्याने कुमारयोरन्योन्यावलोकनवेलायामसमसायकः समं मुक्तसायकोऽभूत्। तस्मात् कुमारानयनं सुकरम्" इति। ततोऽवन्तिसुन्दरीरक्षणाय समयोचितकरणीयचतुरं सखीगणं नियुज्य राजकुमारमन्दिरमवाप। पुष्पबाणबाणतूणीरायमाणमानसोऽनङ्गतप्तावयवसम्पर्कपरिम्लानपल्लवशयनमधिष्ठितो राजवाहनः प्राणेश्वरीमुद्दिश्य सह पुष्पोद्भवेन संलपन्नागतां प्रियवयस्यामालोक्य पादमूलमन्वेषणीया लतेव बालचन्द्रिका गतेति संतुष्टमना निटिलतटमण्डनीभवदम्बुजकोरकावृतिलसदञ्जलिपुटाम् "इतो निषीद" इति निर्दिष्टसमुचितासनासीनामवन्तिसुन्दरी प्रेषितं सकर्पूरं ताम्बूलं विनयेन ददतीं तां कान्तावृतान्तमपृच्छत्। तया सविनयमभाणि—'देव, क्रीडावने भवदवलोकनकालमारभ्य मन्मथमथ्यमाना पुष्पतल्पादिषु तापशमनमलभमाना वामनेनेवोन्नततरुफलमलभ्यं त्वदुरःस्थलालिङ्गनसौख्यं स्मरान्धतया लिप्सुः सा स्वयमेव पत्रिकामालिख्य "वल्लभायैनामर्पय" इति मां नियुक्तवती" राजकुमारः पत्रिकां तामादाय पपाठ—

सुभग कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम्।
मम मानसमभिलषति त्वं चित्तं कुरु तथा मृदुलम्॥

हिन्दी अर्थ—"मुझे कुमार राजवाहन को शीघ्र ही लाना चाहिए (इस प्रकार वालचन्द्रिका सोचने लगी) नहीं तो, कामदेव इसे स्मरणीय दशा को पहुंचा देगा अर्थात् यह समाप्त हो जायेगी। वहाँ उद्यान में उन दोनों के परस्पर देखने के समय ही कामदेव ने दोनों के ऊपर समान रूप से या एकसाथ ही वाण-प्रहार किया। इसलिए राजकुमार राजवाहन का यहाँ लाना सरल है।" इसके पश्चात् अवन्तिसुन्दरी की रक्षा के लिए समयानुकूल कार्यों में प्रवीण सखी समुदाय को लगाकर (वालचन्द्रिका) राजकुमार राजवाहन के भवन को चली गयी। कामदेव के वाणों के लिए तरकस के समान हृदय वाला (अर्थात् कामदेव के वाण उसके हृदय में लगे थे तो मानो हृदय वाण रखने का तरकस हो) काम के परिताप से तप्त शरीर के अंगों के सम्पर्क से मुरझाये पत्तों की शय्या पर बैठा हुआ राजवाहन प्राणप्रिया अवन्तिसुन्दरी को विषय वनाकर पुष्पोद्भव के साथ वातचीत करता हुआ, आयी हुई प्रिय सखी (वालचन्द्रिका) को देखकर, खोजने योग्य लता के समान (औषध होने के कारण) वालचन्द्रिका समीप आ गयी है, इसलिए प्रसन्न हो गया तथा मस्तक पर शोभा के लिए लगे हुए कमलकलिका के सदृश अपने हाथों को जोड़कर प्रणाम करती हुई वालचन्द्रिका से "इधर वैठो" इस प्रकार राजवाहन के द्वारा निर्दिष्ट समुचित आसन पर वैठी हुई तथा अवन्तिसुन्दरी के द्वारा प्रेषित कपूर सहित पान को विनयपूर्वक देती हुई वालचन्द्रिका से उसने कमनिया अवन्तिसुन्दरी का समाचार पूंछा उसने विनीतभाव से कहा—"हे देव ! क्रीडा उद्यान में आपको देखने मात्र से ही काम से पीडित होकर पुष्पादि की शायिकाओं पर भी ताप की शान्ति को न पाकर वौने के समान ऊंचे वृक्ष पर लगे हुए फल को न प्राप्त करने के सदृश आपके उरस्थल के आलिङ्गन के सुख की इच्छा से कामान्ध होकर उसने स्वयं यह पत्र लिखकर और इसे 'प्रियतम को दो' यह कह कर मुझे नियुक्त किया है। राजकुमार राजवाहन ने उसे लेकर पढ़ा—

हे सुभग ! फूल के तुल्य सुकुमार तथा संसार में प्रशंसनीय तुम्हारे रूप को देखकर मेरा मन तुम्हें पाने की इच्छा करता है। आप अपने चित्त को भी उसी के समान सुकोमल वनालें अर्थात् द्रवित होकर मुझे अपना लेवें।

संस्कृतव्याख्या :—कुमारः = राजवाहनः, सत्वरम् = शीघ्रम्, मया = बालचन्द्रिकया, आनेतव्यः = आनयनं कर्तव्यः, नोचेद् = अन्यथा, एनाम् = अवन्तिसुन्दरीम्, स्मरणीयाम् = स्मरण योग्याम्, मृत्युरिति भावः, नेष्यति = प्रापयिष्यति, मीनकेतनः = कामः उद्याने = उपवने, कुमारयोः = कुमारश्च कुमारी च तयोरेकशेष द्वन्द्वः, अन्योन्यावलोकनवेलायाम् = अन्योन्यं परस्परं अवलोकनस्य दर्शनस्य वेलायाम् समये, असम सायकः = असमाः विषमसंख्यकाः सायकाः वाणाः यस्य सः काम इत्यर्थः (पञ्चबाणः), समम् = युगपद्, मुक्तसायकः प्रमुक्तशरः, अभूत् = अभवत्, तस्मात् = तस्मात् कारणात्, कुमारानयनम् = राजवाहनानयनम्, सुकरम् = सुसाध्यम्, ततः = तदनन्तरम्, रक्षणाय = संरक्षणाय, समयोचितकरणीयचतुरम् = समये तत् काले यत् उचित करणीयं उचित कर्तव्यं तत्र चतुरं प्रवीणं अथवा समयस्य उचितानि करणीयानि च तानि तत्र चतुरम्. सखीगणम् = सखी समुदायम्, नियुज्य = संस्थाप्य, राजकुमारमन्दिरम् = राजवाहनभवनम्, अवाप = गतवतीत्यर्थः, पुष्पबाणबाण तूणीरायमाणमानसः = पुष्पबाणस्य कामस्य बाणैः शरैः तूणीरवदाचरन्मानसं हृदयं यस्य सः पुष्पबाण विद्ध इति भावः, अनङ्गतप्तावयवसम्पर्क परिम्लानपल्लवशयनम् = अनङ्गेन कामेन तप्तानां सन्तप्तानां अवयवानां अङ्गानां सम्पर्कः तेन परिम्लानाः म्लानतामुपगताः पल्लवाः किसलयाः यस्य तादृक् शयनं शय्या, तत्र अधिष्ठितः = स्थितः, उपविष्टः इति यावत्, प्राणेश्वरीम् = प्राणप्रियां, उद्दिश्य = अवलम्ब्य, सह = साकम्, पुष्पोद्भवेन = तन्नामकेन स्वमित्रेण, संलपन् = विजल्पन्, आगताम् = समागताम्, प्रियवयस्याम् = प्रियसखीम्, आलोक्य = अवलोक्य, पादमूलम् = समीपमित्यर्थः पादमूलमागतामित्यन्वयः, अन्वेषणीया = अन्वेषणार्हा, लतेव = व्रततीव (महौषधत्वात्) बालचन्द्रिका आगता = समायाता, सन्तुष्टमना = सन्तुष्टं परितुष्टं मनः मानसं यस्य सः, निटिलतट मण्डनीभवदम्बुज कोरकाकृति लसदञ्जलिपुटाम् = निटिलतटे ललाटप्रदेशे मण्डनीभवन् विलसन् अम्बुजकोरकः कमलकोरकः तदिव आकृतिः यस्य सः अम्बुजकोरकाकृतिः लसन् अथवा कृतिरिव लसन् शोभमानः अञ्जलिपुटः यस्याः ताम् प्रणमन्तीमितिभावः, इतः = अत्र, निषीद = उपविश, निर्दिष्टसमु-

चितासनासीनाम् = निर्दिष्टं कथितं यत् समुचितासनं तत्र आसीनामुपविष्टां अवन्तिसुन्दरीप्रेषितम् = सखीप्रहितम्, सकर्पूरम् = सघनसारम्, ताम्बूलम् = नागवल्लीम्, विनयेन = विनीतभावेन, ददतीम् = समर्पयन्तीं, ताम् = बालचन्द्रिकाम्, कान्तावृत्तान्तम् = प्रियासमाचारम्, अपृच्छत् = ज्ञातुमैच्छत्, तया = बालचन्द्रिकया, सविनयम् = विनयपूर्वकम्, अभासि = अवाचि, देव = राजन्, क्रीडावने = क्रीडोपवने, भवदवलोकनकालम् = त्वद्दर्शनकालम् आरभ्य = ततः प्रभृति, मन्मथमथ्यमाना = कामतप्ता, पुष्पतल्पादिषु = कुसुम पर्यङ्केषु तापशमनम् = सन्तापशान्तिम्, अलभमाना = अप्राप्नुवती, वामनेन = खर्वेण, उन्नततरु फलम् = उन्नत वृक्ष फलम्, अलभ्यम् = लब्धुमशक्यम्, त्वदुरः स्थलालिङ्गनसौख्यम् = भवद् वक्षस्थलपरिरम्भण सुखम्, स्मरान्धतया = कामान्धतया, लिप्सुः = लब्धुमिच्छुः सा = अवन्तिसुन्दरी, पत्रिकाम् = पत्रम्, आलिख्य = विलिख्य, वल्लभाय = प्रियतमाय, एनाम् = पत्रिकाम्, अर्पय = देहि, माम् = बालचन्द्रिकाम्, नियुक्तवती = प्रहितवतीत्यर्थः, आदाय = गृहीत्वा, पपाठ = अपठत्, सुभग = सुन्दर, कुसुमसुकुमारम् — कुसुमकोमलम्, जगदनवद्यम् = जगति संसारे अनवद्यं अनिन्द्यं निर्दोषमिति भावः, ते = भवतः, रूपम् = सौन्दर्यम्, विलोक्य = अवलोक्य, मम = अवन्तिसुन्दर्याः, मानसम् = हृदयम्, अभिलषति = इच्छति, त्वम् = भवान्, चित्तम् = चेतः, तथा, मृदुलम् = पेशलम्, सुकोमलं वा, कुरु = विधेहि ।

टिप्पणी—कुमारयोः = कुमारी च कुमारश्च इस विग्रह से यहाँ पर एक शेष द्वन्द्व समास है। अतः राजकुमार तथा राजकुमारी दोनो अर्थ ग्रहण होगा। नियुज्य = लगाकर नि + युज् + क्त्वा + ल्यप्। वामनेनेव = उपमा अलंकार है। मिलाइये "प्रांशुलभ्ये फलो लोभादुद्वाहुरिव वामनः ।१।३। रघुवंश। कुसुमसुकुमारम्—में लुप्तोपमा अलंकार। आर्या छन्द है। काव्यलिङ्ग अलंकार है।

इति पठित्वा सादरमभाषत- "सखि, छायावन्मामनुवर्तमानस्य पुष्पोद्भवस्य वल्लभा त्वमेव तस्या मृगीदृशो बहिश्चराः प्राणाः इव वर्तसे। त्वच्चातुर्यमस्यां क्रियालतायामालवालमभूत्। यत्तवा-

भीष्टं येन प्रिया मनोरथः फलिष्यति तदखिलं करिष्यामि। नताङ्ग्या मन्मनः काठिन्यमाख्यातम्। यदा केलीवने कुरंगलोचना लोचनपथमवर्तत तदैषापहृतमदीयमानसा सा स्वमन्दिरमगात्। सा चेतसो माधुर्यकाठिन्ये स्वयमेव जानाति। दुष्करः कन्यान्तःपुरप्रवेशः। तदनुरूपमुपायमुपपाद्य श्वः परश्वो वा नतांगीं संगमिष्यामि मदुदन्तमेवाख्याय शिरीषकुसुमसुकुमाराया यथा शरीरबाधा न जायेत तथाविधमुपायमाचर इति।

बालचन्द्रिकापि तस्य प्रेमगर्भितं वचनमाकर्ण्य संतुष्टा कन्यापुरमगच्छत्। राजवाहनोऽपि यत्र हृदयवल्लभावलोकनसुखमलभत तदुद्यानं विरहविनोदाय पुष्पोद्भव समन्वितो जगाम। तत्र चकोरलोचनावचितपल्लवकुसुमनिकुरम्बं महीरुहसमूहं शरदिन्दुमुख्या मन्मथसमाराधन स्थानं च नतांगी पदपंक्तिचिन्हितं शीतलसैकततलं च सुदतीभुक्तमुक्तं माधवीलतामण्डपान्तर पल्लव तल्पं च विलोकयंल्ललनातिलकविलोकनवेलाजनितशेषाणि स्मारं स्मारं मन्दमारुतकम्पितानि नवचूतपल्लवानि मदनाग्निशिखा इव चकितो दर्शं-दर्शं मनोजकर्णेजपानामिव कोकिलकीरमधुकराणां क्वणितानि श्रावं-श्रावं मार विकारेण क्वचिदप्यवैस्थातुमसहिष्णुः परिबभ्राम।

हिन्दी अर्थ—इस प्रकार पढ़कर राजवाहन आदरपूर्वक बोला—'हे सखि! छाया के समान साथरहने वाली (मेरे मित्र) पुष्पोद्भव की प्रिया तुम उस मृगनयनी अवन्तिसुन्दरी के बाह्य प्राणों के समान हो। इस कार्य रूपी लता में तुम्हारा चातुर्य थलहे के समान है जो आपकी इच्छा है जिससे प्रिया का मनोरथ सफल हो वह सब कुछ करूँगा। वह सुन्दरी मेरे मनको कठिनता (कठोरता) से युक्त कहती है। जब वह मृगनयनी उस क्रीडा उद्यान में मेरे नेत्रों के सामने से गुजरी, उसी समय मेरे मन को 'अपहरण करके वह अपने भवन को चली गयी। वह हृदय की मधुरता और कठिनता को स्वयं ही जानती है। कन्यान्तःपुर में प्रवेश पाना कठिन है तदनुकूल उपाय करके कल अथवा परसों उस सुन्दरी के पास आऊँगा। हमारे समाचार को उससे कहकर जिस प्रकार शिरीष पुष्प के समान सुकोमल उस सुन्दरी के शरीर को कष्ट (पीड़ा) न होवे वैसा ही उपाय करो।"

बालचन्द्रिका भी उसके प्रेम से भरे हुए वचन सुनकर सन्तुष्ट होती हुई कन्यान्तःपुर को चली गयी। राजवाहन भी, जहाँ पर उसे प्राणप्रिया के दर्शन का सुख मिला था, उसी बगीचे में विरह दूर करने के लिए पुष्पोद्भव के सहित चला गया। वहाँ पर उस चकोर के समान नेत्रों वाली अवन्तिसुन्दरी के द्वारा तोड़े हुए पल्लव एवं कुसुम समुदाय वाले वृक्षसमूह को देखा, और उस शरत्कालीन चन्द्रमा के समानमुख वाली सुन्दरी के कामदेव के पूजन स्थान को तथा उस सुन्दरी के पदचिन्हों से चिन्हित शीतल बालुकामय प्रदेश को, उस सुन्दर दांतों वाली के द्वारा उपभुक्त माधवी लता के मण्डप के अन्दर कुसुमशय्या को देखता हुआ, उस श्रेष्ठ सुन्दरी के देखने के समय उत्पन्न (विभिन्न हाव-भाव आदि) को स्मरण करता हुआ, हलकी वायु के झोंकों से कम्पित नूतन आम के पल्लवों को कामाग्नि की शिखा के समान चकित होकर देखता हुआ कामदेव के गुप्तचर (कर्णेजप=चुगुलखोर) कोयल, तोता और भ्रमरों के गुञ्जन को सुनता हुआ काम की व्यथा के कारण कहीं भी ठहरने में असमर्थ होता हुआ घूमने लगा।

संस्कृतव्याख्या:—इति = इत्थम, पठित्वा = सम्पण्य, सादरम्= समानम् अभाषत = अवदत्, सखि=आलि, छायावत्=प्रतिबिम्बवत् माम् =राजवाहनमपि, अनुवर्तमानस्य = अनुसरतः वल्लभा = दयिता, त्वमेव =भवानेव, मृगीदृशः=कुरंगनयनायाः, बहिश्चराः = बाह्यचराः, प्राणाः = असवः इव = यथा, वर्तसे = असि, त्वच्चातुर्यम् = भवत्कुशलता, क्रियालतायाम् = कार्यलतायाम्, आलवालम् =आवालम् आवापो वा अभूत= अभवत्, तवाभीष्टम् = भवदभिलषितम्, येन = येन कारणेन, प्रियामनोरथः = वल्लभाभिलाषः, फलिष्यति = फलितं भविष्यति, तदखिलम् = तत्सर्वम्, करिष्यामि = विधास्यामि, नताङ्ग्या = सुन्दर्या, मन्मनः काठिन्यम् = अस्माकं हृदयकठोरता, आख्यातम् = कथितम्, यदा = यस्मिन् काले, केलीवने = क्रीडावने, कुरंगलोचना = एणाक्षी, लोचनपथम् = दृष्टिपथम्, अवर्तत = आगतामवत्, तदा = तदानीम्, एषा = कुरंगाक्षी, अपहृतमदीयमानसा = अपहृतं आकृष्टं चोरितं वा मदीयं अस्माकीनं मानसं हृदयं यया सा, स्वमन्दिरम् = स्वभवनम्, अगात् =

अयासीत्, सा = अवन्तिसुन्दरी, चेतसः = हृदयस्य, माधुर्यं काठिन्ये = माधुर्यं च मधुरता च काठिन्यं च कठोरता च ते, स्वयमेव = स्वतः एव, जानाति = अवगच्छति, दुष्करः = कन्यान्तःपुर प्रवेशः = अवरोधगृह प्रवेशः, तदनुरूपम् = तदनुकूलं, उपायम् = विधिम्, उपपाद्य = विधाय, श्वः = आगामिदिने, परश्वः = द्वितीयदिवसे, नताङ्गीम् = शोभनाङ्गीम्, संगमिष्यामि = मिलिष्यामि, मदुदन्तम् = मत्समाचारम्, आख्याय = उक्त्वा, शिरीषकुसुमसुकुमारायाः = शिरीष पुष्पकोमलायाः, शरीर वाधा = गात्रपीडा, न = नहि, जायेत = भवेत, तथाविधम् = तदनुरूपम्, आचर = कुरु, तस्य = राजवाहनस्य, प्रेमगर्भितम् = स्नेह निर्भरम्, वचनम् = वाक्यम्, आकर्ण्य = श्रुत्वा, संतुष्टा = प्रसन्नासती, कन्यापुरम् = कन्यान्तःपुरम्, अगच्छत् = अगमत्, यत्र = उद्याने, हृदयवल्लभावलोकन सुखम् = हृदयवल्लभाया प्राणप्रियायाः अवलोकन सुखं दर्शनानन्दम्, अलभत = प्राप्तवान्, तदुद्यानम् = तदुपवनम्, विरहविनोदाय = वियोगापनोदाय, पुष्पोद्भवसमन्वितः = पुष्पोद्भवसहितः, जगाम = गतवान्, तत्र = उद्याने, चकोरलोचनावचितपल्लव कुसुम निकुरम्बम् = चकोरस्येव लोचने नयने यस्याः सा तया अवचितं छिन्नं पल्लवानां किसलयानां कुसुमानां पुष्पाणां निकुरम्बं समूहः यस्य तम्, महीरुहसमूहं = वृक्ष समुदायम्, शरदिन्दुमुख्याः = शरदः इन्दुः चन्द्रः इति शरदिन्दुः तद्वन्मुखं आननं यस्याः तस्याः, मन्मथसमाराधनस्थानम् = मन्मथस्य कामस्य समाराधनस्थानं पूजास्थानम्, नतांगी पदपंक्ति चिह्नितम् = नताङ्ग्या सुन्दर्या पदपंक्त्या चरण चिह्नेन चिह्नितं अङ्कितम्, शीतल सैकततलम् = शीतलवालुका स्थानम्, सुदतीभुक्तमुक्तम् = शोभना दन्ताः यस्याः सा तया पूर्वं भुक्तं उपभुक्तं पश्चान्मुक्तं परित्यक्तं, माधवीलतामण्डपान्तरपल्लवतलाम् = माधवीलतायाः मण्डपान्तरे कुञ्जमध्ये पल्लवतल्पं किसलयपर्यङ्कम्, विलोकयन् = अवलोकयन् ललना तिलक विलोकनवेला जनित शेषाणि = ललना तिलकस्य प्रमदा भूषणस्वरूपायाः, अवन्तिसुन्दर्याः इत्यर्थः, विलोकन वेलायाम् = अवलोकन काले जनितानि उत्पन्नानि शेषाणि स्मरणीयानि कटाक्षादीनि, स्मारं स्मारम् = स्मृत्वा, मन्दमारुतकम्पितानि = मन्दमारुतेन मन्द वायुना कम्पितानि आन्दोलितानि,

नवचूतपल्लवानि = नवरसाल किसलयानि, मदनाग्नि शिखा इव = कामाग्नि शिखा इव, चकितः = आश्चर्ययुक्तः, दर्शम् दर्शम् = दृष्ट्वा, दृष्ट्वा, मनोजकर्णेजपानामिव मनोजस्य वामदेवस्य कर्णेजपानामिव, सूचकानामिव, कोकिलकीरमधुकराणाम् = कोकिलाश्च पिकाश्च कीराश्च शुकाश्च मधुकराश्च भ्रमराश्च तेषां, क्वणितानि = गुञ्जितानि, कूजितानि वा, श्रावं श्रावम् = श्रुत्वा श्रुत्वा, मारविकारेण = कामविकारेण, क्वचिदपि = क्वापि, अवस्थातुम् = स्थातुम्, असहिष्णुः = सोढुमसमर्थः, परिबभ्राम = चङ्क्रमण चकार।

टिप्पणी– सुदती = सुन्दरदांतो वालीः शोमनाः दन्ताः यस्याः सा 'वयसिदन्तस्यदतृ'सूत्र से दन्त का दतृ आदेश। स्मारं स्मारम् = स्मरण करके, "स्मृ" "आभीक्ष्ण्ये णमुल् च" सूत्र से णमुल् एवं द्वित्वादि होकर बनता है। इसी प्रकार "श्रावं श्रावं" एवं "दर्शं दर्शं" भी बनेगा। कर्णेजपः=सूचना देने वाला–"हस्ति सूचकयोरितिवक्तव्यम्" वा० के सहयोग से "स्तम्बकर्ण-योरमि जपोः" सूत्र अच्, तथा "तत्पुरुषे कृति बहुलम्" इति अलुक् समास। मदनाग्नि शिखा इव—उपमा अलंकार है। परिबभ्राम = परि+ भ्रम् + लिट् लकार, प्रथम पुरुष, एकवचन।

विद्येश्वरस्यागमनम प्रतिज्ञाकरणञ्च—

तस्मिन्नेव धरणीसुरः एकः सूक्ष्मचित्रनिवसनः स्फुरन्मणि कुण्डलमण्डितो मुण्डितमस्तकमानवसमेतश्चतुरवेषमनोरमो यदृच्छया समागतः समन्ततोऽभ्युल्लसत्तेजोमण्डलं राजवाहनमाशीर्वाद पूर्वकं ददर्श। राजवाहनः सादरं "को भवान्, कस्यां विद्यायां निपुणः" इति तं पप्रच्छ। स च" विद्येश्वरनामधेयोऽहमैन्द्रजालिकविद्याकोविदो विविधदेशेषु राजमनोरञ्जनाय भ्रमन्नुज्जयिनीमद्यागतोऽस्मि" इति शशंस। पुनरपि राजवाहनं सम्यगालोक्य "अस्यां लीलावनौ पाण्डुरतानिमित्तं किम्' इति साभिप्रायं विहस्यापृच्छत्। पुष्पोद्भवश्च निजकार्यकरणं तर्कयेन्नेनमादरेण बभाषे–'ननु सतां सख्यस्याभाषणपूर्वतया चिरं रुचिरभाषणो भवानस्माकं प्रियवयस्यो जातः। सुहृदामकथ्यं च किमस्ति। केलीवनेऽस्मिन्वसन्तमहोत्सवायागताया मालवेन्द्रसुताया राजनन्दनस्यास्य चाकस्मिकदर्शनेऽन्यो-

न्यानुरागातिरेकः समजायत। सततसंभोगसिद्धच्युपाया भावेनासावी-दृशीमवस्थामनु भवति" इति। विद्येश्वरो लज्जाभिरामं राजकुरमा-मुखमभिवीक्ष्य विरचितमन्दहासा व्याजहार-"देव, भवदनुचरे मयि तिष्ठति तव कार्यमसाध्यं किमस्ति। अहमिन्द्रजालविद्यया मालवेन्द्रं मोहयन् पौरजनसमक्षमेव तत्तनयापरिण्यं रचयित्वा कन्यान्तःपुरप्रवेशं कारयिष्यामिति वृतान्त एष राजकन्यकायै सखीमुखेन पूर्वमेव कथयितव्यः इति। संतुष्टमना महीपतिरनिमित्तं मित्रं प्रकटीकृतकृत्रिमक्रियापाटवम् विप्रलम्भकृत्रिम प्रेम सहज सौहार्दवेदिन तं विद्येश्वरं सबहुमानं विससर्ज।

हिन्दी अर्थ—उसी समय एक ब्राह्मण महीन एवं रंगीन कपड़े पहने हुए तथा चमकते हुए मणिमय कुण्डल धारण किये हुए रमणीय वेशधारी साथ में एक मुड़े शिरवाले व्यक्ति को लिए हुए, स्वेच्छापूर्वक वहाँ पर आया और सर्वतः उद्दीप्त तेज मण्डल वाले राजवाहन को आशीर्वाद दिया। राजवाहन ने पूछा 'आप कौन हैं और किस विद्या में निपुण हैं"। उसने कहा "मेरा नाम विद्येश्वर है और मैं इन्द्रजाल विद्या में प्रवीण हूँ तथा विभिन्न देशों में राजाओं के मनोरञ्जन के लिए घूमता हुआ आज उज्जयिनी आया हूँ। पुनः राजवाहन को अच्छी तरह देखकर इस क्रीडाभूमि में आप पर पीलापन का क्या कारण है" इस प्रकार अभिप्राय सहित हंसकर पूछा। पुष्पोद्भव ने अपने कार्य में उसे सहयोगी समझकर आदर पूर्वक कहा "सज्जनों की मैत्री प्रथम भाषण (वार्तालाप) से ही हो जाती है। अतः मधुरभाषी आप मेरे मित्र हैं और मित्रों से छिपाना क्या है। इस क्रीडावन में वसन्त उत्सव पर मालवराज की पुत्री अवन्तिसुन्दरी के आने पर तथा राजकुमार राजवाहन का एक दूसरे को देखने पर अत्यन्त प्रेम पैदा हो गया है तथा संभोग सिद्धि का उपाय न मिलने पर यह इस प्रकार की अवस्था का अनुभव करता है।" विद्येश्वर लज्जा से सुन्दर प्रतीत होने वाले राजकुमार के मुख को देखकर मन्द हास करता हुआ बोला— 'देव, मेरे जैसे आपके सेवक होने पर आपका क्या कार्य असाध्य है। मैं इन्द्रजाल विद्या के द्वारा मालवराज को मोहित करके, पुरवासियों के समक्ष ही उसकी पुत्री के विवाह को रचकर (तुम्हें) कन्यान्तःपुर में प्रवेश

कराऊँगा। यह वृतान्त राजपुत्री अवन्तसुन्दरी को किसी सखी के माध्यम से कहलवा दीजिए।" सन्तुष्ट होकर राजवाहन ने अकारण मित्र एवं कृत्रिम क्रिया कुशलता को प्रकट करने वाले तथा वञ्चना कृत्रिमप्रेम एवं सहज सौहार्द को जानने वाले उस विद्येश्वर को मानपूर्वक विदा किया।

संस्कृतव्याख्या:—तस्मिन्नवसरे = तत्काले, धरणीसुरः = ब्राह्मणः सूक्ष्मचित्रनिवसनः = सूक्ष्मं श्लक्ष्णं चित्रं विचित्रं निवसनं वस्त्रं यस्य सः, स्फुरन्मणिकुण्डलमण्डितः = स्फुरद्भ्यां मणिजटिताभ्यां कुण्डलाभ्यां मण्डितः सुशोभितः, मुण्डितमस्तकमानवसमेतः = मुण्डितं केशरहितं मस्तकं शिरः यस्य तादृशेन मानवेन पुरुषेण समेतः उपेतः, चतुरवेषमनोरमः = चतुरवेशेन कुशलवेशेन मनोरमः मनोहरः, यदृच्छया = स्वेच्छया, समागतः = समायातः, समन्ततः = सवतः, अभ्युल्लसत्तेजोमण्डलम् = अभ्युल्लसत् पर्युल्लसत् तेजोमण्डलं तेजोराशिः यस्य तम्, राजवाहनम् = तन्नामकम्, आशीर्वाद पूर्वकम् = आशीर्वचन युक्तम्, ददर्श = दृष्टवान्, सादरम् = समानम्, को भवान् = कस्त्वम्, कस्यां विद्यायाम् = कस्मिन् शास्त्रे, निपुणः = चतुरः, तम् = विद्येश्वरम्, पप्रच्छ = पृष्टवान्, विद्येश्वरनामधेयः = तन्नामकः, ऐन्द्रजालिक विद्याकोविदः = कापटिक विद्यानिपुणः, विविधदेशेषु = विभिन्नदेशेषु, राजमनोरञ्जनाय = राज्ञां नृपाणां मनोरञ्जनाय मनोविनोदाय, भ्रमन् = अटन्, उज्जयिन्यां = विशालायाम्, आगतोऽस्मि = समागतोऽस्मि, शशंस = अकथयत्, पुनरपि = भूयोऽपि, सम्यक् = निपुणम्, आलोक्य = विलोक्य, लीलावनौ = क्रीडाभूमौ, पाण्डुरतानिमित्तम् = पाण्डुरताकारणम्, साभिप्रायम् = साकूतम्, विहस्य = हासं कृत्वा, अपृच्छत् = पप्रच्छ, निजकार्यकरणम् = स्वकार्यसाधकम्, तर्कयन् = विचारयन्, एनम् = विद्येश्वरम्, आदरेण = मानेन, बभाषे = उवाच, सताम् = सज्जनानाम्, सख्यस्य = मित्रतायाः, आभाषण पूर्वतया = सम्भाषण पूर्वतया, चिरम् = चिराय, रुचिरभाषणः = रुचिरं मधुरं भाषणं सम्भाषणं यस्य सः, भवान् = त्वम्, प्रियवयस्यः = प्रियसखा, जातः = अभवत्, सुहृदाम् = मित्राणां, अकथ्यम् = गोपनीयमितिभावः, अस्ति = विद्यते, केलीवने = क्रीडावने, वसन्तमहोत्सवाय = मधुमासोत्सवाय, आगतायाः = समागतायाः,

मालवेन्द्रसुतायाः = मालवराजदुहितुः, राजनन्दनस्य = राजकुमारस्य, आकस्मिकदर्शने = आकस्मिक चाक्षुष संयोगे, अन्योन्यानुरागातिरेकः = परस्पर स्नेहाधिकः, समजायत = समभूत्, सततसंभोग सिद्ध्युपायाभावेन = सततसम्भोग सिद्धेः निरन्तरभोगसिद्धेः उपायाभावेन विध्यभावेन, असौ = राजवाहनः, ईदृशीम् = एतादृशीम्, अवस्थाम् = दशाम्, अनुभवति = अनुभवं करोति, लज्जाभिरामम् = लज्जया ह्रिया अभिरामं मनोहरं राजकुमारमुखम् = राजनन्दनवदनम्, अभिवीक्ष्य = अवलोक्य, विरचितमन्दहासः = विरचितः कृतः मन्दहासः स्मितं येन सः, व्याजहार = अकथयत्, देव = राजन्, भवदनुचरे = भवतः तव अनुचरे सेवके, मयि = विद्येश्वरे, तिष्ठति = भवति सति, तव = भवतः, कार्यम् = करणीयम्, असाध्यम् = दुष्करम्, किमस्ति = किं विद्यते, अहम् = विद्येश्वरः, इन्द्रजालविद्यया = कापटिकविद्यया, मालवेन्द्र = मालवराजम, मोहयन् = मोहितं कुर्वन्, पौरजनसमक्षमेव = पौर जनानां पुरवासिनां समक्षमेव पुरतः एव, तत्तनयापरिणयम् = तत्पुत्रीपरिणयम्, रचयित्वा = विरच्य, कन्यान्तःपुरप्रवेशम् = अवरोधगृहप्रवेशम, कारयिष्यामि = प्रवेशं कारयिष्यामि, वृत्तान्तः = वार्ता, राजकन्यकायै = राजकुमारिकायै, पूर्वमेव = प्रथममेव, कथयितव्यः = कथनीयः, सन्तुष्टमना = प्रहृष्टमना, महीपति = भूपतिः, अनिमित्तम् = अकारणम्, मित्रम् = सखायम्, प्रकटीकृत कृत्रिम क्रियापाटवम् = प्रकटीकृतं प्रदर्शितं कृत्रिमक्रियायां कृत्रिमकरणे पाटवं चातुर्यं येन तम्, विप्रलम्भकृत्रिमप्रेम सहजसौहार्दवेदिनम् = विप्रलम्भश्च च प्रवञ्चनं च कृत्रिमप्रेम च असहजस्नेहश्च सहज सौहार्दञ्च तानि वेत्तीति तम्, विद्येश्वरम् = तन्नामकम्, सबहुमानम् = सादरम्, विससर्ज = विसृष्टवान् ।

टिप्पणी-ददर्श = देखा = दृश् + लिट् ल०, प्र०पु०,एक व० । पाण्डुरता = पीलापन "तस्य भावस्त्वतलौ" सूत्र से तल् प्रत्यय । मोहयन् = मोहितकरता हुआ-मुह् + शतृ । विप्रलम्भ = प्रतारण या प्रवञ्चन, वियोग भी अर्थ होता है । किन्तु यहाँ पर प्रवञ्चन अर्थ ही उचित है ।

अथ राजवाहनो विद्येश्वरस्य क्रियापाटवेन फलितमिव मनोरथं मन्यमानः पुष्पोद्भवेन सह स्वमन्दिरमुपेत्य सादरं बालचन्द्रिकामुखेन निजवल्लभायै महीसुरक्रियमाणं संगमोपायं वेदयित्वा

कौतुकाकृष्टहृदयः "कथमिमां क्षपां क्षपयामि" इत्यतिष्ठत् । परेद्युः प्रभाते विद्येश्वरो रसभावरीति गतिचतुरस्तादृशेन महता निजपरिजनेन सह राजभवनद्वारान्तिकमुपेत्य दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः सहसोपगम्य सप्रणामम् "ऐन्द्रजालिकः समागतः" इति द्वाःस्थैर्विज्ञापितेन तद्दर्शनकुतूहलाविष्टेन समुत्सुकावरोधसहितेन मालवेन्द्र समाहूयमानो विद्येश्वरः कक्षान्तरं प्रविश्य सविनय माशिषं दत्वा तदनुज्ञातः परिजनताड्यमानेषु वाद्येषु नदत्सु, गायकीसु मदकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु, समधिकरागरञ्जित सामाजिकमनोवृत्तिषु पिच्छिकाभ्रमणेषु, सपरिवारं परिवृत्तां भ्रामयन्मुकुलितनयनः क्षणमतिष्ठत् । तदनु विषमं विषमुल्बणं वमन्तः फणालंकरणा रत्नराजिनीराजितराजमन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः ।

हिन्दी अर्थ—इसके पश्चात् राजवाहन विद्येश्वर की कार्य कुशलता से अपने मनोरथ को सफल समझता हुआ पुष्पोद्‌भव के साथ अपने भवन को जाकर और आदरपूर्वक बालचन्द्रिका के द्वारा अपनी प्रिया के लिए उस ब्राह्मण के द्वारा की जाने वाली संगमोपाय की विधि बताकर उत्सुक हृदय वाला "इस रात्रि को कैसे व्यतीत करूँ" यह सोचता हुआ स्थित हो गया। दूसरे दिन प्रातःकाल रस, भाव, रीति आदि में प्रवीण विद्येश्वर उसी प्रकार के अपने विशाल (अनेक) परिजनों के साथ राजद्वार पर आकर द्वारपालों के माध्यम से अपने (आने का) समाचार पहुंचाकर सहसा पास में जाकर, द्वारपाल के द्वारा प्रणामपूर्वक ऐन्द्रजालिक आया है" इस प्रकार निवेदन करने पर उसके दर्शन के कुतूहल से आकृष्ट, समुत्सुक राजमहिलाओं के सहित, मालवराज के द्वारा बुलाये जाने पर (वह विद्येश्वर) द्वितीयकक्ष में प्रवेश करके विनयपूर्वक आशीर्वाद देकर तथा उससे आज्ञा पाकर जब परिजन वर्ग के द्वारा विभिन्न बाजे बजाये जा रहे थे (अर्थात् बाजों का शब्द हो रहा था), गायिकायें मदोन्मत्त कोकिल के समान मनोहर ध्वनि कर रही थीं, अर्थात् गीत गाने लगीं तथा आकृष्ट (विद्येश्वर के द्वारा) मयूरादि पिच्छ के गुच्छे को सामाजिकों की चित्तवृत्तियों को आकृष्ट करने के लिए घुमाने पर, स्वयं नेत्र बन्द करके अपने परिजनों

को घुमाता हुआ क्षण भर के लिए बैठ गया। इसके पश्चात् भयंकर विष को उगलने वाले फणिधर, जिनकी मणियाँ राजभवन को प्रदीप्त कर रहीं थी, भय को पैदा करते हुए घूमने लगे।

संस्कृतव्याख्या :—अथ = तदनन्तरम्, क्रियापाटवेन = क्रिया चातुर्येण, फलितमिव = सिद्धप्रायमिव सफलमिव वा, मनोरथम् = अभिलाषम्, मन्यमानः = स्वीकुर्वाणः, सह = साकम्, स्वमन्दिरम् = स्वभवनम्, उपेत्य = प्राप्य, सादरम् = समानम्, बालचन्द्रिकामुखेन = बालचन्द्रिकामाध्यमेन, निजवल्लभायै = निजप्रियायै, महीसुरक्रियमाणम् = ब्राह्मणानुष्ठीयमानम्, संगमोपायम् = समागमविधिम्, वेदयित्वा = ज्ञापयित्वा, कौतुकाकृष्ट हृदयः = कौतुकेन कुतुकेन आकृष्टं समाकृष्टं हृदयं चेतः यस्य सः, कथम्=कथंकारम्, क्षपाम् = निशाम् क्षपयामि = यापयामि, अतिष्ठत् = स्थितोऽभवत्, परेद्युः = अन्येद्युः, प्रभाते = प्रातः, रसभावरीतिगति चतुरः = शृंगारहास्यादयः भावाः अन्ये भावाः रीतिगतयः इन्द्रजाल क्रियाः तत्र चतुरः प्रवीणः, महता = विशालेन, निजपरिजनेन = निजसहचरवर्गेण, सह = सार्धम् राजभवनद्वारान्तिकं राजप्रासादसमीपमित्यर्थः, उपेत्य = प्राप्य, दौवारिकनिवेदितनिजवृत्तान्तः = दौवारिकैः द्वाःस्थैः निवेदितः कथितः निजवृत्तान्तः येन सः, सहसा = अकस्मात्, उपगम्य = समीपंगत्वा, सप्रणामम् = प्रणामपूर्वकम्, ऐन्द्रजालिकः = कापटिकः, समागतः = समायातः, द्वास्थैः = द्वारपालैः, विज्ञापितेन = निवेदितेन, तद्दर्शन कुतूहलाविष्टेन = तदवलोकन कुतुकाकुलेन, समुत्सुकावरोधसहितेन = समुत्सुकः उत्कण्ठितः अवरोधः राजदाराः तेन सहितेन उपेतेन, मालवेन्द्रेण = मालवराजेन, समाहूयमानः = आहूयमानः, कक्षान्तरम् = द्वितीयकक्षाम्, प्रविश्य = प्रवेशं कृत्वा, सविनयम् = विनयपूर्वकम्, आशिषम् = आशीर्वादम्, दत्त्वा = समर्प्य, तदनुज्ञातः = तदाज्ञप्तः, परिजनताड्यमानेषु = सहचर ताड्यमानेषु, वाद्येषु = विविधवाद्येषु, नदत्सु = ध्वनत्सु, गायकीषु = गायिकासु, मदकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु = मदकलानां मदोन्मत्तानाम्, कोकिलानां पिकानां इव मञ्जुलः मनोहरः ध्वनिः गीतध्वनिः यासां तासु, समधिक रागरञ्जित

सामाजिक मनोवृत्तिपु = समधिकरागेण रागाधिक्येन रञ्जिताः आकृष्टाः सामाजिकानां सभ्यानां मनोवृत्तिः चेतोवृत्तिः येन तेषु, पिच्छिकाभ्रमणेषु = पिच्छिका कार्पटिकानां उपकरण भूतः विभिन्न पक्षिपुच्छगुच्छः, तस्याः भ्रमणेषु, "ते पिच्छिकां भ्रामयित्वा प्रेक्षक जनान् मोहयन्ति" इति लोके दृष्टम्, सपरिवारम् = सपरिजनम्, परिवृतम् = मण्डलाकारम्, भ्रामयन् = भ्रमणं कारयन्, मुकुलितनयनः = मुकुलिते अनुन्मीलिते नयने नेत्रे यस्य सः, क्षणम् = मुहूर्तम्, अतिष्ठत् = उपाविशदिति भावः, तदनु = तदनन्तरम्, विपमम् = उत्कटम्, विषम् = हालाहलम्, उल्वणम् = तीव्रम्, वमन्तः = उद्गिरन्तः, फणालंकरणाः = फणाः भोगा एव अलंकरणं भूषणं येषां ते, रत्नराजिनीराजित राजमन्दिराभोगाः = रत्नराजिभिः मणिश्रेणीभिः नीराजितः समुज्ज्वलीकृतः राजमन्दिरस्य राजभवनस्य आभोगः प्रदेशः यैस्ते, भोगिनः = सर्पाः, निश्चेरुः = विचरन्तिस्म ।

टिप्पणी—क्षपयामि = व्यतीत करूँ 'क्षै क्षये' णिच् 'आदेश उपदेशेऽशिति' सूत्र से आत्व, "अर्ति ह्री—इत्यादि सूत्र से पुक् आगम होता है। अवरोधः = रनिवास 'शुद्धान्तश्चावरोधश्च" इत्यमरः। 'मदकलध्वनिषु' में लुप्तोपमालंकार है। भ्रामयन् = भ्रम + णिच् + शतृ। निश्चेरुः = निस् + चर् + लिट ल०, प्र० पु०, बहु०।

गृध्राश्च वहवस्तुण्डैरहिपतीनादाय दिवि समचरन्। ततोऽग्रजन्मा नरसिंहस्य हिरण्यकशिपोर्दैत्येश्वरस्य विदारणमभिनीय-महाश्चर्यान्वित राजानमभाषत—'राजन्, अवसान समये भवता शुभसूचकं द्रष्टुमुचितम्। ततः कल्याणपरम्परावाप्तये भवदात्मजा कारायास्तरुण्याः निखिल लक्षणोपेतस्य राजनन्दनस्य विवाहः कार्यः" इति। तदवलोकन कुतूहलेन महीपालेनानुज्ञात स संकल्पितार्थ सिद्धि संभावनसम्फुल्लवदनः सकलमोहजनकमञ्जनं लोचनयोर्निक्षिप्य परितो व्यलोकयत्। सर्वेषु "तदैन्द्रजालिकमेव कर्म" इति साद्भुतं पश्यत्सु रागपल्लिवहृदयेन राजवाहनेन पूर्व संकेतसमागतामनेकभूषणभुषिताङ्गीमवन्तिसुन्दरीं वैवाहिक मन्त्र-तन्त्र नैपुण्येनाग्नि साक्षीकृत्य संयोजयामास। क्रियावसाने सति "इन्द्रजालपुरुषाः सर्वे गच्छन्तु भवन्तः' इति द्विजन्मनोच्चैरुच्य-

माने सर्गे मायामानवा यथायथमन्तर्भावं गताः। राजवाहनोऽपि पूर्वकल्पितेन गूढोपायचातुर्येणैन्द्रजालिकपुरुषवत्कन्यान्तःपुरं विवेश। मालवेन्द्रोऽपि तदद्भुतं मन्यमानस्तस्मैवाडवाय प्रचुरतरं धनं दत्त्वा विद्येश्वरम् 'इदानीं साधय' इति विसृज्य स्वयमन्तर्मन्दिरं जगाम। ततोऽवन्तिसुन्दरी प्रियसहचरीवरपरिवारा वल्लभोपेता सुन्दरं मन्दिरं ययौ। एवं दैवमानुषबलेन मनोरथ साफल्यमुपेतो राजवहनः सरसमधुरचेष्टाभिः शनैः शनैर्हरिणलोचनाया लज्जामपनयन् सुरतरागमुपनयन् रहोविश्रम्भमुपजनयन् संलापे तदनुलाप पीयूषपानलोलश्चित्रचित्रं चित्तहारिणं चतुर्दशभवनवृत्तान्तं श्रावयामास।

शब्दार्थ-वाडवाय=ब्राह्मण को (कोश 'द्विजात्यग्रजन्मभूदेववाडवाः)।

हिन्दी अर्थ—(विद्येश्वर के द्वारा उत्पन्न) बहुत से गीध अपने मुखों से सर्पों को पकड़ करके आकाश में विचरने लगे। इसके पश्चात् उस ब्राह्मण ने हिरण्यकशिपु का विदारण करने वाले नृसिंह का अभिनय करके आश्चर्यचकित राजा से कहा—हे राजन्! समाप्ति के समय शुभसूचक (एक खेल) देखना भी उचित है। इसलिए कल्याण की प्राप्ति के लिए आपकी पुत्री के समान आकारवाली एक युवती का सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त एक राजकुमार के साथ विवाह कराऊँगा"। उसको देखने के कुतूहल से युक्त राजा से आज्ञा पाकर वह अपने अभीष्ट कार्य की सिद्धि की सम्भावना से प्रसन्नमुख होकर सभी लोगों को मोह पैदा करने वाले अञ्जन को नेत्रों में लगाकर चारो ओर देखने लगा। यह भी इन्द्रजाल का ही कार्य है इस प्रकार सभी के आश्चर्यपूर्वक देखने पर अनुराग से युक्त हृदय वाले राजवाहन के पूर्व के संकेत से आयी हुई एवं अनेक भूषणों से सुसज्जित अवन्तिसुन्दरी का संयोग वैवाहिक मन्त्र-तन्त्र की निपुणता से अग्नि को साक्षी करके राजवाहन के साथ कर दिया (अर्थात् उन दोनों का परिणय हो गया)। इस क्रिया के समाप्त होने पर उस ब्राह्मण ने कहा—'हे इन्द्रजाल पुरुषो! आप सभी लोग जायें" यह कहने पर

सभी मायापुरुष धीरे-धीरे अन्तर्ध्यान हो गये। राजवाहन भी पहले से सुनिश्चित गुप्त उपायों की प्रवीणता से मायामनुष्यों के समान ही कन्या के अन्तःपुर में चला गया। मालवराज भी बहुत ही आश्चर्ययुक्त होता हुआ उस ब्राह्मण के लिए अधिक धन देकर कहा—'हे विद्येश्वर! अब जाओ" यह कहकर राजभवन में चला गया। इसके पश्चात् अवन्तिसुन्दरी भी अपनी प्रिय सखियों से युक्त तथा अपने प्रियतम से युक्त होकर अपने भवन को चली गयी। इस प्रकार दैवी और मानुषी शक्ति के द्वारा अपने मनोरथ को प्राप्त करके राजवाहन ने सरस और मधुर चेष्टाओं के द्वारा धीरे-धीरे उस मृगनयनी को लज्जा को हटाता हुआ, सुरतानुकूल बनाता हुआ, एकान्त में विश्वास को पैदा करता हुवा, बातचीत में उसकी वचनामृत को पान करने के लिए चञ्चल राजवाहन चित्रविचित्र मनोमुग्धकारी चौदह भुवनों के वृत्तान्त को सुनाने लगा।

संस्कृतव्याख्या:—गृध्राः = दाक्षाय्याः. बहवः = अधिकाः, तुण्डैः = मुखैः, अहिपतीन् = सर्पान, आदाय = गृहीत्वा, दिवि = आकाशे समचरन् = व्यचरन्. ततः = तदनन्तरम, अग्रजन्मा = ब्राह्मणः नरसिंहस्य = नरसिंहावतारस्य विष्णोः, हिरण्यकशिपोः = तन्नामकस्य, दैत्येश्वरस्य = दैत्यराजस्य, विदारणम् = नखैविदारणं, अभिनीय = अभिनयं कृत्वा, महाश्चर्यान्वितम् = साश्चर्यमित्यर्थः राजानम् = नृपम्, अभाषत = अकथयत, राजन्, नृप, अवसानसमये = समाप्तिकाले, भवता = त्वया, शुभसूचकम् = कल्याणसूचकम्, द्रष्टुम् = सन्दर्शनमिति भावः, उचितम् = युक्तम्, ततः = तदनन्तरम्, कल्याणपरम्परावाप्तये = मंगलपरम्पराप्राप्तये, भवदात्मजाकारायाः = भवतः तव आत्मज पुत्री तस्या आकारः स्वरूप इव आकारः यस्याः सा तस्याः, तरुण्याः = युवत्याः, निखिललक्षणोपेतस्य = सम्पूर्णलक्षणयुक्तस्य, राजनन्दनस्य = राजपुत्रस्य, विवाहः = परिणयः, कार्यः = कर्तव्यः, तदवलोकनकुतूहलेन = तद्दर्शनकुतूहलेन, महीपालेन = राज्ञा, अनुज्ञातः = आज्ञप्तः, सः = विद्येश्वरः, संकल्पितार्थसिद्धिसम्भावन सम्फुल्ल वदनः, संकल्पितार्थस्य अभीष्टस्य सिद्धेः सम्भावनेन सम्भावनया

सम्फुल्लं प्रफुल्लं वदनं मुखं यस्य सः, सकलमोहजनकम्=सम्पूर्ण जनमोहकम्, अञ्जनम्=कज्जलम् लोचनयोः = नेत्रयोः, निक्षिप्य=संस्थाप्य, परितः=सर्वतः, व्यलोकयत्=दृष्टवान्, सर्वेषु=अखिलेषु, तदैन्द्रजालिकमेव =तत्कापटिकमेवं कर्म=कार्यम्, साद्भुतम् = साश्चर्यम्, पश्यत्सु= अवलोकयत्सु रागपल्लवितहृदयेन = रागेण अनुरागेण पल्लवितं अंकुरितं हृदयं चित्तं यस्य सः, पूर्वसंकेतसमागताम् = पूर्वनियोजनानुसारमागताम्, अनेक भूषण भूषिताङ्गीम् = अनेकैः विविधैः भूषणैः अलंकरणैः भूषितानि सुसज्जितानि अङ्गानि अवयवाः यस्याः साताम्, वैवाहिकमन्त्रतन्त्रनैपुण्येन = वैवाहिकमन्त्रादिचातुर्येण, अग्निम्=वह्निम्, साक्षीकृत्य = साक्षिरूपेण कृत्वा, संयोजयामास = विवाहं कारयामास इत्यर्थः, क्रियावसाने=कार्यं समाप्तौ, इन्द्रजालपुरुषाः = मायापुरुषाः, सर्वे अखिलाः, गच्छन्तु यान्तु, भवन्तः=यूयम, इति=इत्थम्, द्विजन्मना =ब्राह्मणेन, उच्चैः=तार स्वरेण, उच्यमाने=कथ्यमाने, सर्वे=निखिलाः, मायामानवाः=मायापुरुषाः, यथायथम्=यथानुसारम्, अन्तर्भावं गताः =अदृश्याः अभूवन्, पूर्वकल्पितेन = पूर्वानुसारेण गूढोपायचातुर्येण= गुप्तोपायपाटवेन, ऐन्द्रजालिकपुरुषवत् = कापटिकपुरुषवत्, कन्यान्तःपुरम् शुद्धान्तःपुरम्, विवेश = प्रविवेश, मालवेन्द्रोऽपि = मालवराजोऽपि, तदद्भुतम् = साश्चर्यम्, मन्यमानः = जानन्, वाडवाय = ब्राह्मणाय, प्रचुरतरम्=अधिकम्, धनम्=द्रव्यम्, दत्वा=समर्प्य, इदानीम्=अधुना, सा्रय = गच्छेति भावः, विसृज्य = त्यक्त्वा, स्वयम् = स्वयमेव, अन्तर्मन्दिरम् = स्वभवनम्, जगाम = अयासीत्, ततः = तदनन्तरम्, प्रियसहचरी परिवारा=प्रियसखीपरिजना, वल्लभोपेता=प्रियतम सहिता, सुन्दरम्=शोभनम्, मन्दिरम्=भवनम्, ययौ=गतवती दैवमानुषबलेन =दैवमानवशक्त्या मनोरथसाफल्यम्=अभिलाषसफलताम्, उपेतः=युतः, सरसमधुरचेष्टाभिः = सरसप्रियक्रियाभिः, शनैः-शनैः = मन्दं-मन्दं हरिण लोचनायाः = एणाक्ष्याः, लज्जाम् = ह्रियम्, अपनयन् = दूरीकुर्वन्, सुरतरागम्=सुरतानुरागम्, उपनयन्=प्रापयन्, रहः=एकान्ते, विश्रम्भम् =विश्वासम्, उपजनयन्=उत्पादयन्, संलापे=वार्तालापे, तदनुलापपीयूषपानलोलः=तस्याः अवन्तिसुन्दर्याः अनुलाप एव संलाप एव पीयूषं

अमृतं तस्य पाने श्रवणे लोलः चञ्चलः, चित्रचित्रम् = विचित्रम्, चित्ताहारिणम् = मनोहारिणम्, चतुर्दशभुवनवृत्तान्तम् = चतुर्दशलोकसमाचारम्, श्रावयामास = अश्रावयत् ।

टिप्पणी—गृध्र = गीध (मांसभक्षी एक विशेष पक्षी । "दाक्षाय्य गृध्रौ" इत्यमरः । वाडवाय = ब्राह्मण के लिए = द्विजात्यग्रजन्मभूदेव वाडवाः" इत्यमरः । प्रचुरतरम् = प्रचुर + तरप् प्रत्यय ।

॥ दशकुमारचरित पूर्वपीठिका समाप्त ॥
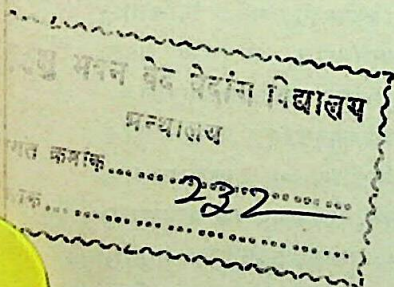
-: * :-

दशकुमारचरितपूर्वपीठिकायां किंचित् प्रश्नाः

१ अधस्तनः श्लोकः व्याख्येयः—

ब्रह्माण्डच्छत्रदण्डः शतधृतिभवनाम्भोरुहो नालदण्डः
क्षोणीनौकूपदण्डः क्षरदमरसरित्पट्टिकाकेतुदण्डः।
ज्योतिश्चक्राक्षदण्डस्त्रिभुवनविजयस्तम्भदण्डोऽङ्घ्रिदण्डः
श्रेयस्त्रैविक्रमस्ते वितरतु विबुधद्वेषिणां कालदण्डः॥

२ अधोलिखितेषु गद्यखण्डेषु प्रसङ्गनिर्देशपुरस्सरं किमपि भागद्वयमेव व्याख्यायताम्—

(क) ततः कदाचिन्नानाविधमहदायुधनैपुण्यरचितागण्यजन्यराजमौलिपालिनिहितशितसायको मगधनायको मालवेश्वरं प्रत्यग्रसङ्ग्रामघस्मरं समुत्कटमानसारं मानसारं प्रति सहेलं न्यक्कृतजलधिनिर्घोषाहङ्कारेण भेरीझङ्कारेण हठिकाकर्णनाक्रान्तभयचण्डिमानं दिग्दन्तिदन्तवलयं विघूर्णयन्निजभरनमन्मेदिनीभरेणायस्तभुजगराजमस्तकबलेन चतुरङ्गबलेन संयुतः सङ्ग्रामाभिलाषेण रोषेण महताविष्टो निर्ययौ।

(ख) वञ्चयित्वा वयस्यगणं समागतो राजवाहनस्तदवलोकनकौतूहलेन भुवं गमिष्णुः कालिन्दीदत्तं क्षुत्पिपासादिक्लेशनाशनं मणिं साहाय्यकरणसंतुष्टान्मातङ्गाल्लब्ध्वा कंचनाध्वानमनुवर्तमानं तं विसृज्य बिलपथेन तेन निर्ययौ। तत्र च मित्रगणमनवलोक्य भुवं बभ्राम। भ्रमंश्च विशालोपशल्ये कमप्याक्रीडमासाद्य तत्र विश्रममिषुरान्दोलिकारूढं रमणीसहितमाप्तजनपरिवृतमुद्याने समागतमेकं पुरुषमपश्यत्।

(ग) 'ऐन्द्रजालिकः सामगतः' इति द्वाःस्थैर्विज्ञापितेन तद्दर्शनकुतूहलाविष्टेन समुत्सुकावरोधसहितेन मालवेन्द्रेण समाहूयमानो विद्येश्वरः लिकक्षान्तरं प्रविश्य सविनयमाशिषं दत्त्वा तदनुज्ञातः परिजनताड्यमानेषु वाद्येषु नदत्सु, गायकीषु मदकलकोकिलामञ्जुलध्वनिषु समधिकरागरञ्जितसामाजिकमनोवृत्तिषु पिच्छिकाभ्रमणेषु सपरिवारं परिवृत्तां भ्रामयन्मुकुलितनयनः क्षणमतिष्ठत्। तदनु विषमं विषमुल्बणं वमन्तः फणालङ्करणा रत्नराजिनीराजितराजमन्दिराभोगा भोगिनो भयं जनयन्तो निश्चेरुः।

३ दशकुमारचरितस्य प्रधानगुणरीतिरसनायकनायिकानां नामान्युल्लेख्यानि।

४ कथाया आख्यायिकायाश्च भेदकं तत्त्वं विवेचनीयम् ।

५ अधस्तनः श्लोकः व्याख्येयः—

सुभग, कुसुमसुकुमारं जगदनवद्यं विलोक्य ते रूपम् ।
मम मानसमभिलषति त्वं चित्तं कुरु तथा मृदुलम् ॥

६ अधोलिखितेषु गद्यखण्डेषु प्रसङ्गनिर्देशपुरस्सरं किमपि भागद्वयमेव व्याख्यायताम्—

(क) जनपतिरेकस्मिन्पुण्यदिवसे तीर्थस्नानाय पक्वण-निकटमार्गेण गच्छन्नवलया कयाचिदुपलालितमनुपमशरीरं कुमारं कंचिदवलोक्य कुतूहलाऽऽकुलस्तामपृच्छत् — 'भामिनि, रुचिरमूर्तिः सराजगुणसंपूर्तिरसावर्भको भवदन्वयसंभवो न भवति । कस्य नयनानन्दनः, निमित्तेन केन भवदधीनो जातः कथ्यतां याथातथ्येन त्वया' इति ।

(ख) स वयस्यगणादपनीय रहसि पुनरेनममाषत—राजन्, अतीते निशान्ते गौरीपतिः स्वप्नसंनिहितो निद्रामुद्रितलोचनं विबोध्य प्रसन्नवदनकान्तिः प्रश्रयावनतं मामवोचत्—मातङ्ग, दण्डकारण्यान्तरालगामिन्यास्तटिन्यास्तीरभूमौ सिद्धसाध्याराध्यमानस्य स्फटिकलिङ्गस्य पश्चादद्रिपतिकन्यापदपङ्क्तिचिह्नितस्याश्मनः सविधे विधेराननमिव किमपि बिलं विद्यते ।

(ग) श्रुतरत्नावलोकनस्थानोऽहम्, 'इदं तदेव माणिक्यम्' इति निश्चित्य भूदेवदाननिमित्ताम् दुरवस्थामात्मनो जन्मनामधेये युष्मदन्वेषणपर्यटन-प्रकारं चाभाष्य समयोचितैः संलापैर्मैत्रीमकार्षम् । ततोऽर्धरात्रे तेषां मम च शृङ्खलाबन्धन निर्भिद्य तैरनुगम्यमानो निद्रितस्य द्वाःस्थगणस्याऽऽयुधजालमादाय पुररक्षान् पुरतोऽभिमुखागतान्पटुपराक्रमलीलयाऽभिद्राव्य मानपालशिविरं प्राविशम् ।

(घ) चकितबालकुरङ्गलोचनासापि कुसुमसायकसायकायमानेन कटाक्षवीक्षणेन मामसकृन्निरीक्ष्य मन्दमारुतान्दोलिता लतेवाकम्पत । मनसाभिमुखैः समाकुञ्चितै रागलज्जाऽन्तरालवर्तिभिः साङ्गवर्तिभिरीक्षणविशेषैर्निजमनोवृत्तिमकथयत् । चतुरगूढचेष्टाभिरस्या मनोऽनुरागं सम्यग्ज्ञात्वा सखसंगमोपायमचिन्तयम् । अन्यदा बन्धुपालः शकुनैर्भवद्गतिं प्रेक्षिष्यमाणः शृण्वन्नतिष्ठत् ।

परीक्षोपयोगी हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन